जून, 2024

I.S.S.N. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय
निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

संपादक-मंडल

डा. राजीव मणि,
सचिव, विधायी विभाग

श्री अश्वनी,
संयुक्त सचिव और विधायी परामर्शी,
विधायी विभाग, (विभागाध्यक्ष) वि.सा.प्र.

डा. अनुराग दीप, एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. आर्येन्दु द्विवेदी,
प्राचार्य, मां वैष्णों देवी ला कालेज
फैजाबाद रोड, चिनहट, लखनऊ, उ.प्र.

श्री कुलदीप चौहान,
चेयरमैन, एस.आर.सी. ला कालेज
129, सेक्टर-1, मंगल पाण्डेय नगर,
मेरठ, उ.प्र.

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री दयाल चन्द ग्रोवर,
सेवानिवृत्त उप-संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री अविनाश शुक्ला,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक

श्री पुंडरीक शर्मा,
संपादक

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह, जसवन्त सिंह, जाह्नवी शेखर शर्मा और अमर्त्य हेम विप्र पाण्डेय

परामर्शदाता : सर्वश्री कमला कान्त, असलम खान और अविनाश शुक्ला

ISSN 2457-0494

कीमत : **डाक-व्यय सहित**

एक प्रति : ` 195/-

वार्षिक : ` 2,100/-

© **2024 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय**

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

जून, 2024 अंक - 6

संपादक

पुंडरीक शर्मा

[2024] 2 उम. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on Website https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001. दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो न्यायाधीशों, अधिवक्ताओं, विधि छात्रों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

क्या ऐसे किसी मामले में जहां उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त को अपनी पत्नी के साथ क्रूरता करने, दहेज मृत्यु और हत्या करने के लिए अन्य अभियुक्तों के साथ दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया हो और जहां पति और पत्नी एक-साथ मकान में रहते हों और मकान के अंदर पत्नी की हत्या का अपराध किया गया हो, तो पति के लिए यह स्पष्ट करना अनिवार्य है कि जिस मकान में वे एक-साथ रह रहे थे उसमें मृतका की मृत्यु कैसे हुई ? इसी प्रश्न पर विचार करते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय ने **रविन्द्र कुमार** बनाम **राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली** [2024] 2 उम. नि. प. 165 वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि यदि अभियुक्त द्वारा अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया गया हो और अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने में असफल रहता है कि मृतका की मृत्यु से पूर्व अभियुक्त और मृतका को एक-साथ मकान में मौजूद देखा गया था, वहां सबूत का भार अभियुक्त पर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता और हत्या के अपराध के लिए मात्र संदेह के आधार पर की गई दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता किंतु दहेज मृत्यु और क्रूरता के अपराध के लिए की गई दोषसिद्धि को कायम रखना न्यायोचित होगा ।

क्या परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 और 143क के अधीन चैक के अनादरण के किसी मामले में न्यायालय की अंतरिम प्रतिकर का निदेश देने की शक्ति निदेशात्मक है या आज्ञापक ? इसी

प्रश्न पर विचार करते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय ने **राकेश रंजन श्रीवास्तव** बनाम **झारखंड राज्य और एक अन्य** [2024] 2 उम. नि. प. 184 वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि धारा 143क के अधीन शक्ति का प्रयोग अभियुक्त को दोषी अभिनिर्धारित करने से पूर्व और साक्ष्य अभिलिखित किए जाने से पूर्व आरंभिक प्रक्रम पर ही किया जा सकता है, इसलिए यदि इस धारा में प्रयुक्त शब्द (अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का आदेश दे) 'सकेगा' (मे) का निर्वचन 'देगा' (शेल) के रूप में किया जाए तो इसके गंभीर परिणाम होंगे क्योंकि धारा 138 के अधीन प्रत्येक परिवाद में अभियुक्त को चैक की रकम के बीस प्रतिशत तक अंतरिम प्रतिकर का संदाय करना होगा और ऐसा निर्वचन अनुचित तथा ऋजुता और न्याय की सुस्थिर धारणा के प्रतिकूल होगा इसलिए धारा 143क के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के गंभीर परिणामों को ध्यान में रखते हुए इस उपबंध में प्रयुक्त शब्द 'सकेगा' का अर्थ 'देगा' के रूप में नहीं लगाया जा सकता और इस उपबंध के अधीन न्यायालय को प्रदत्त शक्ति वैवेकिक और निदेशात्मक है न कि आज्ञापक ।

इस अंक में प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण (विनियमन) अधिनियम, 2005 को भी ज्ञानार्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इस संपूर्ण अंक का परिशीलन करने के पश्चात् आपकी बहुमूल्य प्रतिक्रियाएं ईप्सित हैं ।

पुंडरीक शर्मा
संपादक

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

जून, 2024

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अलाउद्दीन और अन्य **बनाम** असम राज्य और एक अन्य	296
किरपाल सिंह **बनाम** पंजाब राज्य	270
मणिकंदन **बनाम** राज्य **मार्फत** पुलिस निरीक्षक	205
रविन्द्र कुमार **बनाम** राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली	165
रविशंकर टंडन **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य	245
राकेश रंजन श्रीवास्तव **बनाम** झारखंड राज्य और एक अन्य	184
विपिन साहनी और एक अन्य **बनाम** केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो	216

संसद् के अधिनियम

प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण (विनियमन) अधिनियम, 2005 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 17

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 239, 397 और 482 [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 420 और 120ख तथा परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 131] – उन्मोचन – उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियां – अभियुक्तों-अपीलार्थियों द्वारा शैक्षणिक संस्थान स्थापित करने के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के समक्ष अनुमोदन के लिए आवेदन फाइल किया जाना – अभियुक्तों-अपीलार्थियों द्वारा आवेदन में बैंक से लिए गए ऋण और ऋण को प्रतिभूत करने के लिए भूमि को बंधक किए जाने का उल्लेख किया जाना – अनुमोदन प्रदान किया जाना – अभियुक्तों-अपीलार्थियों द्वारा उसी भूमि पर अन्य शैक्षणिक संस्थान स्थापित करने के लिए किए गए आवेदनों में बैंक के बकाया ऋण का उल्लेख न किया जाना – संस्थानों के लिए अनुमोदन प्रदान किया जाना – एआईसीटीई के पदधारियों द्वारा अभियुक्तों के प्रति असम्यक् पक्षपात दिखाकर अनुमोदन प्रदान करने के लिए सतर्कता आयुक्त को एक अनाम शिकायत प्राप्त होना – षड्यंत्र करके प्रवंचनापूर्ण साधनों द्वारा अनुमोदन प्राप्त करने के लिए केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध मामला रजिस्ट्रीकृत किया जाना – अभियुक्तों द्वारा उन्मोचन के लिए आवेदन फाइल किया जाना – आवेदन खारिज हो जाना – पुनरीक्षण में सेशन न्यायालय द्वारा मजिस्ट्रेट को मामले

पृष्ठ संख्या

की नए सिरे से सुनवाई करने के लिए मामला प्रतिप्रेषित किया जाना – मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्तों को उन्मोचित कर दिया जाना – केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा उन्मोचन के आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण फाइल करने की परिसीमा अवधि के बहुत बाद में उच्च न्यायालय के समक्ष धारा 482 के अधीन आवेदन फाइल किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा उन्मोचन आदेश को अभिखंडित किया जाना – संधार्यता – मामले के तथ्यों के आधार पर यह दर्शित होता है कि एआईसीटीई को अनुमोदन प्रदान करने के लिए भ्रमित नहीं किया गया था क्योंकि उसने कभी यह दावा नहीं किया था कि उसे कोई गलत जानकारी दी गई थी, इसलिए षड्यंत्र करने के लिए जानबूझकर जानकारी छिपाने और एआईसीटीई के साथ छल करने के अभिकथित अपराधों के लिए आवश्यक संघटकों का अभाव होने के कारण अभियुक्त उन्मोचन के लिए हकदार थे और केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा पुनरीक्षण फाइल करने के लिए परिसीमा की अवधि की बाधा से बचते हुए धारा 482 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को उच्च न्यायालय द्वारा धारा 397 के अधीन संपरिवर्तित करके अभियुक्तों के उन्मोचन के आदेश को अभिखंडित करना उचित नहीं कहा जा सकता ।

विपिन साहनी और एक अन्य बनाम **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो** 216

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 302/34 – हत्या – सामान्य आशय – अभियुक्तों

पृष्ठ संख्या

को मृतक की हत्या करने के लिए दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्टि – अपील – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा साक्षियों के साक्ष्य से यह दर्शित होता हो कि पुलिस द्वारा अभियोजन साक्षियों को न्यायालय के समक्ष उनका साक्ष्य अभिलिखित करने से एक दिन पूर्व पुलिस थाने में बुलाया गया और सिखाया गया कि न्यायालय में कैसे साक्ष्य देना है और स्वतंत्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी उपलब्ध होते हुए भी पुलिस द्वारा उन्हें विधारित किया जाना, अभियुक्तों द्वारा प्रतिरक्षा में घटनास्थल पर मौजूद न होने का अभिवाक् किया जाना और अभियोजन साक्षियों में से एक साक्षी द्वारा इस अभिवाक् को स्वीकार किया जाना, ऐसे तथ्य हैं जिनसे अभियोजन के पक्षकथन की असलियत के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न होने पर अभियुक्तों को संदेह का फायदा देते हुए उन्हें उनके विरुद्ध अभिकथित अपराधों से दोषमुक्त करना उचित होगा ।

मणिकंदन बनाम **राज्य मार्फत पुलिस निरीक्षक**

– धारा 302/34, 120ख और 201 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 27] – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – मृतक के गुम हो जाने पर पुलिस द्वारा संदेह के आधार पर अभियुक्त-अपीलार्थियों से परिप्रश्न किया जाना – पुलिस अभिरक्षा में किए गए उनके प्रकटन कथन के आधार पर एक तालाब से शव को बरामद किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – किसी मामले को साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन

पृष्ठ संख्या

लाने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा यह सिद्ध करना आवश्यक है कि पुलिस अभिरक्षा में रहते हुए अभियुक्तों द्वारा दी गई जानकारी के परिणामस्वरूप किसी तथ्य का पता चला था और उसमें से उतनी जानकारी, जितनी पता चले तथ्य से स्पष्ट रूप से संबंधित है, साक्ष्य में ग्राह्य होगी और जहां अभियोजन पक्ष यह साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा हो कि केवल पुलिस अभिरक्षा में अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा किए गए प्रकटन कथन के आधार पर मृतक के शव का पता चला था और पुलिस तथा साक्षियों को इसके बारे में पहले से कोई जानकारी नहीं थी, वहां धारा 27 को लागू नहीं किया जा सकता और अभियुक्तों को अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थितियों की श्रृंखला इतनी पूर्ण न होने पर कि अभियुक्तों की दोषिता के सिवाय कोई अन्य निष्कर्ष न निकलता हो, उन्हें संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करना उचित होगा ।

रविशंकर टंडन बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** 245

– धारा 302/149 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161, 162, 164 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 145] – हत्या – दोषसिद्धि – अभियुक्तों को अंतिम बार मृतक के साथ देखे जाने का साक्ष्य – साक्षियों के साक्ष्य में विरोधाभास – दोषसिद्धि की संधार्यता – जहां अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्य में पुलिस के समक्ष किए गए कथनों और विचारण के दौरान न्यायालय के समक्ष किए गए कथनों में तात्विक विरोधाभास और लोप पाए गए हों, साक्ष्य से दर्शित होता हो कि मृतक को अंतिम बार अभियुक्तों के साथ देखे जाने के समय उसे उसी समय के दौरान अन्य

पृष्ठ संख्या

व्यक्तियों के साथ भी देखा गया, वहां अपराध में अन्य व्यक्तियों की अंतर्ग्रस्तता की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता और अंतिम बार देखे जाने की कहानी के साथ-साथ हेतु साबित नहीं होने के कारण अभियुक्तों को दोषमुक्त करना उचित होगा और उच्च न्यायालय द्वारा केवल चार अभियुक्तों को दोषसिद्ध ठहराए जाने के कारण किसी विधिविरुद्ध जमाव का गठन न होने के आधार पर भी उन्हें धारा 149 की सहायता से दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था ।

अलाउद्दीन और अन्य बनाम **असम राज्य और एक अन्य** 296

– धारा 302 और 307 – हत्या और हत्या का प्रयत्न – हेतु – मृतक की पत्नी-इत्तिलाकर्ता द्वारा अपने साक्ष्य में घटना का यह हेतु प्रस्तुत किया जाना कि अभियुक्त के हलवाई के कारबार के मुकाबले मृतक के जोरदार रूप से चल रहे हलवाई के कारबार से ईर्ष्या रखने के कारण अभियुक्त द्वारा सह-अभियुक्त के साथ मृतक के मकान में जाकर प्रथम तल पर सो रहे मृतक को क्षतियां कारित किया जाना और फिर नीचे आकर भूतल पर परिवार के अन्य सदस्यों के साथ सो रही प्रथम इत्तिलाकर्ता (मृतक की पत्नी) को क्षतियां कारित किया जाना – क्षतियों के कारण मृतक की मृत्यु हो जाना – अभियुक्त को हत्या और हत्या के प्रयत्न के अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना और सह-अभियुक्त को दोषमुक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – जहां अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करने के उपरांत

पृष्ठ संख्या

साक्षियों का साक्ष्य पूर्णत: अविश्वसनीय पाया गया हो और उसकी संपुष्टि के लिए कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत न किया गया हो, साक्षियों के साक्ष्य में विरोधाभास पाया गया हो, घटना का हेतु भी अत्यंत कमजोर और संदेहास्पद हो, वहां अभियुक्त को संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करना उचित होगा ।

किरपाल सिंह बनाम **पंजाब राज्य** 270

– धारा 302, 304-ख, 498-क और 34 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 27 और 106] – हत्या, दहेज मृत्यु और क्रूरता – अपीलार्थी-अभियुक्त की पत्नी को मकान में मृत पाया जाना – दोषसिद्धि – पारिस्थितिक साक्ष्य – अभियुक्त द्वारा अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को अपनी पत्नी के साथ क्रूरता करने, दहेज मृत्यु और हत्या करने के लिए अन्य अभियुक्तों के साथ दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी-पति की धारा 304-ख के अधीन दोषसिद्धि को अपास्त किया जाना किंतु धारा 302 और 498क/34 के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखा जाना – अपील – जहां पति और पत्नी एक-साथ मकान मे रहते हों और मकान के अंदर पत्नी की हत्या का अपराध किया गया हो, तो पति को यह स्पष्ट करना चाहिए कि जिस मकान में वे एक-साथ रह रहे थे उसमें कैसे मृतका की मृत्यु हुई किंतु यदि अभियुक्त द्वारा अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया गया हो और अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने में

पृष्ठ संख्या

असफल रहता है कि मृतका की मृत्यु से पूर्व अभियुक्त और मृतका को एक-साथ मकान में मौजूद देखा गया था, वहां सबूत का भार अभियुक्त पर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता और अभियुक्त के बताने पर की गई रक्तरंजित वस्त्रों की बरामदगी भी सभी की पहुंच वाले स्थान से होने के कारण साक्ष्य में ग्राह्य नहीं होने तथा अभियुक्त के विरुद्ध हत्या के अपराध में आलिप्त करने वाली किसी अन्य परिस्थिति को भी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया नहीं पाया गया है, वहां हत्या के अपराध के लिए मात्र संदेह के आधार पर की गई दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता किंतु दहेज मृत्यु और क्रूरता के अपराध के लिए की गई दोषसिद्धि को कायम रखना न्यायोचित होगा ।

रविन्द्र कुमार बनाम **राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली** 165

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (1881 का 26)

– धारा 138 और 143क – चैक का अनादरण – अंतरिम प्रतिकर का निदेश देने की शक्ति – निदेशात्मक है या आज्ञापक – चूंकि धारा 143क के अधीन शक्ति का प्रयोग अभियुक्त को दोषी अभिनिर्धारित करने से पूर्व और साक्ष्य अभिलिखित किए जाने से पूर्व आरंभिक प्रक्रम पर ही किया जा सकता है, इसलिए यदि इस धारा में प्रयुक्त शब्द (अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का आदेश दे) 'सकेगा' (मे) का निर्वचन 'देगा' (शेल) के रूप में किया जाए तो इसके गंभीर परिणाम होंगे क्योंकि धारा 138 के अधीन प्रत्येक परिवाद में अभियुक्त को चैक की रकम के बीस प्रतिशत तक अंतरिम प्रतिकर का

पृष्ठ संख्या

संदाय करना होगा और ऐसा निर्वचन अनुचित तथा ऋजुता और न्याय की सुस्थिर धारणा के प्रतिकूल होगा इसलिए धारा 143क के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के गंभीर परिणामों को ध्यान में रखते हुए इस उपबंध में प्रयुक्त शब्द 'सकेगा' का अर्थ 'देगा' के रूप में नहीं लगाया जा सकता और इस उपबंध के अधीन न्यायालय को प्रदत्त शक्ति वैवेकिक और निदेशात्मक है न कि आज्ञापक ।

राकेश रंजन श्रीवास्तव बनाम **झारखंड राज्य और एक अन्य** 184

– धारा 138 और 143क – चैक का अनादरण – अंतरिम प्रतिकर का निदेश देने की शक्ति – ध्यान में रखी जाने वाली बातें – परिवादी द्वारा धारा 143क के अधीन अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का अभियुक्त को निदेश देने के लिए किए गए आवेदन पर न्यायालय को प्रथमदृष्ट्या परिवादी द्वारा बनाए गए मामले के गुणागुण पर और आवेदन के उत्तर में अभियुक्त द्वारा अभिवाक् की गई प्रतिरक्षा का मूल्यांकन करना होगा और अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का निदेश केवल तभी दिया जा सकता है जब परिवादी द्वारा प्रथम-दृष्ट्या मामला बनाया गया हो और यदि अभियुक्त की प्रतिरक्षा को प्रथमदृष्ट्या विश्वसनीय पाया जाए, तो न्यायालय अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने से इनकार करने के लिए विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकता है और यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला बनता

पृष्ठ संख्या

है, तो प्रदान किए जाने वाले अंतरिम प्रतिकर की मात्रा पर न्यायालय को अपने मस्तिष्क का प्रयोग करना होगा और संव्यवहार की प्रकृति, पक्षकारों के बीच संबंध आदि विभिन्न पहलुओं पर विचार करना होगा ।

राकेश रंजन श्रीवास्तव बनाम **झारखंड राज्य और एक अन्य** 184

तुलनात्मक सारणी

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

[2024] 2 उम. नि. प.

अप्रैल-जून, 2024

क्र. सं.	निर्णय का नाम व तारीख	उम. नि. प.	ए. आई. आर. (एस. सी.)	एस. सी. सी.
1	2	3	4	5
1.	दर्शन सिंह **बनाम** पंजाब राज्य (4 जनवरी, 2024)	[2024] 2 1	2024 627	(2024) 3 164
2.	प्रदीप कुमार **बनाम** हरियाणा राज्य (5 जनवरी, 2024)	30	518	19 221
3.	मो. सिद्दीक (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि **बनाम** महंत सुरेश दास और अन्य (9 नवंबर, 2019)	1039	–	(2019) 7 633
4.	नीरज शर्मा **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य (3 जनवरी, 2024)	51	271	(2024) 3 125

1	2	3		4		5	
5.	केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो **बनाम** कपिल वधावन और एक अन्य (24 जनवरी, 2024)	[2024] 2	82	2024	905	(2024) 3	734
6.	एम. विजयकुमार **बनाम** तमिलनाडु राज्य (21 फरवरी, 2024)		110		–	4	633
7.	ठाकुर उमेदसिंह नथूसिंह **बनाम** गुजरात राज्य (22 फरवरी, 2024)		127		–	–	–
8.	शाहिद अली **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (11 मार्च, 2024)		153		1319	–	–
9.	रविन्द्र कुमार **बनाम** राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली (6 मार्च, 2024)		165		–	–	–

1	2	3		4		5	
10.	राकेश रंजन श्रीवास्तव **बनाम** झारखंड राज्य और एक अन्य (15 मार्च, 2024)	[2024] 2	184	2024	–	(2024) 4	419
11.	मणिकंदन **बनाम** राज्य मार्फत पुलिस निरीक्षक (5 अप्रैल, 2024)		205		1801	–	–
12.	विपिन साहनी और एक अन्य **बनाम** केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (8 अप्रैल, 2024)		216		2237	–	–
13.	रविशंकर टंडन **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य (10 अप्रैल, 2024)		245		2087	–	–
14.	किरपाल सिंह **बनाम** पंजाब राज्य (18 अप्रैल, 2024)		270		–	–	–
15.	अलाउद्दीन और एक अन्य **बनाम** असम राज्य और एक अन्य (3 मई, 2024)		296		–	–	–

[2024] 2 उम. नि. प. 165

रविन्द्र कुमार

बनाम

राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली

[2024 की दांडिक अपील सं. 918]

6 मार्च, 2024

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति संदीप मेहता

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302, 304-ख, 498-क और 34 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 27 और 106] – हत्या, दहेज मृत्यु और क्रूरता – अपीलार्थी-अभियुक्त की पत्नी को मकान में मृत पाया जाना – दोषसिद्धि – पारिस्थितिक साक्ष्य – अभियुक्त द्वारा अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को अपनी पत्नी के साथ क्रूरता करने, दहेज मृत्यु और हत्या करने के लिए अन्य अभियुक्तों के साथ दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी-पति की धारा 304-ख के अधीन दोषसिद्धि को अपास्त किया जाना किंतु धारा 302 और 498क/34 के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखा जाना – अपील – जहां पति और पत्नी एक-साथ मकान में रहते हों और मकान के अंदर पत्नी की हत्या का अपराध किया गया हो, तो पति को यह स्पष्ट करना चाहिए कि जिस मकान में वे एक-साथ रह रहे थे उसमें कैसे मृतका की मृत्यु हुई, किंतु यदि अभियुक्त द्वारा अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया गया हो और अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने में असफल रहता है कि मृतका की मृत्यु से पूर्व अभियुक्त और मृतका को एक-साथ मकान में मौजूद देखा गया था, वहां सबूत का भार अभियुक्त पर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता और अभियुक्त के

बताने पर की गई रक्तरंजित वस्त्रों की बरामदगी भी सभी की पहुंच वाले स्थान से होने के कारण साक्ष्य में ग्राह्य नहीं होने तथा अभियुक्त के विरूद्ध हत्या के अपराध में आलिप्त करने वाली किसी अन्य परिस्थिति को भी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया नहीं पाया गया है, वहां हत्या के अपराध के लिए मात्र संदेह के आधार पर की गई दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता किंतु दहेज मृत्यु और क्रूरता के अपराध के लिए की गई दोषसिद्धि को कायम रखना न्यायोचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि मृतका का विवाह तारीख 20 जून, 1999 को अपीलार्थी-रविन्द्र कुमार (अभियुक्त सं. 1) के साथ हुआ था । तारीख 27 अप्रैल, 2001 को मृतका-मीना की प्रेरणा पर पुलिस थाना सिविल लाइन्स, दिल्ली में भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क के अधीन अपराध के लिए एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में मृतका-मीना ने अपने पति (अभियुक्त सं. 1) और उसके दो भाइयों (अभियुक्त सं. 2 और अभियुक्त सं. 4) द्वारा दांपत्य निवास में उसके रहने के दौरान की गई क्रूरता की बाबत अभिकथन किए गए थे । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् एक रिपोर्ट प्रस्तुत की गई । तथापि, पक्षकारों के बीच एक समझौता हो गया था और उसने महानगर मजिस्ट्रेट (महिला न्यायालय), दिल्ली के समक्ष कथन किया कि वह मामले में आगे अग्रसर होना नहीं चाहती है और उसके द्वारा अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं है और उसके द्वारा शिकायत कुंठा और गुस्से में की गई थी । उसने यह भी कथन किया कि वह अपने पति और बालक के साथ पृथक् रूप से प्रसन्नतापूर्वक रह रही है इसलिए दांडिक कार्यवाहियों को समाप्त कर दिया गया और अभियुक्तों को उन्मोचित कर दिया गया । तारीख 29 मई, 2004 को प्रात: मीना का शव कमरे के फर्श पर रक्त से लथपथ पड़ा हुआ पाया गया और एक धारदार आयुध से उसका गला काटा हुआ था । भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । बाद में, मीना के पिता, भाई और माता द्वारा

किए गए कथनों के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को भारतीय दंड संहिता की धारा 304-ख/498-क/34 के अधीन दंडनीय अपराध अंतर्वलित होने के मामले में संपरिवर्तित किया गया । विचारण न्यायालय द्वारा मृतका के पति (इस अपील में अपीलार्थी) को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और उसे जुर्माने सहित आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । सभी अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 304-ख/34 और धारा 498-क/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए भी दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । इससे व्यथित होकर दोषसिद्ध व्यक्तियों द्वारा दो दांडिक अपीलें फाइल की गईं । मृतका के पिता द्वारा भी भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अभियुक्त सं. 2 से 5 की दोषमुक्ति से व्यथित होकर एक स्वतंत्र अपील अपील फाइल की गई । अपीलों की एक-साथ सुनवाई की गई । उच्च न्यायालय ने इस अपील में अपीलार्थी और अभियुक्त सं. 2 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया । इस अपील में अपीलार्थी और अभियुक्त सं. 2 की भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304-ख के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त कर दिया गया जबकि विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दिए गए दंडादेश को कायम रखा गया । उच्च न्यायालय ने अभियुक्त सं. 2 को भी भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए जुर्माने सहित आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । अभियुक्त सं. 3, अभियुक्त सं. 4 और अभियुक्त सं. 5 की भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304-ख के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि और सभी अभियुक्तों की भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 498-क के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि और उनके विरुद्ध अधिनिर्णीत दंडादेशों को कायम रखा गया । अभियुक्त सं. 4, जो मृतका का ससुर है, ने इस न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील फाइल की थी । चूंकि अभियुक्त सं. 3, जो मृतका की सास है, की

अपील के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी इसलिए उसके विरुद्ध अपील का उपशमन हो गया । उक्त अपील में, जहां तक अभियुक्त सं. 4 का संबंध है, यद्यपि इस न्यायालय ने विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा पारित की गई दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने के लिए कोई आधार नहीं पाया, फिर भी न्यायालय ने अभियुक्त सं. 4 द्वारा पहले ही भुगत ली गई अवधि तक दंडादेश को कम कर दिया गया । अभियुक्त सं. 2 ने दांडिक अपील फाइल की थी । इस न्यायालय ने अपील को भागत: मंजूर किया और अभियुक्त सं. 2 के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त कर दिया, तथापि, न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304-ख और धारा 498-क के अधीन अपराधों के संबंध में दोषसिद्धि और दंडादेश को प्रत्यावर्तित कर दिया । जहां तक अभियुक्त सं. 5 का संबंध है, उसने दांडिक अपील फाइल की थी । उसकी अपील को भी उसके द्वारा पहले ही भुगत ली गई अवधि तक दंडादेश को कम करके भागत: मंजूर किया गया । पूर्वोक्त अपीलों का विनिश्चय किए जाने के पश्चात्, इस अपील में अपीलार्थी द्वारा अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील को भागत: मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – निस्संदेह, अभियोजन का पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । अभियोजन पक्ष के लिए यह आवश्यक है कि जिन परिस्थितियों से दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है वे पूरी तरह सिद्ध की जानी चाहिएं । यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि इससे पूर्व कि न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जा सके, अभियुक्त 'अवश्य दोषी होना चाहिए' न कि मात्र 'दोषी हो सकता है' । 'साबित किया जा सकता है' और 'अवश्य साबित करना होगा या किया जाना चाहिए' के बीच न केवल एक व्याकरणिक अंतर है अपितु विधिक अंतर भी है । इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता के संगत होने चाहिएं अर्थात् वे इसके सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं । परिस्थितियां ऐसी होनी चाहिएं कि साबित की जाने वाली कल्पना के सिवाय प्रत्येक संभावित उप

कल्पना अपवर्जित हो जाए । साक्ष्य की श्रृंखला अवश्य इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई युक्तियुक्त आधार शेष न रहे और अवश्य यह दर्शित होना चाहिए कि सभी मानवीय अधिसंभाव्यताओं में वह कार्य अवश्य अभियुक्त द्वारा किया गया होगा । यह स्थिर विधि है कि संदेह चाहे कितना भी मजबूत हो, युक्तियुक्त संदेह के परे सबूत का स्थान नहीं ले सकता । किसी अभियुक्त को संदेह के आधार पर दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता, भले ही संदेह कितना मजबूत क्यों न हो । अभियुक्त के तब तक निर्दोष होने की उपधारणा की जाती है जब तक युक्तियुक्त संदेह के परे दोषी साबित नहीं किया जाता है । इस न्यायालय ने वर्तमान मामले की परीक्षा की है । वर्तमान मामले में, विचारण न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन मूलभूत रूप से दोषसिद्धि और उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि की अभिपुष्टि अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को सारहीन पाते हुए की है । विधि की यह स्थिर प्रतिपादना है कि अभियुक्त पर साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अधीन भार को स्थानांतरित करने से पूर्व अभियोजन पक्ष को अपने पक्षकथन को साबित करना होगा । वर्तमान मामले में, घटना तारीख 28/29 मई, 2004 की मध्यवर्ती रात्रि में घटी थी । अभियोजन पक्ष के लिए यह आवश्यक था कि वह यह सिद्ध करने के लिए कुछ साक्ष्य प्रस्तुत करे कि तारीख 28/29 मई, 2004 की रात्रि में मृतका और अभियुक्त मकान में एक-साथ थे । यह बात प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा किए गए अन्यत्र उपस्थित होने के विनिर्दिष्ट अभिवाक् को ध्यान में रखते हुए और अधिक आवश्यक हो जाती है । अभियोजन पक्ष ने सरोज, पुष्पेन्द्र (अभियुक्त सं. 2) और रविन्द्र कुमार (अभियुक्त सं. 1) के मोबाइल फोन के संबंध में सीडीआर का अवलंब लिया है । तथापि, दोनों न्यायालयों ने उक्त साक्ष्य को अग्राह्य पाया था क्योंकि इसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 65क के निबंधनों के अनुसार साबित नहीं किया गया था । अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब ली गई परिस्थिति अपीलार्थी द्वारा अपराध कारित करने के समय पर अभिकथित रूप से प्रयोग किए गए रक्तरंजित वस्त्रों का उसके चंद्रावल स्थित पैतृक गृह से डबल बैड के नीचे से किए गए अभिग्रहण के संबंध में है । इस

न्यायालय का निष्कर्ष है कि उक्त बरामदगी का अवलंब नहीं लिया जा सकता था और इसके एक से अधिक कारण हैं । साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन किए गए कथन के आधार पर किसी बरामदगी को ग्राह्य होने के लिए वह बरामदगी ऐसे स्थान से होनी चाहिए जो अनन्य रूप से उस कथन को करने वाले के ज्ञान में हो । निर्विवाद रूप से, बरामदगी सभी की पहुंच वाले स्थान से की गई है और बरामदगी पंचनामा में ऐसी बरामदगी की तारीख का भी उल्लेख नहीं किया गया है । इसके अतिरिक्त, उक्त वस्तुओं को जमा करने और उन्हें रासायनिक परीक्षण के लिए न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेजने के संबंध में मालखाना रजिस्टर में कोई प्रविष्टि नहीं है । अत: इस न्यायालय का निष्कर्ष है कि यह नहीं कहा जा सकता कि उक्त परिस्थितियों को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया है । इसके अतिरिक्त, अभियोजन पक्ष किसी अन्य परिस्थिति को भी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने की स्थिति में नहीं रहा है । विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने जोरदार रूप से इस परिस्थिति का अवलंब लिया है कि कमरे में एक अंग्रेजी कलैंडर (प्रदर्श पीएक्स) लटका हुआ पाया गया था । यह अभिनिर्धारित किया गया कि अपीलार्थी ने उस मकान की दीवार पर कलैंडर (प्रदर्श पीएक्स) को टांगा हुआ था, जहां वह रह रहा था और कलैंडर (प्रदर्श पीएक्स) पर मकान में प्रवेश करने वाले हर व्यक्ति की दृष्टि पड़ती थी । यह अभिनिर्धारित किया गया कि ऐसा जानबूझकर और उद्देश्यपूर्वक किया गया था । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि चंद्रावल स्थित मकान को "माई होम (मेरा मकान)" का नाम दिया गया था और जहां अन्य फोन चालू हालत में था वह उसके "इन-लाज" (ससुराल वालों) का था । इस निष्कर्ष के साथ-साथ इस निष्कर्ष के लिए भी कि मकान में अपीलार्थी ने एक बखेड़ा खड़ा किया था जिससे इसे एक लूट की तरह दिखाया जा सके । यह अभिनिर्धारित किया गया कि वह अपीलार्थी ही था जो अपनी पत्नी की हत्या कारित करने का दोषी था । इस न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि उच्च न्यायालय "अपराध कारित किया जा सकता है" या "अपराध कारित किया गया होगा" के बीच अंतर करने में असफल रहा है । जैसा कि इस न्यायालय द्वारा

अभिनिर्धारित किया गया है, संदेह चाहे कितना भी मजबूत हो, युक्तियुक्त संदेह के परे सबूत का स्थान नहीं ले सकता । अत: इस न्यायालय का निष्कर्ष है कि अभियोजन पक्ष अपराध में आलिप्त करने वाली किसी परिस्थिति को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा है और किसी भी स्थिति में घटनाओं की ऐसी अटूट श्रृंखला को सिद्ध करने में असफल रहा है जिससे अभियुक्त की दोषिता की बजाय कोई अन्य निष्कर्ष न निकलता हो । (पैरा 8, 9, 10, 11, 13, 14, 17 और 18)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2006]	(2006) 10 एस. सी. सी. 681 = 2006 आईएनएससी 691 : **त्रिमुख मरोति किरकन** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	11
[1985]	[1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116 : **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ।	8, 17

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2024 की दांडिक अपील सं. 918.

2015 की दांडिक अपील सं. 287 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली द्वारा तारीख 12 अक्तूबर, 2015 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सुश्री नेहा कपूर, सर्वश्री कौशल मेहता, पुलकित श्रीवास्तव और अंकित भुटानी

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री राजन कुमार चौरसिया, मुकेश कुमार मरोड़िया, नचिकेता जोशी, पी. वी. योगेश्वर, उदय खन्ना, विष्णु शंकर जैन और सचिन शर्मा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बी. आर. गवई ने दिया ।

न्या. गवई – यह अपील 2015 की दांडिक अपील सं. 287 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली की खंड न्यायपीठ द्वारा इस अपील

में अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील को खारिज करते हुए तारीख 12 अक्तूबर, 2015 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध उद्भूत हुई है ।

2. इस अपील को फाइल करने के लिए तथ्य संक्षेप में निम्नलिखित हैं :–

2.1 मनी राम (अभि. सा. 3) और ज्ञानवती (अभि. सा. 6) की पुत्री मृतका-मीना का विवाह तारीख 20 जून, 1999 को अपीलार्थी-रविन्द्र कुमार (अभियुक्त सं. 1) के साथ हुआ था । उक्त विवाह बंधन से तारीख 26 अगस्त, 2000 को एक लड़के का जन्म हुआ जिसका नाम हैरी था । तारीख 27 अप्रैल, 2001 को 12.55 बजे अपराह्न में मृतका-मीना की प्रेरणा पर पुलिस थाना सिविल लाइन्स, दिल्ली में भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में "भारतीय दंड संहिता") की धारा 498-क के अधीन अपराध अन्वेषण करने के लिए 2001 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 129 (प्रदर्श पीडब्ल्यू-9/ए) रजिस्ट्रीकृत की गई । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में मृतका-मीना ने अपने पति रविन्द्र कुमार (अभियुक्त सं. 1) और उसके दो भाइयों अर्थात् पुष्पेन्द्र सिंह (अभियुक्त सं. 2) और आर. हरशिन्द्र (अभियुक्त सं. 4) द्वारा दांपत्य निवास मकान सं. 252, ओल्ड चंद्रावल, सिविल लाइन्स, दिल्ली में उसके रहने के दौरान की गई क्रूरता की बाबत अभिकथन किए । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में "दंड प्रक्रिया संहिता") की धारा 173 के अधीन एक रिपोर्ट प्रस्तुत की गई । तथापि, यह प्रतीत होता है कि पक्षकारों के बीच एक समझौता हो गया था और उसने महानगर मजिस्ट्रेट (महिला न्यायालय), दिल्ली के समक्ष एक कथन किया कि वह मामले में आगे अग्रसर होना नहीं चाहती है । उसने यह भी कथन किया कि उसे अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं है और उसके द्वारा शिकायत कुंठा और गुस्से में की गई थी । उसने यह भी कथन किया कि वह अपने पति और बालक के साथ पृथक् रूप से प्रसन्नतापूर्वक रह रही है इसलिए दांडिक कार्यवाहियों को समाप्त कर दिया गया और तारीख 21 अक्तूबर, 2003 के निर्णय द्वारा अभियुक्तों को उन्मोचित कर दिया गया । तारीख 29 मई, 2004 को

प्रात: लगभग 8.20 बजे मीना का शव भूतल पर के कमरे के फर्श पर रक्त से लथपथ पड़ा हुआ पाया, एक धारदार आयुध से उसका गला काटा हुआ था और उसका लगभग साढ़े तीन वर्षीय पुत्र हैरी को उसके निकट बैठा हुआ पाया गया था ।

2.3 उप निरीक्षक राम चंद्र (अभि. सा. 15) द्वारा भेजे गए रुक्का (प्रदर्श पीडब्ल्यू-15/बी) के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 2004 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 211 (प्रदर्श पीडब्ल्यू-1/ए) रजिस्ट्रीकृत की गई । बाद में, मनी राम (अभि. सा. 3), शिव कुमार (अभि. सा. 4) और ज्ञानवती (अभि. सा. 6) क्रमश: मीना के पिता, भाई और माता द्वारा किए गए कथनों के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को भारतीय दंड संहिता की धारा 304-ख/498-क/34 के अधीन दंडनीय अपराध अंतर्वलित होने के मामले में संपरिवर्तित किया गया ।

2.4 अन्वेषण समाप्त होने पर रविन्द्र कुमार (अभियुक्त सं. 1), मृतका का पति, बाबू लाल (अभियुक्त सं. 4), जो मृतका का ससुर है, फूलवती (अभियुक्त सं. 3), जो मृतका की सास है और पुष्पेन्द्र (अभियुक्त सं. 2) और आर. हरशिन्द्र (अभियुक्त सं. 5), जो मृतका के देवर हैं, के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए । विचारण की समाप्ति पर अपर सेशन न्यायाधीश-02, उत्तरी जिला, रोहिणी न्यायालय, दिल्ली (जिसे इसमें इसके पश्चात् "विचारण न्यायालय" कहा गया है) ने तारीख 25 नवंबर, 2014/8 जनवरी, 2015 के निर्णय और आदेश द्वारा इस अपील में अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और उसे 25,000/- रुपए के जुर्माने सहित आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । सभी अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 304-ख/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 20,000/- रुपए के जुर्माने सहित दस वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए प्रत्येक को 25,000/- रुपए के जुर्माने सहित तीन वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया और यह

भी निदेश दिया कि जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने की दशा में वे क्रमश: छह माह और तीन माह के लिए कठोर कारावास भुगतेंगे ।

2.5 इससे व्यथित होकर दोषसिद्ध व्यक्तियों द्वारा दो दांडिक अपीलें फाइल की गईं । मृतका के पिता मनी राम (अभि. सा. 3) ने भी भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अभियुक्त सं. 2 से 5 की दोषमुक्ति से व्यथित होकर एक स्वतंत्र अपील 2015 की दांडिक अपील सं. 569 फाइल की । अपीलों की एक-साथ सुनवाई की गई । उच्च न्यायालय ने तारीख 12 अक्तूबर, 2015 के आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा इस अपील में अपीलार्थी और पुष्पेन्द्र (अभियुक्त सं. 2) को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया । इस अपील में अपीलार्थी और पुष्पेन्द्र की भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304-ख के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त कर दिया गया जबकि विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दिए गए दंडादेश को कायम रखा गया । उच्च न्यायालय ने पुष्पेन्द्र (अभियुक्त सं. 2) को भी भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 25,000/- रुपए के जुर्माने सहित आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने की दशा में उसे तीन माह का कठोर कारावास भुगतने का निदेश दिया गया । फूलवती (अभियुक्त सं. 3), बाबू लाल (अभियुक्त सं. 4) और आर. हरशिन्द्र (अभियुक्त सं. 5) की भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304-ख के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि और सभी अभियुक्तों की भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 498-क के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि और उनके विरुद्ध अधिनिर्णीत दंडादेशों को कायम रखा गया ।

2.6 बाबू लाल (अभियुक्त सं. 4), जो मृतका का ससुर है, ने इस न्यायालय के समक्ष 2017 की दांडिक अपील सं. 2025 फाइल की थी । चूंकि फूलवती (अभियुक्त सं. 3), जो मृतका की सास है, की अपील के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी इसलिए उसके विरुद्ध अपील का

उपशमन हो गया । उक्त अपील में, जहां तक बाबू लाल (अभियुक्त सं. 4) का संबंध है, यद्यपि इस न्यायालय ने विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा पारित की गई दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने के लिए कोई आधार नहीं पाया, फिर भी न्यायालय ने अभियुक्त सं. 4 बाबू लाल द्वारा पहले ही भुगत ली गई अवधि तक दंडादेश को कम कर दिया गया ।

2.7 पुष्पेन्द्र (अभियुक्त सं. 2) ने 2016 की दांडिक अपील सं. 938-939 फाइल की थी । इस न्यायालय ने तारीख 15 फरवरी, 2022 के आदेश द्वारा अपीलों को भागत: मंजूर किया और पुष्पेन्द्र (अभियुक्त सं. 2) के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त कर दिया, तथापि, न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304-ख और धारा 498-क के अधीन अपराधों के संबंध में दोषसिद्धि और दंडादेश को प्रत्यावर्तित कर दिया ।

2.8 जहां तक आर. हरशिन्द्र (अभियुक्त सं. 5) का संबंध है, उसने 2022 की दांडिक अपील सं. 244 फाइल की थी । उसकी अपील को भी तारीख 15 फरवरी, 2022 के आदेश द्वारा उसके द्वारा पहले ही भुगत ली गई अवधि तक दंडादेश को कम करके भागत: मंजूर किया गया था ।

2.9 पूर्वोक्त अपीलों का विनिश्चय किए जाने के पश्चात्, इस अपील में अपीलार्थी ने अक्तूबर, 2023 में वर्तमान अपील फाइल की । इस मामले में तारीख 13 फरवरी, 2024 को इजाजत दी गई ।

3. हमने अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल सुश्री नेहा कपूर और प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री रंजन कुमार चौरसिया को सुना ।

4. सुश्री कपूर ने दलील दी कि दोषसिद्धि पारिस्थिति साक्ष्य पर आधारित है । उसने यह भी दलील दी कि अपीलार्थी के विरुद्ध अपराध में आलिप्त करने वाली किसी परिस्थिति को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं किया गया है । उसने दलील दी कि जहां तक रक्तरंजित वस्त्रों की बरामदगी का संबंध है, ये उस स्थान पर पाए गए थे जो

सबकी पहुंच में था और उसने यह भी दलील दी कि बरामदगी पंचनामा में बरामदगी की तारीख का भी उल्लेख नहीं है । इसलिए उसने यह दलील दी कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि कतई मान्य नहीं है ।

5. सुश्री कपूर ने आगे दलील दी कि यहां तक कि धारा 304-ख और धारा 498-क के अधीन दोषसिद्धि भी मान्य नहीं होगी । उसने दलील दी कि मृतका और अभियुक्तों के बीच मामले में समझौता हो गया था । यह दलील दी कि उपरोक्त पहलू को ध्यान में रखते हुए क्रूरता से संबंधित दावे को केवल तारीख 21 अक्तूबर, 2023 और 29 मई, 2004 के बीच की अवधि के लिए अर्थात् पूर्ववर्ती कार्यवाहियों में विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा उन्मोचित किए जाने की तारीख से उस तारीख तक जिस तारीख को मीना मृत पाई गई थी, निर्बंधित करते हुए संशोधित आरोप तारीख 14 मार्च, 2007 को विरचित किया गया था । सुश्री कपूर ने यह भी दलील दी कि इस अवधि के दौरान इस अपील में अपीलार्थी के विरुद्ध ऐसा कोई अभिकथन नहीं किया गया है जिससे भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ख के उपबंध लागू होते हों । यह दलील दी कि अभियोजन पक्ष दोषिता को साबित करने में असफल रहा है । भारतीय दंड संहिता की धारा 304-ख के अधीन दोषसिद्धि भी मान्य नहीं होगी ।

6. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री रंजन कुमार चौरसिया ने दलील दी कि दोनों न्यायालयों ने साक्ष्य का सही मूल्यांकन करने के उपरांत समवर्ती रूप से इस अपील में अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी पाया था । अत: यह दलील दी गई कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अभिलिखित दोषसिद्धि में कोई हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है । यह दलील दी गई कि जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क और 304-ख के अधीन दोषसिद्धि का संबंध है, इसकी तीन सह-अभियुक्त व्यक्तियों के मामले में अभिपुष्टि की गई है इसलिए उक्त निष्कर्ष में अंतिमता प्राप्त कर ली है ।

7. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों की सहायता से हमने साक्ष्य की संवीक्षा की ।

8. निस्संदेह, अभियोजन का पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि से संबंधित विधि को **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय में भली-भांति स्पष्ट किया गया है, जिसमें इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था :–

> "152. उच्च न्यायालय द्वारा अवलंब लिए गए मामलों पर चर्चा करने से पूर्व हम एकमात्र पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित किसी दांडिक मामले की प्रकृति, स्वरूप और अपेक्षित आवश्यक सबूत पर कुछेक विनिश्चयों को उद्धृत करना चाहेंगे । इस न्यायालय का सबसे मौलिक और मूलभूत विनिश्चय हनुमंत **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य, ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 343 = [1952] एस. सी. आर. 1091 = 1953 क्रि. ला. जर्नल 129 वाला मामला है । इस न्यायालय द्वारा आज तक अनेक विनिश्चयों में इस मामले का बराबर अनुसरण और उपयोग किया गया है । उदाहरण के लिए, तुफेल (**उर्फ**) सिम्मी **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य [(1969) 3 एस. सी. सी. 198 = 1970 एस. सी. सी. (क्रि.) 55] और रामगोपाल **बनाम** महाराष्ट्र राज्य [(1972) 4 एस. सी. सी. 625 = ए. आई. आर. 1972 एस. सी. 656 वाले मामले] । हनुमंत वाले मामले [ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 343 = 1952 एस. सी. आर. 1091 = 1953 क्रि. एल. जे. 129] में न्यायमूर्ति महाजन ने जो कुछ अधिकथित किया है, उसे उद्धृत करना उपयोगी होगा –
>
> > 'यह ध्यान रखना होगा कि जिन मामलों में साक्ष्य पारिस्थितिक साक्ष्य होता है, उनमें वे परिस्थितियां जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, पहली बार में पूरी तरह से सिद्ध की जानी चाहिएं और इस प्रकार सिद्ध सभी तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता की कल्पना के अनुरूप होने

[1] [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

चाहिए । साथ ही वे परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं तथा वे ऐसी होनी चाहिएं कि प्रत्येक कल्पना अपवर्जित हो जाए और वही शेष रहे जो साबित की जानी है । दूसरे शब्दों में, साक्ष्य की श्रृंखला अवश्य इतनी पूर्ण होनी चाहिए जिससे अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप किसी निष्कर्ष के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार शेष न बचे और वह ऐसी होनी चाहिएं जिससे यह दर्शित होता हो कि समस्त मानवीय अधिसंभाव्यताओं में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा ।'

153. इस विनिश्चय के सूक्ष्म-विश्लेषण से यह दर्शित होता है कि अभियुक्त के प्रतिकूल मामले को पूरी तरह सिद्ध मानने से पहले निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिएं –

(1) वे परिस्थितियां, जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, पूरी तरह सिद्ध की जानी चाहिएं ।

यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि इस न्यायालय ने यह इंगित किया था कि संबंधित परिस्थितियां 'सिद्ध करनी होंगी' या 'की जानी चाहिएं न कि की जा सकती हैं' । 'साबित की जा सकती हैं' और 'साबित करनी होंगी या की जानी चाहिएं' में केवल व्याकरणिक अंतर ही नहीं है, बल्कि विधिक अंतर है, जैसा कि इस न्यायालय ने शिवाजी साहबराव बोबडे और एक अन्य **बनाम** महाराष्ट्र राज्य {[1973] 3 उम. नि. प. 1011 = (1973) 2 एस. सी. सी. 793} वाले मामले में अभिनिर्धारित किया था । उसमें न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था –

'निश्चय ही यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि इससे पहले कि न्यायालय अभियुक्त को दोषसिद्ध कर सके, अभियुक्त दोषी 'होना चाहिए' न कि केवल 'दोषी हो सकता है' तथा 'हो सकता है' और 'होना चाहिए' के बीच मानसिक अंतर बहुत लंबा है, अस्पष्ट अटकलों को निश्चित निष्कर्षों से अलग करता है ।'

(2) इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता के कल्पना के अनुरूप होने चाहिएं अर्थात् इस बात के सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं,

(3) परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं,

(4) उन्हें साबित की जाने वाली हर उप-कल्पना के सिवाय हर संभावित उप-कल्पना अपवर्जित करनी चाहिए, और

(5) साक्ष्य की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार न बचे और उससे यह दर्शित हो कि संपूर्ण मानवीय अधिसंभावना में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा ।

154. ये पांच स्वर्णिम सिद्धांत हैं, यदि हम ऐसा कह सकते हैं । ये पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित किसी पक्षकथन के सबूत के पंचशील सिद्धांत हैं ।"

9. इस प्रकार, स्पष्ट रूप से यह देखा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष के लिए यह आवश्यक है कि जिन परिस्थितियों से दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है वे पूरी तरह सिद्ध की जानी चाहिएं । न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि इससे पूर्व कि न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जा सके, अभियुक्त 'अवश्य दोषी होना चाहिए' न कि मात्र 'दोषी हो सकता है' । यह अभिनिर्धारित किया गया कि 'साबित किया जा सकता है' और 'अवश्य साबित करना होगा या किया जाना चाहिए' के बीच न केवल एक व्याकरणिक अंतर है अपितु विधिक अंतर भी है । यह अभिनिर्धारित किया गया कि इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता के संगत होने चाहिएं अर्थात् वे इसके सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि परिस्थितियां ऐसी होनी चाहिएं कि साबित

की जाने वाली कल्पना के सिवाय प्रत्येक संभावित उप-कल्पना अपवर्जित हो जाए । यह अभिनिर्धारित किया गया कि साक्ष्य की श्रृंखला अवश्य इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई युक्तियुक्त आधार शेष न रहे और अवश्य यह दर्शित होना चाहिए कि सभी मानवीय अधिसंभाव्यताओं में वह कार्य अवश्य अभियुक्त द्वारा किया गया होगा ।

10. यह स्थिर विधि है कि संदेह चाहे कितना भी मजबूत हो, युक्तियुक्त संदेह के परे सबूत का स्थान नहीं ले सकता । किसी अभियुक्त को संदेह के आधार पर दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता, भले ही वह कितना मजबूत क्यों न हो । अभियुक्त के तब तक निर्दोष होने की उपधारणा की जाती है जब तक युक्तियुक्त संदेह के परे दोषी साबित नहीं किया जाता है ।

11. पूर्वोक्त निर्णय को ध्यान में रखते हुए हमने वर्तमान मामले की परीक्षा की है । वर्तमान मामले में, विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन मूलभूत रूप से दोषसिद्धि और दोषसिद्धि की अभिपुष्टि अन्यत्र उपस्थित होने के अभिवाक् को सारहीन पाते हुए की है । विधि की यह स्थिर प्रतिपादना है कि अभियुक्त पर साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अधीन भार को स्थानांतरित करने से पूर्व अभियोजन पक्ष को अपने पक्षकथन को साबित करना होगा । निस्संदेह, **त्रिमुख मरोति किरकन** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित की गई विधि को ध्यान में रखते हुए जो कि वर्तमान मामले जैसा मामला था, जिसमें कहा गया था कि जहां पति और पत्नी एक मकान में एक-साथ रहते हों और अपराध मकान के अंदर किया गया हो, तो पति को यह स्पष्ट करना होगा कि उस मकान में मृत्यु कैसे हुई थी जिसमें वे एकसाथ रहते थे । तथापि, ऐसे मामले में भी अभियोजन पक्ष को पहले ही यह सिद्ध करना होगा कि मृत्यु होने से पूर्व मृतका और अभियुक्त उक्त मकान में एक-साथ देखे गए थे । वर्तमान मामले में, घटना तारीख 28/29 मई, 2004

[1] (2006) 10 एस. सी. सी. 681 = 2006 आईएनएससी 691.

की मध्यवर्ती रात्रि में घटी थी । अभियोजन पक्ष के लिए यह आवश्यक था कि वह यह सिद्ध करने के लिए कुछ साक्ष्य प्रस्तुत करे कि तारीख 28/29 मई, 2004 की रात्रि में मृतका और अभियुक्त मकान में एक-साथ थे । यह बात प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा किए गए अन्यत्र उपस्थित होने के विनिर्दिष्ट अभिवाक् को ध्यान में रखते हुए और अधिक आवश्यक हो जाती है ।

12. हमें इस बारे में विचार करना होगा कि क्या अभियोजन पक्ष ने अन्य परिस्थितियों को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध किया है या नहीं जिससे अभियुक्त की दोषिता की बजाय कोई अन्य निष्कर्ष न निकलता हो ।

13. अभियोजन पक्ष ने सरोज, पुष्पेन्द्र (अभियुक्त सं. 2) और रविन्द्र कुमार (अभियुक्त सं. 1) के मोबाइल फोन के संबंध में सीडीआर का अवलंब लिया है । तथापि, दोनों न्यायालयों ने उक्त साक्ष्य को अग्राह्य पाया था क्योंकि इसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 65क के निबंधनों के अनुसार साबित नहीं किया गया था । अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब ली गई परिस्थितियां अपीलार्थी द्वारा अपराध कारित करने के समय पर अभिकथित रूप से प्रयोग किए गए रक्तरंजित वस्त्रों का चंद्रावल स्थित उसके पैतृक गृह से डबल बैड के नीचे से किए गए अभिग्रहण के संबंध में है । हमारा निष्कर्ष है कि उक्त बरामदगी का अवलंब नहीं लिया जा सकता था और इसके एक से अधिक कारण हैं । साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन किए गए कथन के आधार पर किसी बरामदगी को ग्राह्य होने के लिए वह बरामदगी ऐसे स्थान से होनी चाहिए जो अनन्य रूप से उस कथन को करने वाले के ज्ञान में हो । निर्विवाद रूप से, बरामदगी सभी की पहुंच वाले स्थान से की गई है और बरामदगी पंचनामा में ऐसी बरामदगी की तारीख का भी उल्लेख नहीं किया गया है । इसके अतिरिक्त, उक्त वस्तुओं को जमा करने और उन्हें रासायनिक परीक्षण के लिए न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेजने के संबंध में मालखाना रजिस्टर में कोई प्रविष्टि नहीं है । अत: हमारा निष्कर्ष है कि यह नहीं कहा जा सकता कि उक्त परिस्थितियों को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया है ।

14. इसके अतिरिक्त, अभियोजन पक्ष किसी अन्य परिस्थिति को भी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने की स्थिति में नहीं रहा है । विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने जोरदार रूप से इस परिस्थिति का अवलंब लिया है कि कमरे में एक अंग्रेजी कलैंडर (प्रदर्श पीएक्स) लटका हुआ पाया गया था । जिस पर एक तरफ एक जैसे कंप्यूटर प्रिंट आउट वाली कागज की पर्चिया चिपकाई गई हैं । इन पर्चियों में से एक के बाएं सिरे पर रविन्द्र नाम और उसके बाद तीर के निशान के साथ मोबाइल टेलीफोन 9818419048 हाथ से लिखा हुआ देखा जा सकता है । कलैंडर के ऊपर किनारे पर चिपकाई गई अन्य पर्ची पर यह लिखा हुआ था :–

"इन-लाज : 27913334

सेल्फ : 9818419048

माई होम : 55153285"

15. यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अपीलार्थी ने उस मकान की दीवार पर कलैंडर (प्रदर्श पीएक्स) को टांगा था, जहां वह रह रहा था और कलैंडर (प्रदर्श पीएक्स) पर मकान में प्रवेश करने वाले हर व्यक्ति की नजर पड़ती थी । यह अभिनिर्धारित किया गया कि ऐसा जानबूझकर और उद्देश्यपूर्वक किया गया था । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि चंद्रावल स्थित मकान को "माई होम (मेरा मकान)" का नाम दिया गया था और जहां अन्य फोन चालू हालत में था वह उसके "इन-लाज" (ससुराल वालों) का था । उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया :–

> "..... चंद्रावल मकान के फोन नंबर का 'माई होम' अभिव्यक्ति से पता चलता है और वह मकान जहां अन्य फोन (27913334) चालू था वह उसके 'इन-लाज' (ससुराल) का था ।"

16. इस निष्कर्ष के साथ-साथ इस निष्कर्ष के लिए भी कि मकान में अपीलार्थी ने एक बखेड़ा खड़ा किया था जिससे इसे एक लूट की तरह दिखाया जा सके, यह अभिनिर्धारित किया गया कि वह अपीलार्थी ही था जो अपनी पत्नी की हत्या कारित करने का दोषी था ।

17. जैसाकि इस न्यायालय द्वारा **शरद बिरधीचंद सारदा** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है, हमारा यह सुविचारित मत है कि उच्च न्यायालय "अपराध कारित किया जा सकता है" या "अपराध कारित किया गया होगा" के बीच अंतर करने में असफल रहा है । जैसा कि इस न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, संदेह चाहे कितना भी मजबूत हो, युक्तियुक्त संदेह के परे सबूत का स्थान नहीं ले सकता । अत: हमारा निष्कर्ष है कि अभियोजन पक्ष अपराध में आलिप्त करने वाली किसी परिस्थिति को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा है और किसी भी स्थिति में घटनाओं की ऐसी अटूट श्रृंखला को सिद्ध करने में असफल रहा है जिससे अभियुक्त की दोषिता की बजाय कोई अन्य निष्कर्ष न निकलता हो ।

18. तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, यह अपील भागत: मंजूर की जाती है और इस अपील में अपीलार्थी पर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त किया जाता है । तथापि, भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304-ख, 498-क के अधीन दंडनीय अपराधों के संबंध में दोषसिद्धि और दंडादेश को प्रत्यावर्तित किया जाता है ।

19. वर्तमान मामले में, अपीलार्थी ने पंद्रह वर्ष से अधिक अवधि का कारावास भुगत लिया है । मामले को इस प्रकार दृष्टिगत करते हुए हम निदेश देते हैं कि अपीलार्थी द्वारा जुर्माने की रकम को जमा करना आवश्यक नहीं होगा । अपीलार्थी को, यदि उसकी किसी अन्य मामले में आवश्यकता नहीं है, तुरंत स्वतंत्र कर दिया जाए ।

20. लंबित आवेदन(आवेदनों), यदि कोई है, का निपटारा हो जाएगा ।

अपील भागत: मंजूर की गई ।

जस.

[2024] 2 उम. नि. प. 184

राकेश रंजन श्रीवास्तव

बनाम

झारखंड राज्य और एक अन्य

[2024 की दांडिक अपील सं. 741]

15 मार्च, 2024

न्यायमूर्ति अभय एस. ओका और न्यायमूर्ति उज्जल भुयन

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (1881 का 26) – धारा 138 और 143क – चैक का अनादरण – अंतरिम प्रतिकर का निदेश देने की शक्ति – निदेशात्मक है या आज्ञापक – चूंकि धारा 143क के अधीन शक्ति का प्रयोग अभियुक्त को दोषी अभिनिर्धारित करने से पूर्व और साक्ष्य अभिलिखित किए जाने से पूर्व आरंभिक प्रक्रम पर ही किया जा सकता है, इसलिए यदि इस धारा में प्रयुक्त शब्द (अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का आदेश दे) 'सकेगा' (मे) का निर्वचन 'देगा' (शेल) के रूप में किया जाए तो इसके गंभीर परिणाम होंगे क्योंकि धारा 138 के अधीन प्रत्येक परिवाद में अभियुक्त को चैक की रकम के बीस प्रतिशत तक अंतरिम प्रतिकर का संदाय करना होगा और ऐसा निर्वचन अनुचित तथा ऋजुता और न्याय की सुस्थिर धारणा के प्रतिकूल होगा इसलिए धारा 143क के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के गंभीर परिणामों को ध्यान में रखते हुए इस उपबंध में प्रयुक्त शब्द 'सकेगा' का अर्थ 'देगा' के रूप में नहीं लगाया जा सकता और इस उपबंध के अधीन न्यायालय को प्रदत्त शक्ति वैवेकिक और निदेशात्मक है न कि आज्ञापक ।

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 – धारा 138 और 143क – चैक का अनादरण – अंतरिम प्रतिकर का निदेश देने की शक्ति – ध्यान में रखी जाने वाली बातें – परिवादी द्वारा धारा 143क के अधीन अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का अभियुक्त को निदेश देने के लिए किए गए आवेदन पर न्यायालय को प्रथमदृष्ट्या परिवादी द्वारा बनाए गए मामले के गुणागुण पर और आवेदन के उत्तर में अभियुक्त द्वारा

अभिवाक् की गई प्रतिरक्षा का मूल्यांकन करना होगा और अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का निदेश केवल तभी दिया जा सकता है जब परिवादी द्वारा प्रथमदृष्ट्या मामला बनाया गया हो और यदि अभियुक्त की प्रतिरक्षा को प्रथमदृष्ट्या विश्वसनीय पाया जाए, तो न्यायालय अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने से इनकार करने के लिए विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकता है और यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है, तो प्रदान किए जाने वाले अंतरिम प्रतिकर की मात्रा पर न्यायालय को अपने मस्तिष्क का प्रयोग करना होगा और संव्यवहार की प्रकृति, पक्षकारों के बीच संबंध आदि विभिन्न पहलुओं पर विचार करना होगा ।

अपील के तथ्यों के अनुसार, द्वितीय प्रत्यर्थी परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन एक परिवाद में परिवादी है । परिवाद बोकारो स्थित मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय में फाइल किया गया था । परिवाद में किया गया पक्षकथन यह था कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी ने लाभ में हिस्सेदारी के संबंध में विभिन्न निबंधनों और शर्तों के आधार पर कतिपय कंपनियां बनाई थीं । अपीलार्थी द्वारा मैसर्स थर्मोटेक सीनर्जी प्रा. लि. कंपनी के प्रबंध निदेशक के रूप में अपनी प्रास्थिति में और एक स्वत्वधारी समुत्थान, मैसर्स टेक सीनर्जी की ओर से एक नियुक्ति पत्र जारी किया गया था, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी को अपीलार्थी द्वारा एक लाख रुपए प्रति माह के समेकित वेतन पर कार्यकारी निदेशक का पद दिया गया था । बाद में, अपीलार्थी ने राहुल कुमार बसु नामक व्यक्ति के साथ एक भागीदारी फर्म गठित की, जिसमें प्रत्यर्थी को अप्रत्यक्ष भागीदार दर्शाया गया । प्रत्यर्थी के पक्षकथन के अनुसार, मैसर्स टेक सीनर्जी का एक अन्य कंपनी, मैसर्स मेगाटेक सीनर्जी प्रा. लि. के साथ विलय किया गया । प्रत्यर्थी द्वारा यह अभिकथन किया गया कि उसे लाभ का 50 प्रतिशत संदाय करने का करार किया गया था । तारीख 3 जून, 2013 को एक और भागीदारी फर्म अस्तित्व में आई, जिसमें अपीलार्थी, प्रत्यर्थी और राहुल कुमार को भागीदारों के रूप में दर्शाया गया । प्रत्यर्थी का यह पक्षकथन है कि अपीलार्थी एक अन्य कंपनी, जियोटेक सीनर्जी प्रा. लि. के लाभ में से 50 प्रतिशत हिस्सा देने के लिए सहमत हुआ था । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को देय और

संदेय रकमों का संदाय नहीं किया । अत: प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी को एक विधिक सूचना जारी की गई । प्रत्यर्थी के पक्षकथन के अनुसार, अपीलार्थी प्रत्यर्थी को 4,38,80,000/- रुपए की कुल रकम का संदाय करने के लिए दायी था और वास्तव में प्रत्यर्थी द्वारा उक्त रकम की वसूली के लिए बोकारो स्थित सिविल न्यायालय में एक सिविल वाद फाइल किया गया था । उसके पश्चात्, पक्षकारों के बीच एक बैठक हुई तब अपीलार्थी प्रत्यर्थी को 4,25,00,000/- रुपए की राशि का संदाय करने के लिए सहमत हुआ और अपीलार्थी को 2,20,00,000/- रुपए और 2,05,00,000/- रुपए के दो चैक सौंपे गए । चूंकि 2,20,00,000/- रुपए का पहला चैक अनादृत हो गया इसलिए एक कानूनी सूचना तामील करने के पश्चात् परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने का अभिकथन करते हुए एक परिवाद फाइल किया गया, जिस पर विद्वान् मजिस्ट्रेट ने अपराध का संज्ञान लिया । प्रत्यर्थी ने विद्वान् मजिस्ट्रेट न्यायालय के समक्ष परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 143क के अधीन एक आवेदन फाइल करके चैक की 20 प्रतिशत रकम का प्रतिकर के रूप में संदाय करने का अपीलार्थी/अभियुक्त को निदेश देने की ईप्सा की । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने आवेदन को मंजूर किया और अपीलार्थी को निदेश दिया कि प्रत्यर्थी को 60 दिन के भीतर 10,00,000/- रुपए का अंतरिम प्रतिकर के रूप में संदाय किया जाए । एक पुनरीक्षण आवेदन में सेशन न्यायालय द्वारा विद्वान् मजिस्ट्रेट के आदेश की अभिपुष्टि की गई । अभियुक्त द्वारा उक्त आदेशों को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई । उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा आवेदन को खारिज कर दिया गया । इन आदेशों को उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल करके चुनौती दी गई । उच्चतम न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न उद्भूत हुआ कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 143क के अधीन अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने से संबंधित उपबंध निदेशात्मक प्रकृति का है या आज्ञापक । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील को भागत: मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 143क के मामले में शक्ति का प्रयोग यहां तक कि अभियुक्त को दोषी ठहराए

जाने के पूर्व किया जा सकता है । धारा 143क की उपधारा (1) में धारा 138 के अधीन परिवाद में अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने के लिए अभियुक्त के विरुद्ध यहां तक कि अभियुक्त की दोषिता पर कोई न्यायनिर्णयन किए जाने से पूर्व ही एक कठोर आदेश पारित किए जाने का उपबंध किया गया है । इस शक्ति का प्रयोग आरंभ में ही यहां तक कि साक्ष्य अभिलिखित किए जाने से पूर्व किया जा सकता है । यदि 'मे' (दे सकेगा) शब्द का निर्वचन 'शेल' (देगा) के रूप में किया जाए, तो इसके गंभीर परिणाम होंगे क्योंकि धारा 138 के अधीन प्रत्येक परिवाद में अभियुक्त को चैक की रकम के बीस प्रतिशत तक अंतरिम प्रतिकर का संदाय करना पड़ेगा । ऐसा निर्वचन अन्यायपूर्ण होगा और ऋजुता तथा न्याय की सुस्थिर धारणा के प्रतिकूल होगा । यदि ऐसा निर्वचन किया जाता है, तो उक्त उपबंध से स्वयमेव स्पष्ट मनमानेपन की बुराई प्रकट हो सकती है । इस उपबंध को संविधान के अनुच्छेद 14 का अतिक्रमणकारी अभिनिर्धारित किया जा सकता है । एक प्रकार से धारा 143क की उपधारा (1) अभियुक्त को उसकी दोषिता सिद्ध हो जाने के पूर्व ही दंडित करने का उपबंध करती है । धारा 143क के अधीन शक्ति के प्रयोग और वह भी विचारण में दोषिता का निष्कर्ष अभिलिखित किए जाने से पूर्व करने के गंभीर परिणामों पर विचार करते हुए इस उपबंध में प्रयुक्त शब्द दे "सकेगा" (मे) का अर्थ "देगा" (शेल) के रूप में नहीं किया जा सकता । इस उपबंध को एक निदेशात्मक न कि आज्ञापक के रूप में अभिनिर्धारित किया जाना होगा । अत: हमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 143क में प्रयुक्त दे "सकेगा" (मे) शब्द का अर्थ या निर्वचन "देगा" (शेल) के रूप में नहीं किया जा सकता । अत: धारा 143क की उपधारा (1) के अधीन शक्ति वैवेकिक है । जब न्यायालय परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 143क के अधीन आवेदन पर विचार करता है, तो न्यायालय को प्रथमदृष्ट्या परिवादी द्वारा बनाए गए मामले के गुणागुण और धारा 143क की उपधारा (1) के अधीन आवेदन के उत्तर में अभियुक्त द्वारा अभिवाक् की गई प्रतिरक्षा के गुणागुण का मूल्यांकन करना होगा । परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 139 के अधीन उपधारणा अंतरिम प्रतिकर के संदाय का निदेश देने के लिए स्वयमेव

कोई आधार नहीं है । कारण यह है कि यह उपधारणा खंडनीय है । उपधारणा लागू करने का प्रश्न विचारण में उद्भूत होगा । केवल जब परिवादी एक प्रथमदृष्ट्या मामला सिद्ध करता है, तो अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का निदेश जारी किया जा सकता है । इस प्रक्रम पर, इस तथ्य पर भी विचार किया जा सकता है कि अभियुक्त वित्तीय संकट में है । यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए मामला बनता है, फिर भी न्यायालय को प्रदान किए जाने वाले अंतरिम प्रतिकर की मात्रा पर अपने मस्तिष्क का प्रयोग करना होगा । इस प्रक्रम पर भी, न्यायालय को विभिन्न बातों पर विचार करना होगा जैसे संव्यवहार की प्रकृति, अभियुक्त और परिवादी के बीच संबंध, यदि कोई है, और अभियुक्त की संदाय करने की प्रास्थिति । यदि अभियुक्त की प्रतिरक्षा को प्रथमदृष्ट्या एक विश्वसनीय प्रतिरक्षा पाया जाता है, तो न्यायालय अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने से इनकार करने के लिए विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकता है । हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि विचार किए जाने के लिए अपेक्षित बातें, जिनको हमने ऊपर उपर्णित किया है, सर्वांगपूर्ण नहीं है । प्रस्तुत मामले के तथ्यों में कई अन्य कारक भी हो सकते हैं जैसे कि किसी सिविल वाद इत्यादि का लंबित रहना आदि । धारा 143क के अधीन किए गए निवेदन का विनिश्चय करते समय न्यायालय को अवश्य सभी सुसंगत कारकों पर विचार करने की बात को उपदर्शित करते हुए संक्षिप्त कारण अभिलिखित करने चाहिएं । (पैरा 14 और 16)

वर्तमान मामले में, विचारण न्यायालय ने प्रथमदृष्ट्या मामले के प्रश्न पर और अन्य सुसंगत बातों पर विचार किए बिना यांत्रिक रूप से 10,00,000/- रुपए जमा करने का आदेश पारित किया है । यह सही है कि 10,00,000/- रुपए की राशि चैक की रकम के 5 प्रतिशत से कम है किंतु रकम का संदाय करने का निदेश मस्तिष्क का प्रयोग किए बिना जारी किया गया है । यहां तक कि उच्च न्यायालय ने भी अपने मस्तिष्क का प्रयोग नहीं किया । अत: यह न्यायालय विचारण न्यायालय को अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए आवेदन पर नए सिरे से विचार करने का निदेश देता है । (पैरा 17)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2023] (2023) 10 एस. सी. सी. 446 :
जम्बू भंडारी बनाम **मध्य प्रदेश राज्य औद्योगिक विकास निगम लि. और अन्य** ; 15

[2019] (2019) 11 एस. सी. सी. 341 :
सुरिन्द्र सिंह देशवाल बनाम **विरेन्द्र गांधी** । 15

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2024 की दांडिक अपील सं. 741.

2021 के दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 836 में झारखंड उच्च न्यायालय, रांची द्वारा तारीख 3 जनवरी, 2023 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री शुभम भल्ला, रजनीश रंजन, यजुर भल्ला, (सुश्री) अंचिता नय्यर, (सुश्री) रागिनी शर्मा, (सुश्री) आकांशा गुलाटी, (सुश्री) नित्या महेश्वरी, (सुश्री) गौरी देवी, जयसुर्या जैन, रोहित पांडे, अलेक्स नोयल दास और विजय कुमार द्विवेदी

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री प्रतीक यादव, मोहम्मद शाहरूख, योगेश यादव, पति राज यादव, (सुश्री) प्रतिमा यादव, रणवीर सिंह यादव, विष्णु शर्मा, (सुश्री) मधुस्मिता बोरा, दीपांकर सिंह और श्रीमती अनुपमा शर्मा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय एस. ओका ने दिया ।

न्या. ओका – इस अपील में अंतर्वलित विवाद्यक यह है कि क्या परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (संक्षेप के लिए 'परक्राम्य लिखत अधिनियम') की धारा 143क की उपधारा (1) का उपबंध, जिसमें अंतरिम प्रतिकर देने के लिए उपबंध किया गया है, निदेशात्मक है या

आज्ञापक । यदि इसे एक निदेशात्मक उपबंध अभिनिर्धारित किया जाता है, तो जो प्रश्न उद्भूत होता है वह यह कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 143क की उपधारा (1) के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए विचार किए जाने वाले पहलू क्या हैं ।

तथ्यात्मक पहलू

परिवाद में प्रत्यर्थी सं. 2 का पक्षकथन

2. द्वितीय प्रत्यर्थी (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'प्रत्यर्थी' कहा गया है) परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन एक परिवाद में परिवादी है । परिवाद बोकारो स्थित मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय में फाइल किया गया था । परिवाद में किया गया पक्षकथन यह है कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी ने लाभ में हिस्सेदारी के संबंध में विभिन्न निबंधनों और शर्तों के आधार पर कतिपय कंपनियां बनाई थीं । तारीख 23 सितंबर, 2011 को अपीलार्थी द्वारा मैसर्स थर्मोटेक सीनर्जी प्रा. लि. कंपनी के प्रबंध निदेशक के रूप में अपनी प्रास्थिति में और एक स्वत्वधारी समुत्थान, मैसर्स टेक सीनर्जी की ओर से एक नियुक्ति पत्र जारी किया गया था, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी को अपीलार्थी द्वारा एक लाख रुपए प्रति माह के समेकित वेतन पर कार्यकारी निदेशक का पद दिया गया था ।

3. तारीख 1 जून, 2012 को अपीलार्थी ने राहुल कुमार बसु के साथ एक भागीदारी फर्म गठित की, जिसमें प्रत्यर्थी को अप्रत्यक्ष भागीदार दर्शाया गया था । प्रत्यर्थी के पक्षकथन के अनुसार, मैसर्स टेक सीनर्जी का एक अन्य कंपनी, मैसर्स मेगाटेक सीनर्जी प्रा. लि. के साथ विलय किया गया । प्रत्यर्थी द्वारा यह अभिकथन किया गया कि अगस्त, 2012 में उसे लाभ का 50 प्रतिशत संदाय करने का करार किया गया था । तारीख 3 जून, 2013 को एक और भागीदारी फर्म अस्तित्व में आई, जिसमें अपीलार्थी, प्रत्यर्थी और राहुल कुमार को भागीदारों के रूप में दर्शाया गया था । प्रत्यर्थी का यह पक्षकथन है कि अपीलार्थी एक अन्य कंपनी, जियोटेक सीनर्जी प्रा. लि. के लाभ में से 50 प्रतिशत हिस्सा देने के लिए सहमत हुआ था । यह अभिकथन किया गया कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को देय और संदेय रकमों का संदाय नहीं

किया । अत: प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी को एक विधिक सूचना जारी की गई । प्रत्यर्थी के पक्षकथन के अनुसार, अपीलार्थी प्रत्यर्थी को 4,38,80,000/- रुपए की कुल रकम का संदाय करने के लिए दायी था और वास्तव में प्रत्यर्थी द्वारा उक्त रकम की वसूली के लिए बोकारो स्थित सिविल न्यायालय में एक सिविल वाद फाइल किया गया । उसके पश्चात्, तारीख 13 जुलाई, 2018 को रांची में पक्षकारों के बीच एक बैठक हुई तब अपीलार्थी प्रत्यर्थी को 4,25,00,000/- रुपए की राशि का संदाय करने के लिए सहमत हुआ और अपीलार्थी को 2,20,00,000/- रुपए और 2,05,00,000/- रुपए के क्रमश: तारीख 6 अगस्त, 2018 और 19 सितंबर, 2018 के दो चैक सौंपे गए । क्योंकि 2,20,00,000/- रुपए का पहला चैक अनादृत हो गया इसलिए एक कानूनी सूचना तामील करने के पश्चात् परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने का अभिकथन करते हुए एक परिवाद फाइल किया गया, जिस पर विद्वान् मजिस्ट्रेट ने अपराध का संज्ञान लिया ।

परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 143क के अधीन आवेदन

4. प्रत्यर्थी ने विद्वान् मजिस्ट्रेट न्यायालय के समक्ष परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 143क के अधीन एक आवेदन फाइल करके अपीलार्थी/अभियुक्त को चैक की 20 प्रतिशत रकम का प्रतिकर के रूप में संदाय करने का निदेश देने की ईप्सा की । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने तारीख 7 मार्च, 2020 के आदेश द्वारा आवेदन को मंजूर किया और अपीलार्थी को निदेश दिया कि प्रत्यर्थी को 60 दिन के भीतर 10,00,000/- रुपए का अंतरिम प्रतिकर के रूप में संदाय किया जाए । एक पुनरीक्षण आवेदन में सेशन न्यायालय ने विद्वान् मजिस्ट्रेट के आदेश की अभिपुष्टि की । उक्त आदेशों को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई । झारखंड उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने आक्षेपित निर्णय द्वारा आवेदन को खारिज कर दिया । ये आदेश वर्तमान दांडिक अपील में चुनौती की विषयवस्तु है ।

दलीलें

5. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने उल्लेख किया कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 143क की

उपधारा (1) में 'मे' (दे सकेगा) शब्द का प्रयोग किया गया है । अत: यह उपबंध वैवेकिक है । उन्होंने दलील दी कि विचारण न्यायालय अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का आदेश यांत्रिक रूप से पारित नहीं कर सकता । उन्होंने दलील दी कि जमा करने का ऐसा कठोर आदेश पारित करने से पूर्व न्यायालय को मामले के तथ्यों पर अपने मस्तिष्क का प्रयोग करना चाहिए । उन्होंने दलील दी कि धारा 143क के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए एक प्रथमदृष्ट्या मामला विद्यमान होना आवश्यक है । परिवादी के मामले के गुणागुण पर प्रथमदृष्ट्या विचार करने और अभियुक्त की प्रतिरक्षा पर विचार करने के पश्चात् न्यायालय को अवश्य यह निष्कर्ष निकालना चाहिए कि क्या अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए मामला बनता है या नहीं । न्यायालय द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचने के पश्चात् कि अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए मामला बनाया गया है, अंतरिम प्रतिकर की मात्रा पर न्यायालय को अपने मस्तिष्क का प्रयोग करना चाहिए । प्रत्येक मामले में, न्यायालय अंतरिम प्रतिकर के रूप में चैक की रकम का 20 प्रतिशत प्रदान नहीं कर सकता ।

6. प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के उद्देश्य पर विचार करते हुए धारा 143क की उपधारा (1) को आज्ञापक अभिनिर्धारित किया जाना होगा । उन्होंने दलील दी कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 139 के अधीन एक उपधारणा की गई है कि जब तक प्रतिकूल साबित नहीं कर दिया जाता, चैक के धारक ने चैक को किसी ऋण या दायित्व के संपूर्ण या भागत: उन्मोचन के लिए प्राप्त किया था । उन्होंने दलील दी कि उक्त उपधारणा का खंडन करने का प्रश्न केवल साक्ष्य को प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् उद्भूत होगा । अत: धारा 143क की उपधारा (1) के अधीन आवेदन पर विचार करने के प्रक्रम पर अभियुक्त की प्रतिरक्षा असंगत है । प्रत्येक मामले में, अंतरिम प्रतिकर के संदाय का अवश्य आदेश किया जाना चाहिए । उन्होंने दलील दी कि जब तक यह अभिनिर्धारित नहीं किया जाता है कि धारा 143क की उपधारा (1) आज्ञापक है, इस उपबंध को अधिनियमित करने का विधानमंडल का उद्देश्य ही विफल हो जाएगा ।

दलीलों पर विचार

धारा 143क का उद्देश्य

7. धारा 143क को कानून की किताब पर तारीख 1 सितंबर, 2018 से 2018 के अधिनियम सं. 20 द्वारा लाया गया था । धारा 143क इस प्रकार है :–

"**143क. अंतरिम प्रतिकर का निदेश देने की शक्ति –** (1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी धारा 138 के अधीन किसी अपराध का विचारण करने वाला न्यायालय चैक के लेखीवाल को –

(क) संक्षिप्त विचारण या समन मामले में, जहां परिवाद में उसने किए गए अभियोग का दोषी नहीं होने का अभिवाक् किया हो ; और

(ख) अन्य किसी मामले में, आरोप विरचित किए जाने पर,

परिवादी को अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का आदेश दे सकेगा ।

(2.) उपधारा (1) के अधीन अंतरिम प्रतिकर चैक की रकम के बीस प्रतिशत से अधिक नहीं होगा ।

(3) अंतरिम प्रतिकर का, उपधारा (1) के अधीन जारी आदेश की तारीख से साठ दिन के भीतर या चैक के लेखीवाल द्वारा पर्याप्त कारण दर्शित किए जाने पर तीस दिन से अनधिक की ऐसी और अवधि के भीतर, जिसका न्यायालय द्वारा निदेश दिया जाए, संदाय किया जाएगा ।

(4) यदि चैक के लेखीवाल को दोषमुक्त कर दिया जाता है, तो न्यायालय परिवादी को प्रतिकर की अंतरिम रकम लेखीवाल को, आदेश की तारीख से साठ दिन के भीतर या परिवादी द्वारा पर्याप्त कारण दर्शित किए जाने पर तीस दिन से अनधिक की ऐसी और अवधि के भीतर, जिसका न्यायालय द्वारा निदेश दिया जाए,

सुसंगत वित्तीय वर्ष के प्रारंभ पर प्रचलित बैंक दर से ब्याज सहित प्रतिसंदाय करने का निदेश देगा ।

(5) इस धारा के अधीन संदेय अंतरिम प्रतिकर इस प्रकार वसूल किया जा सकेगा, मानो यह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 421 के अधीन कोई जुर्माना था ।

(6) धारा 138 के अधीन अधिरोपित जुर्माने की रकम या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 357 के अधीन अधिनिर्णीत प्रतिकर की रकम में से इस धारा के अधीन अंतरिम प्रतिकर के रूप में संदत्त या वसूल की गई रकम घटा दी जाएगी ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

7.1 उद्देश्यों और कारणों के कथन में यह उल्लेख किया गया कि चैकों के बेईमान लेखीवाल धारा 138 के अधीन परिवाद की कार्यवाहियों में अपीलें फाइल करके और रोकादेश अभिप्राप्त करके विलंब करते हैं । अत: अनादृत चैक के पाने वाले के साथ अन्याय होता है, जिसे चैक के मूल्य को वसूल करने के लिए न्यायालय की कार्यवाहियों में अत्यधित समय और साधन गंवाने पड़ते हैं । यह भी मत व्यक्त किया गया था कि ऐसे विलंबों से चैक संव्यवहारों की आदरणीयता पर जोखित होता है । अत: चैक अनादरण मामलों के अंतिम समाधान में असम्यक् विलंब के मुद्दे हल करने की दृष्टि से परक्राम्य लिखत अधिनियम में संशोधन करने का प्रस्ताव है । यह भी कहा गया था कि प्रस्तावित संशोधनों से चैकों की विश्वसनीयता सुदृढ़ होगी और व्यापार और वाणिज्य में सहायता मिलेगी ।

8. हम यहां यह उल्लेख कर सकते हैं कि 2018 के इसी अधिनियम सं. 20 द्वारा धारा 148 को कानून की पुस्तक पर लाया गया था जिसमें उपबंधित है कि धारा 138 के अधीन लेखीवाल द्वारा दोषसिद्धि के विरुद्ध फाइल की गई अपील में अपील न्यायालय, अपीलार्थी को ऐसी राशि जमा करने का आदेश दे सकेगा, जो विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत जुर्माने या प्रतिकर के न्यूनतम 20 प्रतिशत होगी । धारा 148 की उपधारा (1) के परंतुक में यह स्पष्ट किया गया है कि धारा

148 की उपधारा (1) के अधीन संदेय रकम अपीलार्थी/अभियुक्त द्वारा धारा 143क के अधीन संदत्त किसी भी अंतरिम प्रतिकर के अतिरिक्त होगी । धारा 148 को जोड़ने के लिए अलग से कोई उद्देश्य और कारण उपवर्णित नहीं किए गए हैं ।

आज्ञापक या निदेशात्मक

9. इसमें कोई संदेह नहीं है कि दे "सकेगा" (मे) शब्द का अर्थ मामूली तौर पर "अवश्य" नहीं होता है । मामूली तौर पर, दे "सकेगा" (मे) का अर्थ "देगा" (शेल) नहीं लगाया जाएगा । किंतु यह एक अनम्य नियम नहीं है । कतिपय विधानों में दे "सकेगा" (मे) शब्द का अर्थ "देगा" (शेल) लगाया जा सकता है, और "देगा" (शेल) शब्द का अर्थ दे "सकेगा" (मे) लगाया जा सकता है । यह सब कानून के सुसंगत उपबंध द्वारा प्रदत्त शक्ति की प्रकृति और शक्ति के प्रयोग के प्रभाव पर निर्भर करता है । विधायी आशय भी ऐसे उपबंधों का निर्वचन करने में भूमिका निभाता है । यहां तक कि वह संदर्भ भी सुसंगत होता है जिसमें दे "सकेगा" (मे) शब्द का प्रयोग किया गया है ।

10. धारा 143क की उपधारा (1) के अधीन शक्ति किसी संक्षिप्त विचारण या समन मामले में अभियुक्त के इस अभिवाक् को अभिलिखित करने के उपरांत कि वह दोषी नहीं है और अन्य मामलों में आरोप विरचित करने के उपरांत अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का निदेश देने के बारे में है । चूंकि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अधिकतम दंड दो वर्ष तक का कारावास है, इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप के लिए 'दंड प्रक्रिया संहिता') की धारा 2 के खंड (भ) के साथ पठित खंड (ब) को ध्यान में रखते हुए परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन मामले समन मामलों के रूप में विचारणीय हैं । तथापि, धारा 143 की उपधारा (1) में उपबंधित है कि दंड प्रक्रिया संहिता में किसी बात के होते हुए भी विद्वान् मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 262 से धारा 265 के अधीन उपबंधित संक्षिप्त प्रक्रिया अपनाकर परिवाद का विचारण करेगा । तथापि, जब विचारण आरंभ होने पर या संक्षिप्त विचारण के दौरान न्यायालय को यह प्रतीत

होता है कि एक वर्ष से अधिक अवधि के कारावास का दंडादेश पारित किया जा सकता है या किसी अन्य कारण से मामले का संक्षिप्त रूप में विचारण किया जाना अवांछनीय है, तो मामले का विचारण दंड प्रक्रिया संहिता द्वारा उपबंधित रीति में किया जाएगा । अत: धारा 138 के अधीन परिवाद ऐसी किसी अनिश्चित परिस्थिति में एक समन मामला बन जाता है । हम यहां यह उल्लेख कर सकते हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 259 के अधीन, उक्त धारा में जो उपबंधित है उसके अध्यधीन रहते हुए, विद्वान् मजिस्ट्रेट को किसी समन मामले को वारंट मामले में संपरिवर्तित करने का विवेकाधिकार है । केवल वारंट मामले में आरोप विरचित करने का प्रश्न होता है । अत: धारा 143क की उपधारा (1) का खंड (ख) केवल तब लागू होगा जब मामले का विचारण एक वारंट मामले के रूप में किया जा रहा है । संक्षिप्त या समन विचारण के मामले में धारा 143क की उपधारा (1) के अधीन शक्ति का प्रयोग अभियुक्त के अभिवाक् को अभिलिखित किए जाने के पश्चात् किया जा सकता है ।

11. धारा 143क की उपधारा (5) के अधीन यह उपबंधित है कि अंतरिम प्रतिकर की रकम को इस प्रकार वसूला जा सकता है मानो यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 421 के अधीन एक जुर्माना है । अत: एक विधिक कल्पना द्वारा अंतरिम प्रतिकर को इसकी वसूली के प्रयोजनार्थ एक जुर्माने के रूप में समझा जाता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 421 किसी दांडिक न्यायालय द्वारा दंडादेश पारित करते समय अधिरोपित जुर्माने की वसूली के संबंध में है । इस प्रकार, अंतरिम प्रतिकर की वसूली के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 421 की प्रक्रिया को अपनाया जा सकता है । धारा 421 इस प्रकार है :–

> "**421. जुर्माना उद्गृहीत करने के लिए वारंट –** (1) जब किसी अपराधी को जुर्माने का दंडादेश दिया गया है तब दंडादेश देने वाला न्यायालय निम्नलिखित प्रकारों में से किसी या दोनों प्रकार से जुर्माने की वसूली के लिए कार्रवाई कर सकता है, अर्थात् वह –
>
> (क) अपराधी की किसी जंगम संपत्ति की कुर्की और

विक्रय द्वारा रकम को उद्गृहीत करने के लिए वारंट जारी कर सकता है ;

(ख) व्यतिक्रमी की जंगम या स्थावर संपत्ति या दोनों से भू-राजस्व की बकाया के रूप में रकम को उद्गृहीत करने के लिए जिले के कलेक्टर को प्राधिकृत करते हुए उसे वारंट जारी कर सकता है :

परंतु यदि दंडादेश निदिष्ट करता है कि जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर अपराधी कारावासित किया जाएगा और यदि अपराधी ने व्यतिक्रम के बदले में ऐसा पूरा कारावास भुगत लिया है तो कोई न्यायालय ऐसा वारंट तब तक जारी नहीं करेगा जब तक वह विशेष कारणों से जो अभिलिखित किए जाएंगे, ऐसा करना आवश्यक न समझे अथवा जब तक उसने जुर्माने में से व्यय या प्रतिकर के संदाय के लिए धारा 357 के अधीन आदेश न किया हो ।

(2) राज्य सरकार उस रीति को विनियमित करने के लिए, जिससे उपधारा (1) के खंड (क) के अधीन वारंट निष्पादित किए जाने हैं और ऐसे वारंट के निष्पादन में कुर्क की गई किसी संपत्ति के बारे में अपराधी से भिन्न किसी व्यक्ति द्वारा किए गए किन्हीं दावों के संक्षित अवधारण के लिए नियम बना सकती है ।

(3) जहां न्यायालय कलक्टर को उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन वारंट जारी करता है वहां कलक्टर उस रकम की भू-राजस्व की बकाया की वसूली से संबंधित विधि के अनुसार ऐसे वसूल करेगा मानो ऐसा वारंट ऐसी विधि के अधीन जारी किया गया प्रमाणपत्र हो :

परंतु ऐसा कोई वारंट अपराधी की गिरफ्तारी या कारावास में निरोध द्वारा निष्पादित नहीं किया जाएगा ।"

12. अभियुक्त द्वारा अंतरिम प्रतिकर का संदाय न करने से अभियोजन में प्रतिरक्षा करने का उसका अधिकार छिन नहीं जाता है । उससे अंतरिम प्रतिकर की रकम को इसे जुर्माने के रूप में मानते हुए वसूल किया जा सकता है । विचारण न्यायालय द्वारा अंतरिम प्रतिकर

की रकम को अभियुक्त की जंगम संपत्ति को कुर्क और विक्रय करने के लिए वारंट जारी करके वसूल किया जा सकता है । न्यायालय में जिले के कलक्टर को अभियुक्त की जंगम या स्थावर संपत्ति या दोनों से भू-राजस्व के बकाया के रूप में अंतरिम प्रतिकर की रकम को वसूल करने के लिए प्राधिकृत करते हुए वारंट जारी करने की शक्ति भी निहित है । अंतरिम प्रतिकर की वसूली के लिए कलेक्टर द्वारा अभियुक्त की स्थावर या जंगम संपत्ति को बेचा जा सकता है । इस प्रकार, धारा 143क के अधीन नियत अंतरिम प्रतिकर का संदाय न करने के गंभीर परिणाम हैं । इसे वसूल करने के लिए, अभियुक्त को उसकी स्थावर और जंगम संपत्ति से वंचित किया जा सकता है । यदि वह दोषमुक्त हो जाता है, तो वह परिवादी से धारा 143क की उपधारा (4) में उपबंधित अनुसार ब्याज सहित उस धनराशि को वापस प्राप्त कर सकता है किंतु, यदि अंतरिम प्रतिकर को वसूल करने के लिए उसकी जंगम या स्थावर संपत्ति को बेचा गया है, तो भले ही वह दोषमुक्त हो जाता है, वह अपनी संपत्ति वापस प्राप्त नहीं कर सकेगा । यद्यपि परक्राम्य लिखत अधिनियम में धारा 143क की उपधारा (4) में उपबंधित अनुसार परिवादी से प्रतिकर की रकम की ब्याज सहित वसूली का कोई ढंग विहित नहीं किया गया है, तो भी चूंकि उपधारा (4) में परिवादी द्वारा अभियुक्त को अंतरिम प्रतिकर का प्रतिदाय करने का उपबंध किया गया है और चूंकि उपधारा (5) में अंतरिम प्रतिकर की वसूली के ढंग के लिए उपबंध किया गया है, तो इसलिए जाहिर सी बात है परिवादी से प्रतिकर की रकम वसूल करने के लिए वसूली का ढंग वह होगा जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 421 में उपबंधित है । परिवादी से रकम की वसूली करने के लिए अंतर्वलित प्रक्रिया लंबी चलने वाली प्रक्रिया हो सकती है । यदि परिवादी के पास कोई आस्तियां नहीं हैं, तो वसूली असंभव हो जाएगी ।

13. इस प्रक्रम पर, हम धारा 148 की उपधारा (1) का उल्लेख कर सकते हैं । धारा 148 इस प्रकार है :–

> "**148. दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील के लंबित रहते संदाय करने का आदेश करने की अपील न्यायालय की शक्ति –** (1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में अंतर्विष्ट किसी बात के

होते हुए भी, धारा 138 के अधीन दोषसिद्धि के विरुद्ध लेखीवाल द्वारा की गई अपील में अपील न्यायालय अपीलार्थी को ऐसी राशि जमा कराने का आदेश कर सकेगा, जो विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत जुर्माना या प्रतिकर के न्यूनतम बीस प्रतिशत होगी :

परंतु इस धारा के अधीन संदेय रकम, धारा 143क के अधीन अपीलार्थी द्वारा संदत्त किसी भी अंतरिम प्रतिकर के अतिरिक्त होगी ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट रकम, आदेश की तारीख से साठ दिन के भीतर या अपीलार्थी द्वारा पर्याप्त कारण दर्शित किए जाने पर तीस दिन से अनधिक की ऐसी और अवधि के भीतर, जिसका न्यायालय द्वारा निदेश दिया जाए, जमा कराई जाएगी ।

(3) अपील न्यायालय अपील के लंबित रहने के दौरान किसी भी समय अपीलार्थी द्वारा जमा की गई रकम को परिवादी को देने का निदेश दे सकेगा :

परंतु यदि अपीलार्थी दोषमुक्त कर दिया जाता है, तो न्यायालय परिवादी को आदेश की तारीख से साठ दिन के भीतर या परिवादी द्वारा पर्याप्त कारण दर्शित किए जाने पर तीस दिन से अनधिक की ऐसी और अवधि के भीतर, जिसका न्यायालय द्वारा निदेश दिया जाए, सुसंगत वित्तीय वर्ष के प्रारंभ पर प्रचलित बैंक दर पर ब्याज सहित इस प्रकार दी गई रकम का अपीलार्थी को प्रतिसंदाय करने का निदेश देगा ।"

धारा 148 की उपधारा (1) में अपील न्यायालय को अपीलार्थी/अभियुक्त को प्रतिकर की रकम का बीस प्रतिशत जमा करने का निदेश देने की शक्ति प्रदत्त की गई है । यह शक्ति एक भिन्न स्तर पर लागू होती है क्योंकि तद्धीन शक्ति का प्रयोग पूर्ण विचारण के पश्चात् अपीलार्थी/अभियुक्त को दोषसिद्ध किए जाने के पश्चात् ही किया जा सकता है ।

14. धारा 143क के मामले में शक्ति का प्रयोग यहां तक कि अभियुक्त को दोषी ठहराए जाने के पूर्व किया जा सकता है । धारा

143क की उपधारा (1) में धारा 138 के अधीन परिवाद में अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने के लिए अभियुक्त के विरुद्ध यहां तक कि अभियुक्त की दोषिता पर कोई न्यायनिर्णयन किए जाने से पूर्व ही एक कठोर आदेश पारित किए जाने का उपबंध किया गया है । इस शक्ति का प्रयोग आरंभ में ही यहां तक कि साक्ष्य अभिलिखित किए जाने से पूर्व किया जा सकता है । यदि 'में' (दे सकेगा) शब्द का निर्वचन 'शेल' (देगा) के रूप में किया जाए, तो इसके गंभीर परिणाम होंगे क्योंकि धारा 138 के अधीन प्रत्येक परिवाद में अभियुक्त को चैक की रकम के बीस प्रतिशत तक अंतरिम प्रतिकर का संदाय करना पड़ेगा । ऐसा निर्वचन अन्यायपूर्ण होगा और ऋजुता तथा न्याय की सुस्थिर धारणा के प्रतिकूल होगा । यदि ऐसा निर्वचन किया जाता है, तो उक्त उपबंध से स्वयमेव स्पष्ट मनमानेपन की बुराई प्रकट हो सकती है । इस उपबंध को संविधान के अनुच्छेद 14 का अतिक्रमणकारी अभिनिर्धारित किया जा सकता है । एक प्रकार से धारा 143क की उपधारा (1) अभियुक्त को उसकी दोषिता सिद्ध हो जाने के पूर्व ही दंडित करने का उपबंध करती है । धारा 143क के अधीन शक्ति के प्रयोग और वह भी विचारण में दोषिता का निष्कर्ष अभिलिखित किए जाने से पूर्व करने के गंभीर परिणामों पर विचार करते हुए इस उपबंध में प्रयुक्त शब्द दे "सकेगा" (मे) का अर्थ "देगा" (शेल) के रूप में नहीं किया जा सकता । इस उपबंध को एक निदेशात्मक न कि आज्ञापक के रूप में अभिनिर्धारित किया जाना होगा । अत: हमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 143क में प्रयुक्त दे "सकेगा" (मे) शब्द का अर्थ या निर्वचन "देगा" (शेल) के रूप में नहीं किया जा सकता । अत: धारा 143क की उपधारा (1) के अधीन शक्ति वैवेकिक है ।

15. यहां तक कि धारा 148 की उपधारा (1) में भी दे "सकेगा" (मे) शब्द का प्रयोग किया गया है । **सुरिन्द्र सिंह देशवाल** बनाम **विरेन्द्र गांधी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने धारा 148 के उपबंधों पर विचार करने के पश्चात् अभिनिर्धारित किया कि उसमें प्रयुक्त दे "सकेगा" (मे) शब्द का अर्थ साधारणतया "नियम" के रूप में या "देगा" (शेल) के रूप

[1] (2019) 11 एस. सी. सी. 341.

में किया जाना होगा । यह भी मत व्यक्त किया गया था कि जब अपील न्यायालय अभियुक्त को रकम जमा न करने का निदेश देने का विनिश्चय करता है तो उसे अवश्य कारणों को अभिलिखित करना चाहिए । **सुरिन्द्र सिंह देशवाल** (उपर्युक्त) वाले मामले में के उक्त विनिश्चय पर विचार करने के पश्चात् **जम्बू भंडारी** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य औद्योगिक विकास निगम लि. और अन्य**[1] वाले मामले में पैरा 6 में यह अभिनिर्धारित किया :–

> "6. इस न्यायालय द्वारा जो अभिनिर्धारित किया गया है वह यह है कि परक्राम्य लिखित अधिनियम की धारा 148 का एक उद्देश्यपरक निर्वचन किया जाना चाहिए । अत: प्रसामान्यत: अपील न्यायालय द्वारा धारा 148 में यथा उपबंधित जमा करने की शर्त को अधिरोपित करना न्यायोचित होगा । तथापि, ऐसे मामले में जहां अपील न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि बीस प्रतिशत जमा करने की शर्त अन्यायपूर्ण होगी या ऐसी शर्त अधिरोपित करना अपीलार्थी को अपील के अधिकार से वंचित करने की कोटि में आएगा, तो विनिर्दिष्ट रूप से अभिलिखित किए गए कारणों से अपवाद हो सकता है ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

15.1 जैसा कि पहले अभिनिर्धारित किया गया है, धारा 143क का अवलंब अभियुक्त को दोषसिद्ध करने से पूर्व लिया जा सकता है और इसलिए इस धारा में प्रयुक्त शब्द दे "सकेगा" (मे) का अर्थ कभी भी "देगा" (शेल) के रूप में नहीं लगाया जा सकता । धारा 148 की उपधारा (1) के अधीन अधिकारिता के प्रयोग के लिए लागू कसौटियों को कभी भी परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 143क की उपधारा (1) के अधीन अधिकारिता के प्रयोग के लिए लागू नहीं किया जा सकता ।

विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय विचार की जाने वाली बातें

16. जब न्यायालय परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 143क के अधीन आवेदन पर विचार करता है, तो न्यायालय को प्रथमदृष्ट्या

[1] (2023) 10 एस. सी. सी. 446.

परिवादी द्वारा बनाए गए मामले के गुणागुण और धारा 143क की उपधारा (1) के अधीन आवेदन के उत्तर में अभियुक्त द्वारा अभिवाक् की गई प्रतिरक्षा के गुणागुण का मूल्यांकन करना होगा । परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 139 के अधीन उपधारणा अंतरिम प्रतिकर के संदाय का निदेश देने के लिए स्वयमेव कोई आधार नहीं है । कारण यह है कि यह उपधारणा खंडनीय है । उपधारणा लागू करने का प्रश्न विचारण में उद्भूत होगा । केवल जब परिवादी एक प्रथमदृष्ट्या मामला सिद्ध करता है, तो अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का निदेश जारी किया जा सकता है । इस प्रक्रम पर, इस तथ्य पर भी विचार किया जा सकता है कि अभियुक्त वित्तीय संकट में है । यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए मामला बनता है, फिर भी न्यायालय को प्रदान किए जाने वाले अंतरिम प्रतिकर की मात्रा पर अपने मस्तिष्क का प्रयोग करना होगा । इस प्रक्रम पर भी, न्यायालय को विभिन्न बातों पर विचार करना होगा जैसे संव्यवहार की प्रकृति, अभियुक्त और परिवादी के बीच संबंध, यदि कोई है, और अभियुक्त की संदाय करने की प्रास्थिति । यदि अभियुक्त की प्रतिरक्षा को प्रथमदृष्ट्या एक विश्वसनीय प्रतिरक्षा पाया जाता है, तो न्यायालय अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने से इनकार करने के लिए विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकता है । हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि विचार किए जाने के लिए अपेक्षित बातें, जिनको हमने ऊपर उपवर्णित किया है, सर्वांगपूर्ण नहीं है । प्रस्तुत मामले के तथ्यों में कई अन्य कारक भी हो सकते हैं जैसे कि किसी सिविल वाद इत्यादि का लंबित रहना आदि । धारा 143क के अधीन किए गए निवेदन का विनिश्चय करते समय न्यायालय को अवश्य सभी सुसंगत कारकों पर विचार करने की बात को उपदर्शित करते हुए संक्षिप्त कारण अभिलिखित करने चाहिएं ।

17. वर्तमान मामले में, विचारण न्यायालय ने प्रथमदृष्ट्या मामले के प्रश्न पर और अन्य सुसंगत बातों पर विचार किए बिना यांत्रिक रूप से 10,00,000/- रुपए जमा करने का आदेश पारित किया है । यह सही है कि 10,00,000/- रुपए की राशि चैक की रकम के 5 प्रतिशत से कम है किंतु रकम का संदाय करने का निदेश मस्तिष्क का प्रयोग किए बिना

जारी किया गया है । यहां तक कि उच्च न्यायालय ने भी अपने मस्तिष्क का प्रयोग नहीं किया । अत: हम विचारण न्यायालय को अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए आवेदन पर नए सिरे से विचार करने का निदेश देते हैं । इसी बीच, अपीलार्थी द्वारा जमा की गई 10,00,000/- रुपए की रकम विचारण न्यायालय के पास ही जमा रहेगी ।

18. अत: आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाते हैं और परिवादी द्वारा परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 143क (1) के अधीन 2018 के परिवाद आवेदन सं. 1103 में किए गए आवेदन को न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, बोकारो की फाइल पर प्रत्यावर्तित किया जाता है । विद्वान् न्यायाधीश अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए आवेदन पर इस निर्णय में जो अभिनिर्धारित किया गया है उसको ध्यान में रखते हुए नए सिरे से सुनवाई करेगा और विनिश्चय करेगा । अपीलार्थी द्वारा जमा की गई 10,00,000/- रुपए की रकम का उक्त आवेदन का निपटारा हो जाने तक सावधि जमा में विनिधान किया जाएगा । आवेदन का निपटारा करने के समय पर विचारण न्यायालय उक्त रकम को प्रतिदाय करने और/या प्रत्याहृत करने और या विनिधान करने के संबंध में समुचित आदेश पारित करेगा ।

19. पहले ही जो अभिनिर्धारित किया गया है उसके अध्यधीन रहते हुए, मुख्य निष्कर्षों का निम्नलिखित सारांश दिया जा सकता है :–

क. धारा 143क की उपधारा (1) के अधीन शक्ति का प्रयोग वैवेकिक है । यह उपबंध निदेशात्मक है न कि आज्ञापक । इस उपबंध में प्रयुक्त दे "सकेगा" (मे) शब्द का अर्थान्वयन "करेगा" (शेल) के रूप में नहीं किया जा सकता ।

ख. धारा 143क के अधीन किए गए निवेदन का विनिश्चय करते समय न्यायालय को अवश्य सभी सुसंगत बातों पर विचार करने की बात को उपदर्शित करते हुए संक्षिप्त कारण अभिलिखित करने चाहिएं ।

ग. धारा 143ग के अधीन विवेकाधिकार का प्रयोग करने के लिए व्यापक मानदंड निम्नलिखित हैं –

i. न्यायालय को प्रथमदृष्ट्या परिवादी द्वारा बनाए गए मामले के गुणागुण और आवेदन के उत्तर में अभियुक्त द्वारा अभिवाक् की गई प्रतिरक्षा के गुणागुण का मूल्यांकन करना होगा । अभियुक्त के वित्तीय संकट की बात पर भी विचार किया जा सकता है ।

ii. अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने का निदेश केवल तब जारी किया जा सकता है यदि परिवादी ने एक प्रथमदृष्ट्या मामला सिद्ध किया हो ।

iii. यदि अभियुक्त की प्रतिरक्षा प्रथमदृष्ट्या विश्वसनीय पायी जाती है, तो न्यायालय अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए इनकार करने में विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकता है ।

iv. यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अंतरिम प्रतिकर प्रदान करने के लिए एक मामला बनता है, तो उसे प्रदान किए जाने वाले अंतरिम प्रतिकर की मात्रा पर भी अपने मस्तिष्क का प्रयोग करना होगा । ऐसा करते समय न्यायालय को कई कारकों जैसे संव्यवहार की प्रकृति, अभियुक्त और परिवादी के बीच संबंध, यदि कोई है, आदि पर विचार करना होगा ।

v. प्रस्तुत मामले के विशिष्ट तथ्यों में कई अन्य सुसंगत कारक भी हो सकते हैं जिनका सर्वांगपूर्ण रूप से उल्लेख नहीं किया जा सकता ।

20. यह अपील उपरोक्त निबंधनों के अनुसार भागत: मंजूर की जाती है ।

अपील भागत: मंजूर की गई ।

जस.

[2024] 2 उम. नि. प. 205

मणिकंदन

बनाम

राज्य मार्फत पुलिस निरीक्षक

[2011 की दांडिक अपील सं. 1609 और 2019 की दांडिक अपील सं. 407]

5 अप्रैल, 2024

न्यायमूर्ति अभय एस. ओका और न्यायमूर्ति पंकज मित्तल

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 – हत्या – सामान्य आशय – अभियुक्तों को मृतक की हत्या करने के लिए दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्टि – अपील – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा साक्षियों के साक्ष्य से यह दर्शित होता हो कि पुलिस द्वारा अभियोजन साक्षियों को न्यायालय के समक्ष उनका साक्ष्य अभिलिखित करने से एक दिन पूर्व पुलिस थाने में बुलाया गया और सिखाया गया कि न्यायालय में कैसे साक्ष्य देना है और स्वतंत्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी उपलब्ध होते हुए भी पुलिस द्वारा उन्हें विधारित किया जाना, अभियुक्तों द्वारा प्रतिरक्षा में घटनास्थल पर मौजूद न होने का अभिवाक् किया जाना और अभियोजन साक्षियों में से एक साक्षी द्वारा इस अभिवाक् को स्वीकार किया जाना, ऐसे तथ्य हैं जिनसे अभियोजन के पक्षकथन की असलियत के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न होने पर अभियुक्तों को संदेह का फायदा देते हुए उन्हें उनके विरुद्ध अभिकथित अपराधों से दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इस मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि मृतक अपने माता-पिता महालिंगम (अभि. सा. 1) और वीराम्मल (अभि. सा. 2) के साथ रहता था । मृतक ने अभियुक्त सं. 1 को अपने घर इडलियां पहुंचाने का अनुदेश दिया था । लगभग 9.00 बजे अपराह्न में मृतक घर आया और अपनी माता से पूछा कि क्या अभियुक्त सं. 1 ने इडलियां पहुंचाई थीं । यह पता चलने पर कि अभियुक्त सं. 1 ने इडलियां नहीं पहुंचाई थीं, वह तुरंत बाहर गया और अभियुक्त सं. 1 के मकान पर पहुंचा । वहां उसकी

अभियुक्त सं. 1 के साथ कहा-सुनी होने के कारण शोर-शराबा हुआ । शोर-शराबा सुनकर अभि. सा. 2 और मृतक का बहनोई (अभि. सा. 3) दौड़कर घटनास्थल पर आए । अभियुक्त सं. 2 भी घटनास्थल पर मौजूद था । इसके पश्चात् अभियुक्त सं. 1 अपने घर में गया, अपने साथ एक गंडासी लेकर आया और मृतक पर गंडासी से हमला कर दिया । पहला प्रहार मृतक की दांयी तर्जनी अंगुली पर लगा । इसके पश्चात्, मृतक निकटवर्ती बगीचे में भाग गया । अभियुक्तों ने उसका पीछा किया और अभियुक्त सं. 2 ने मृतक को पकड़ लिया और अभियुक्त सं. 1 ने गंडासी से मृतक की गर्दन पर हमला किया । दोनों अभियुक्त उसके पश्चात् भाग गए । विचारण न्यायालय द्वारा दोनों अभियुक्तों-अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया । अपील में उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थियों की दोषसिद्धि और आजीवन कारावास के दंडादेश की पुष्टि की गई । इससे व्यथित होकर, अभियुक्तों द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – मृतक की माता (अभि. सा. 2) ने अपनी मुख्य परीक्षा में यह मामला बनाने का प्रयत्न किया था कि अभियुक्तों ने उसकी पुत्रवधु के बारे में भला-बुरा कहा था । स्वीकृत रूप से, उसने पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए अपने कथन में ऐसा नहीं कहा था । सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अभियुक्त सं. 1 की ओर से अधिवक्ता द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में उसने कहा, "कल, मैं, मेरा पति और अन्य साक्षी हरिद्वारमंगलम पुलिस थाने गए थे । वहां पुलिस प्राधिकारियों ने हमें सिखाया कि कैसे साक्ष्य देना है ।" यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि अभि. सा. 1 से अभि. सा. 5 का साक्ष्य तारीख 20 नवंबर, 2008 को अभिलिखित किया गया था । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि तारीख 19 नवंबर, 2008 को पांच हितबद्ध साक्षियों, अभि. सा. 1 से अभि. सा. 5, जो मृतक के घनिष्ठ नातेदार थे, को पहले पुलिस थाने बुलाया गया था और पुलिस द्वारा सिखाया गया था कि अभियुक्तों के विरुद्ध कैसे अभिसाक्ष्य देना है । यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि अभियोजन पक्ष

ने इस पहलू पर पुन: परीक्षा करके साक्षियों से प्रश्न नहीं पूछे थे । अन्वेषण अधिकारी ने इसके लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया था । अत: इस न्यायालय को अवश्य इस आधार पर अग्रसर होना होगा कि पांचों साक्षियों को पहले पुलिस थाने में "सिखाया" गया था कि कैसे अभिसाक्ष्य देना है । यह न्यायालय के समक्ष उनके साक्ष्य को अभिलिखित करने के एक दिन पूर्व किया गया था । अभि. सा. 3 मृतक का बहनोई है । उसने अभिसाक्ष्य दिया था कि वह अभियुक्त सं. 1 के मकान के निकट रह रहा था । मुख्य परीक्षा में घटना के बारे में उसका वृत्तांत अभि. सा. 2 के वृत्तांत जैसा है । अभि. सा. 4 मृतक और अभियुक्तों के परिवार को जानता था, क्योंकि उसने कथन किया था कि अभियुक्त उसी कालोनी में रह रहे थे जिसमें वह रह रहा था । मुख्य परीक्षा में उसका घटना के बारे में वृत्तांत अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के वृत्तांत जैसा है । अभि. सा. 5 भी अभियुक्तों और मृतक के परिवार को जानता था क्योंकि वह भी उसी कालोनी में रह रहा था जिसमें अभियुक्त रह रहे थे । हमले की वास्तविक घटना के बारे में उसका वृत्तांत अन्य तीन प्रत्यक्षदर्शी अभियोजन साक्षियों जैसा है । अभि. सा. 3 से अभि. सा. 5 स्वीकृत रूप से मृतक के नातेदार थे । अभि. सा. 5 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया था कि उसने पांच व्यक्तियों के साथ अभियुक्त सं. 1 को मृतक पर हमला करने से रोकने का प्रयत्न किया था । अभि. सा. 5 द्वारा निर्दिष्ट किए गए अन्य पांच साक्षियों की साक्षियों के रूप में परीक्षा नहीं की गई थी । इस प्रकार, जो परिदृश्य उभरकर आता है वह यह है कि अभि. सा. 1 से अभि. सा. 5 को स्पष्ट रूप से विचारण न्यायालय के समक्ष उनका साक्ष्य अभिलिखित करने से एक दिन पूर्व उन्हें पुलिस थाने बुलाया गया था और एक विशिष्ट रीति में अभिसाक्ष्य देना सिखाया गया था । पुलिस थाने के अंदर साक्षियों को "सिखाने-पढ़ाने" के प्रभाव की कोई भी युक्तियुक्त रूप से कल्पना कर सकता है । तात्विक अभियोजन साक्षियों को सिखाने-पढ़ाने का पुलिस द्वारा किया गया यह एक घोर कृत्य है । वे सभी हितबद्ध साक्षी थे । उनके साक्ष्य को त्यक्त किया जाना होगा क्योंकि यहां सुस्पष्ट संभाव्यता है कि पुलिस द्वारा उक्त साक्षियों को पहले दिन सिखाया-पढ़ाया गया था । अतिशयोक्ति

नहीं है कि पुलिस द्वारा न्यायिक प्रक्रिया में इस प्रकार का हस्तक्षेप हैरान करने वाला है । यह पुलिस तंत्र द्वारा शक्ति का घोर दुरुपयोग करने की कोटि में आता है । पुलिस को अभियोजन साक्षी को सिखाने-पढ़ाने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता । यह आचरण तब और अधिक गंभीर हो जाता है जब अन्य साक्षियों को, यद्यपि उपलब्ध थे, विधारित कर लिया गया था । यह न्यायालय आश्चर्यचकित है कि दोनों न्यायालयों ने इस नाजुक पहलू की अनदेखी की है । यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि अभियुक्तों की प्रतिरक्षा, जैसाकि समस्त प्रतिपरीक्षा से देखा जा सकता है, यह थी कि वे घटना के समय पर घटनास्थल पर मौजूद नहीं थे । अभि. सा. 2 ने स्वीकार किया था कि अभियुक्त सं. 1 तिरुपुर नामक एक अन्य गांव में कार्य कर रहा था । अभियोजन पक्ष द्वारा उपलब्ध होते हुए भी स्वतंत्र साक्षियों की परीक्षा नहीं की गई थी । अत: अभियोजन पक्ष के विरुद्ध अवश्य प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए । अत: अभियोजन के पक्षकथन की असलियत के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न होता है । इस सारभूत संदेह का फायदा अपीलार्थियों को दिया जाना चाहिए । अपीलार्थियों को इस न्यायालय द्वारा जमानत पर छोड़े जाने से पूर्व उन्होंने दस वर्ष से अधिक का कारावास भुगत लिया था । अत: इस न्यायालय के सुविचारित मत में, सेशन न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करके गलती की है । (पैरा 6-9)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2023]	2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1084 : **राम मनोहर सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	3
[2023]	2023 आईएनएससी 648 = 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 882 : **संख्या 15138812वाई लास नायक गुरसेवक सिंह** बनाम **भारत संघ और एक अन्य** ;	3
[2006]	(2006) 4 एस. सी. सी. 653 : **संध्या जाधव** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	3

[2006] (2006) 11 एस. सी. सी. 444 :
पुलिचेर्ला नागराजू बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ; 3

[2004] (2004) 11 एस. सी. सी. 381 :
प्रकाश चंद बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** ; 3

[2003] (2003) 3 एस. सी. सी. 528 :
घपू यादव और अन्य बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ; 3

[2002] (2002) 3 एस. सी. सी. 327 :
सुखबीर सिंह बनाम **हरियाणा राज्य** । 3

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक अपील सं. 1609 (इसके साथ 2019 की दांडिक अपील सं. 407).

2009 की दांडिक अपील सं. 250 में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 15 सितंबर, 2009 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री जी. सिवबाला मुरुगन, मैलीसामी, सेल्वराज महेन्द्रन, सी. अधिकेसवन, पी. वी. हरि कृष्ण, पी. सोमा सुंदरम, आर. नेदुमारन, बी. रघुनाथ, (श्रीमती) एन. सी. कविता और विजय कुमार

प्रत्यर्थी की ओर से डा. जोसफ अरिस्टोटल एस., (सुश्री) शुभि भारद्वाज और (सुश्री) वैदेही रस्तोगी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय एस. ओका ने दिया ।

न्या. ओका – तथ्यात्मक पहलू

1. 2019 की दांडिक अपील सं. 407 में अपीलार्थी अभियुक्त सं. 1 है, और 2011 की दांडिक अपील सं. 1609 में अपीलार्थी अभियुक्त सं. 2 है । विचारण न्यायालय ने दोनों अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता,

1860 (संक्षेप में 'भारतीय दंड संहिता') की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया था । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थियों की दोषसिद्धि और आजीवन कारावास के दंडादेश की पुष्टि की ।

2. हम अभियोजन के पक्षकथन का संक्षेप में उल्लेख कर रहे हैं । मृतक का नाम बालामुरुगन है । वह अपने माता-पिता अभि. सा. 1 महालिंगम और अभि. सा. 2 वीराम्मल के साथ रहता था । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, मृतक ने अभियुक्त सं. 1 को अपने घर इडलियां पहुंचाने का अनुदेश दिया था । तारीख 4 अक्तूबर, 2007 को लगभग 9.00 बजे अपराह्न में मृतक घर आया और अपनी माता अभि. सा. 2 से पूछा कि क्या अभियुक्त सं. 1 ने इडलियां पहुंचाई थीं । यह पता चलने पर कि अभियुक्त सं. 1 ने इडलियां नहीं पहुंचाई थीं, वह तुरंत बाहर गया और अभियुक्त सं. 1 के मकान पर पहुंचा । यह प्रतीत होता है कि वहां उसकी अभियुक्त सं. 1 के साथ कहा-सुनी होने के कारण शोर-शराबा हुआ । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, शोर-शराबा सुनकर अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 (मृतक का बहनोई) दौड़कर घटनास्थल पर आए । अभियुक्त सं. 2 घटनास्थल पर मौजूद था । इसके पश्चात् अभियुक्त सं. 1 अपने घर में गया, अपने साथ एक गंडासी लेकर आया और मृतक पर गंडासी से हमला कर दिया । पहला प्रहार मृतक की दांयी तर्जनी अंगुली पर लगा । इसके पश्चात्, मृतक निकटवर्ती करुणानिधि नामक व्यक्ति के बगीचे में भाग गया । अभियुक्त ने उसका पीछा किया । अभियुक्त सं. 2 ने मृतक को पकड़ लिया और अभियुक्त सं. 1 ने गंडासी से मृतक की गर्दन पर हमला किया । दोनों अभियुक्त उसके पश्चात् भाग गए । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, अभि. सा. 2, अभि. सा. 3, अभि. सा. 4 (अभि. सा. 1 की बहिन) और अभि. सा. 5 (अभि. सा. 4 के पुत्र) ने घटना देखी थी ।

दलीलें

3. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने उल्लेख किया कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट से दर्शित होता है कि घटना

10.30 बजे अपराह्न में घटी थी । तथापि, मरणोत्तर परीक्षा के टिप्पण में वर्णित मृत्यु के अनुमानित समय से यह प्रतीत होता है कि घटना अवश्य 7.00 बजे अपराह्न से पूर्व घटी होगी । उनकी दूसरी दलील यह है कि यद्यपि अन्य स्वतंत्र साक्षी उपलब्ध थे, तो भी अभियोजन पक्ष ने मृतक के केवल उन घनिष्ठ नातेदार साक्षियों की परीक्षा कराई थी जो हितबद्ध और सिखाए-पढ़ाए गए साक्षी थे । अत: उनके परिसाक्ष्य को त्यक्त किया जाना चाहिए । प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उनकी अगली दलील यह है कि वह मृतक ही था जो अभियुक्त सं. 1 द्वारा इडलियां न पहुंचाने के बारे में पूछताछ करने के लिए अभियुक्त सं 1 के मकान पर गया था । मृतक के अभियुक्त सं. 1 के मकान पर जाने के कारण ही लड़ाई आरंभ हुई थी । उन्होंने दलील दी कि मरणोत्तर परीक्षा के टिप्पण से दर्शित होता है कि मृतक को उसकी गर्दन पर कटने की एक क्षति और उसकी अंगुली पर एक तुच्छ क्षति पहुंची थी । उन्होंने यह भी दलील दी कि मृतक और अभियुक्त सं. 1 के बीच अचानक लड़ाई हुई थी और उनके बीच हुई अचानक लड़ाई में अभियुक्त सं. 1 ने किसी पूर्व-चिंतन के बिना मृतक पर हमला किया था । अत: उन्होंने दलील दी कि यह ऐसा मामला है जहां भारतीय दंड संहिता की धारा 300 का अपवाद 4 लागू होगा और इस प्रकार यह भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के भाग 1 के अधीन अपराध की कोटि में आएगा । उन्होंने निम्नलिखित मामलों में इस न्यायालय के विभिन्न विनिश्चयों का अवलंब लिया :–

(i) **संख्या 15138812वाई लास नायक गुरसेवक सिंह** बनाम **भारत संघ और एक अन्य**[1] **;**

(ii) **राम मनोहर सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] **;**

(iii**) घपू यादव और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[3] **;**

(iv) **सुखबीर सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य**[4] **;**

---

[1] 2023 आईएनएससी 648 = 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 882.

[2] 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1084.

[3] (2003) 3 एस. सी. सी. 528.

[4] (2002) 3 एस. सी. सी. 327.

(v) **संध्या जाधव** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] ;

(vi) **प्रकाश चंद** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य**[2] ; और

(vii) **पुलिचेर्ला नागराजू** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[3] ।

4. प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने आग्रह किया कि अभि. सा. 2 से अभि. सा. 5 का साक्ष्य किसी तात्विक विरोधाभास और लोप से मुक्त है और इसलिए विश्वासोत्पादक है । उन्होंने दलील दी कि अभियुक्त सं. 1 मृतक के साथ विवाद होने के पश्चात् अपने मकान में गया, गंडासी लेकर आया और फिर मृतक पर हमला कर दिया, इस तथ्य से यह दर्शित होता है कि मृतक पर हमला करने का उसका स्पष्ट आशय था । विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि अभियुक्त सं. 1 द्वारा मृतक की तर्जनी अंगुली पर एक प्रहार किए जाने के पश्चात् मृतक ने भाग जाने का प्रयत्न किया । दोनों अभियुक्तों ने मृतक का पीछा किया, अभियुक्त सं. 2 ने मृतक को पकड़ लिया और इसके पश्चात् अभियुक्त सं. 1 ने मृतक की गर्दन पर गंडासी से घातक प्रहार किया । उन्होंने आग्रह किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 300 का अपवाद 4 इस मामले में लागू नहीं होगा ।

हमारा मत

5. हमने तात्विक अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य का परिशीलन किया । अभि. सा. 1 मृतक का पिता है, जिसने स्वीकृत रूप से घटना को देखा था । अभि. सा. 2 मृतक की माता है । अभि. सा. 2 ने अपनी मुख्य परीक्षा में यह कथन किया था :–

> "लगभग एक वर्ष पहले, मेरा पुत्र 9.00 बजे अपराह्न में मकान पर आया । मेरे पुत्र ने मुझसे पूछा कि क्या प्रथम अभियुक्त सिवा ने मुझे इडली दी थी । मैंने उसे बताया कि सिवा ने इडली नहीं दी थी । इसके तुरंत पश्चात् उसने कहा कि वह जाकर सिवा से पूछेगा कि उसने क्यों इडली नहीं दी और वहां से

---

[1] (2006) 4 एस. सी. सी. 653.

[2] (2004) 11 एस. सी. सी. 381.

[3] (2006) 11 एस. सी. सी. 444.

चला गया । इसके पश्चात्, कुछ समय पश्चात् हमें सिवा के मकान की तरफ से शोर सुनाई दिया । मैं भागकर गई और देखा । उस समय तक प्रथम अभियुक्त सिवा ने गंडासी से मेरे पुत्र को काट दिया था । वह कट तर्जनी अंगुली पर लगा था । तुरंत मेरे पुत्र ने बचाव किया और करुणानिधि के भू-क्षेत्र की ओर दौड़ा । तुरंत सिवा और मणिकंदन ने मेरे पुत्र का पीछा किया और उसके पीछे दौड़े तथा मणिकंदन ने मेरे पुत्र को पकड़ लिया । सिवा ने मेरे पुत्र की गर्दन को काट दिया । मेरा पुत्र झुका और नीचे गिर गया । मैं दौड़ी और चीखी 'अय्यो, अय्यो' । मेरा शोर सुनकर अन्नापट्टू, गणेशन, अरिवाझाजी, वेलायुधाम दौड़कर वहां आए । अभियुक्त ने अपने हाथ से गंडासी को फेंक दिया । फिर मैंने अपने पुत्र को देखा और उसे उठाया, मुझे पता चला कि मेरा पुत्र मर गया था ।'

6. उसने अपनी मुख्य परीक्षा में यह मामला बनाने का प्रयत्न किया था कि अभियुक्तों ने उसकी पुत्रवधु के बारे में भलाबुरा कहा था । स्वीकृत रूप से, उसने पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए अपने कथन में ऐसा नहीं कहा था । सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अभियुक्त सं. 1 की ओर से अधिवक्ता द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा में उसने कहा, "कल, मैं, मेरा पति और अन्य साक्षी हरिद्वारमंगलम पुलिस थाने गए थे । वहां पुलिस प्राधिकारियों ने हमें सिखाया कि कैसे साक्ष्य देना है ।" यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि अभि. सा. 1 से अभि. सा. 5 का साक्ष्य तारीख 20 नवंबर, 2008 को अभिलिखित किया गया था । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि तारीख 19 नवंबर, 2008 को पांच हितबद्ध साक्षियों, अभि. सा. 1 से अभि. सा. 5, जो मृतक के घनिष्ठ नातेदार थे, को पहले पुलिस थाने बुलाया गया था और पुलिस द्वारा सिखाया गया था कि अभियुक्तों के विरुद्ध कैसे अभिसाक्ष्य देना है । यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि अभियोजन पक्ष ने इस पहलू पर पुन परीक्षा करके साक्षियों से प्रश्न नहीं पूछे थे । अन्वेषण अधिकारी ने इसके लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया था । अत: हमें अवश्य इस आधार पर अग्रसर होना होगा कि पांचों साक्षियों को पहले पुलिस थाने में "सिखाया" गया था कि कैसे अभिसाक्ष्य देना है । यह न्यायालय के समक्ष उनके साक्ष्य को अभिलिखित करने के एक दिन पूर्व किया गया था ।

7. अभि. सा. 3 मृतक का बहनोई है । उसने अभिसाक्ष्य दिया था कि वह अभियुक्त सं. 1 के मकान के निकट रह रहा था । मुख्य परीक्षा में घटना के बारे में उसका वृत्तांत अभि. सा. 2 के वृत्तांत जैसा है । अभि. सा. 4 मृतक और अभियुक्तों के परिवार को जानता था, क्योंकि उसने कथन किया था कि अभियुक्त उसी कालोनी में रह रहे थे जिसमें वह रह रहा था । मुख्य परीक्षा में उसका घटना के बारे में वृत्तांत अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के वृत्तांत जैसा है । अभि. सा. 5 भी अभियुक्तों और मृतक के परिवार को जानता था क्योंकि वह भी उसी कालोनी में रह रहा था जिसमें अभियुक्त रह रहे थे । हमले की वास्तविक घटना के बारे में उसका वृत्तांत अन्य तीन प्रत्यक्षदर्शी अभियोजन साक्षियों जैसा है । अभि. सा. 3 से अभि. सा. 5 स्वीकृत रूप से मृतक के नातेदार थे । अभि. सा. 5 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया था कि उसने पांच व्यक्तियों के साथ अभियुक्त सं. 1 को मृतक पर हमला करने से रोकने का प्रयत्न किया था । अभि. सा. 5 द्वारा निर्दिष्ट किए गए अन्य पांच साक्षियों की साक्षियों के रूप में परीक्षा नहीं की गई थी ।

8. इस प्रकार, जो परिदृश्य उभरकर आता है वह यह है कि अभि. सा. 1 से अभि. सा. 5 को स्पष्ट रूप से उनका विचारण न्यायालय के समक्ष साक्ष्य अभिलिखित करने से एक दिन पूर्व उन्हें पुलिस थाने बुलाया गया था और एक विशिष्ट रीति में अभिसाक्ष्य देना सिखाया गया था । पुलिस थाने के अंदर साक्षियों को "सिखाने-पढ़ाने" के प्रभाव की कोई भी युक्तियुक्त रूप से कल्पना कर सकता है । तात्विक अभियोजन साक्षियों को सिखाने-पढ़ाने का पुलिस द्वारा किया गया यह एक घोर कृत्य है । वे सभी हितबद्ध साक्षी थे । उनके साक्ष्य को त्यक्त किया जाना होगा क्योंकि यहां सुस्पष्ट संभाव्यता है कि पुलिस द्वारा उक्त साक्षियों को पहले दिन सिखाया-पढ़ाया गया था । अतिशयोक्ति नहीं है कि पुलिस द्वारा न्यायिक प्रक्रिया में इस प्रकार का हस्तक्षेप हैरान करने वाला है । यह पुलिस तंत्र द्वारा शक्ति का घोर दुरुपयोग करने की कोटि में आता है । पुलिस को अभियोजन साक्षी को सिखाने-पढ़ाने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता । यह आचरण तब और अधिक गंभीर हो

जाता है जब अन्य साक्षियों को, यद्यपि उपलब्ध थे, विधारित कर लिया गया था । हम आश्चर्यचकित हैं कि दोनों न्यायालयों ने इस नाजुक पहलू की अनदेखी की है । यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि अभियुक्तों की प्रतिरक्षा, जैसाकि समस्त प्रतिपरीक्षा से देखा जा सकता है, यह थी कि वे घटना के समय पर घटनास्थल पर मौजूद नहीं थे । अभि. सा. 2 ने स्वीकार किया था कि अभियुक्त सं. 1 तिरुपुर नामक एक अन्य गांव में कार्य कर रहा था । अभियोजन पक्ष द्वारा उपलब्ध होते हुए भी स्वतंत्र साक्षियों की परीक्षा नहीं की गई थी । अत: अभियोजन पक्ष के विरुद्ध अवश्य प्रतिकूल निष्कर्ष निकालना चाहिए । अत: अभियोजन के पक्षकथन की असलियत के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न होता है । इस सारभूत संदेह का फायदा अपीलार्थियों को दिया जाना चाहिए । अपीलार्थियों को इस न्यायालय द्वारा जमानत पर छोड़े जाने से पूर्व उन्होंने दस वर्ष से अधिक का कारावास भुगत लिया था ।

9. अत: हमारे सुविचारित मत में सेशन न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करके गलती की है । आक्षेपित निर्णय और आदेश अपास्त किए जाते हैं और अपीलार्थियों को उनके विरुद्ध अभिकथित अपराधों से दोषमुक्त किया जाता है । उनके जमानत बंधपत्र रद्द हो जाएंगे ।

10. तमिलनाडु राज्य के पुलिस महा निदेशक संबंधित पुलिस थाने में अभि. सा. 1 से अभि. सा. 5 को सिखाने-पढ़ाने के लिए पुलिस पदधारियों के आचरण की जांच करवाएंगे । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि दोषी पदधारियों के विरुद्ध विधि के अनुसार उचित कार्रवाई आरंभ की जाएगी ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2024] 2 उम. नि. प. 216

विपिन साहनी और एक अन्य

बनाम

केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो

[2024 की दांडिक अपील सं. 1980]

8 अप्रैल, 2024

न्यायमूर्ति अनिरुद्ध बोस और न्यायमूर्ति संजय कुमार

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 239, 397 और 482 [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 420 और 120ख तथा परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 131] – उन्मोचन – उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियां – अभियुक्तों-अपीलार्थियों द्वारा शैक्षणिक संस्थान स्थापित करने के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के समक्ष अनुमोदन के लिए आवेदन फाइल किया जाना – अभियुक्तों-अपीलार्थियों द्वारा आवेदन में बैंक से लिए गए ऋण और ऋण को प्रतिभूत करने के लिए भूमि को बंधक किए जाने का उल्लेख किया जाना – अनुमोदन प्रदान किया जाना – अभियुक्तों-अपीलार्थियों द्वारा उसी भूमि पर अन्य शैक्षणिक संस्थान स्थापित करने के लिए किए गए आवेदनों में बैंक के बकाया ऋण का उल्लेख न किया जाना – संस्थानों के लिए अनुमोदन प्रदान किया जाना – एआईसीटीई के पदधारियों द्वारा अभियुक्तों के प्रति असम्यक् पक्षपात दिखाकर अनुमोदन प्रदान करने के लिए सतर्कता आयुक्त को एक अनाम शिकायत प्राप्त होना – षड्यंत्र करके प्रवंचनापूर्ण साधनों द्वारा अनुमोदन प्राप्त करने के लिए केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध मामला रजिस्ट्रीकृत किया जाना – अभियुक्तों द्वारा उन्मोचन के लिए आवेदन फाइल किया जाना – आवेदन खारिज हो जाना – पुनरीक्षण में सेशन न्यायालय द्वारा मजिस्ट्रेट को मामले की नए सिरे से सुनवाई करने के लिए मामला प्रतिप्रेषित किया जाना – मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्तों को उन्मोचित कर दिया जाना – केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा

उन्मोचन के आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण फाइल करने की परिसीमा अवधि के बहुत बाद में उच्च न्यायालय के समक्ष धारा 482 के अधीन आवेदन फाइल किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा उन्मोचन आदेश को अभिखंडित किया जाना – संधार्यता – मामले के तथ्यों के आधार पर यह दर्शित होता है कि एआईसीटीई को अनुमोदन प्रदान करने के लिए भ्रमित नहीं किया गया था क्योंकि उसने कभी यह दावा नहीं किया था कि उसे कोई गलत जानकारी दी गई थी, इसलिए षड्यंत्र करने के लिए जानबूझकर जानकारी छिपाने और एआईसीटीई के साथ छल करने के अभिकथित अपराधों के लिए आवश्यक संघटकों का अभाव होने के कारण अभियुक्त उन्मोचन के लिए हकदार थे और केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा पुनरीक्षण फाइल करने के लिए परिसीमा की अवधि की बाधा से बचते हुए धारा 482 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को उच्च न्यायालय द्वारा धारा 397 के अधीन संपरिवर्तित करके अभियुक्तों के उन्मोचन के आदेश को अभिखंडित करना उचित नहीं कहा जा सकता ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थियों ने सनसाइन एजुकेशनल एंड डेवलेपमेंट सोसाइटी, नोएडा, उत्तर प्रदेश स्थापित की और इसे सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत कराया । अपीलार्थी सं. 1 उक्त सोसाइटी का अध्यक्ष जबकि उसकी पत्नी अर्थात् अपीलार्थी सं. 2 इसकी सचिव थी । सोसाइटी ने ग्रेटर नोएडा, उत्तर प्रदेश में ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण, गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश से शैक्षणिक संस्थाओं को स्थापित करने के लिए 90 वर्ष के पट्टे पर 4.90 एकड़ भूमि अर्जित की । सोसाइटी ने पट्टाकृत भूमि में से एक एकड़ में कारबार प्रबंधन में स्नातकोत्तर डिप्लोमा पाठ्यक्रम (पीजीडीएम) का प्रस्ताव करते हुए 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' स्थापित करने के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के अनुमोदन की ईप्सा करते हुए एक आवेदन फाइल किया । इस आवेदन में सोसाइटी ने प्रकटित किया कि उसके द्वारा कारपोरेशन बैंक से 5.05 करोड़ का ऋण लिया गया है और बकाया ऋण 3 करोड़ से ऊपर है । उसने आवेदन के खंड 6(v) के उत्तर के खाने में 'हां' का निशान लगाते हुए यह भी प्रकटित किया कि ऋण भूमि के विरुद्ध/इसे बंधक करके लिया गया

है । तथापि, आवेदन के प्रथम पृष्ठ में इस प्रश्न के सामने – 'बैंक के पास बंधक' है – हां/नहीं, उत्तर में 'नहीं' कहा गया । इस प्रकार, स्वयं आवेदन पत्र में एक स्पष्ट विरोधाभास था । ऐसा होते हुए भी अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) द्वारा 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' आरंभ करने के लिए अनुमोदन दिया गया । उसके पश्चात्, सोसाइटी ने पीजीडीएम पाठ्यक्रम का प्रस्ताव करके 'बिजनेस स्कूल फॉर वूमेन' स्थापित करने की ईप्सा करते हुए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को एक अन्य आवेदन प्रस्तुत किया । एक दिन बाद, सोसाइटी ने 'इंटरनेशनल बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' नामक एक तीसरा संस्थान आरंभ करने के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) से अनुमोदन की ईप्सा करते हुए फिर एक अन्य आवेदन फाइल किया । पहला और तीसरा आवेदन अपीलार्थी सं. 1 द्वारा सोसाइटी की ओर से इसका अध्यक्ष होने के नाते जबकि दूसरा आवेदन अपीलार्थी सं. 2 द्वारा इसका सचिव होने के नाते फाइल किया गया था । बाद के इन दो आवेदनों में सोसाइटी ने यह उल्लेख नहीं किया कि पट्टाकृत भूमि को बंधक किया गया है अपितु उसने इस तथ्य का प्रकटन किया कि उसे उसी परिसर से एक अन्य संस्थान का संचालन करने के लिए पहले ही अनुमोदन प्रदान किया गया था । अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) द्वारा उक्त भूमि में से 0.8 एकड़ में 'बिजनेस स्कूल फॉर वूमेन' आरंभ करने के लिए अनुमोदन प्रदान किया गया । उसके द्वारा पट्टाकृत भूमि में 'इंटरनेशनल बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' आरंभ करने के लिए भी अनुमोदन दिया गया । इसी दौरान, मुख्य सतर्कता आयुक्त को यह अभिकथन करते हुए एक अनाम शिकायत की गई कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के पदधारियों ने सोसाइटी के प्रति अनुचित पक्षपात दिखाया है । इसके आधार पर मुख्य सतर्कता आयुक्त ने मामले को अन्वेषण के लिए केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को भेज दिया । कानपुर स्थित केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के क्षेत्रीय अधिकारी ने थाना अधिकारी, पुलिस थाना ग्रेटर नोएडा को अन्वेषण के लिए मामला रजिस्ट्रीकृत करने के लिए एक पत्र भेजा । किंतु गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश की जिला

पुलिस ने राय व्यक्त की कि शिकायत से प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत करना और/या अन्वेषण के लिए अग्रसर होना औचित्यपूर्ण नहीं है क्योंकि कोई संज्ञेय अपराध नहीं बनता है । तथापि, बाद में पुलिस थाना, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, नई दिल्ली की फाइल पर भारतीय दंड संहिता की धारा 420 और धारा 120ख के साथ-साथ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(घ) के साथ पठित धारा 13(2) के अधीन एक अपराध मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । यह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अपीलार्थियों और अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के अनाम पदधारियों के विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत की गई थी जिसमें यह अभिकथन किया गया कि अपीलार्थियों ने अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) से उसकी अनुमोदन प्रक्रिया का अतिक्रमण करते हुए प्रवंचनापूर्ण उपाय करके अनुमोदन अभिप्राप्त किया था । इस उपबंध के अनुसार, शैक्षणिक संस्थान आरंभ करने के लिए अनुमोदित भूमि को विल्लंगमित नहीं किया जाना चाहिए । अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा केवल अपीलार्थियों को अभियुक्तों के रूप में नामित करते हुए भारतीय दंड संहिता की धारा 420 और धारा 120ख के अधीन अपराधों के लिए आरोप पत्र फाइल किया गया । अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के किसी पदधारी पर सोसाइटी के संस्थानों को अनुमोदन प्रदान करने में आपराधिकता का आरोप नहीं लगाया गया था । अपीलार्थियों ने दोषारोपण से व्यथित होकर, उनके विरुद्ध दांडिक कार्यवाहियों को अभिखंडित करने की ईप्सा करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय में आवेदन फाइल किया । उच्च न्यायालय ने उनके अभिवाक् को स्वीकार किया और उक्त कार्यवाहियों को अभिखंडित कर दिया । तथापि, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा इसके विरूद्ध उच्चतम न्यायालय में दांडिक अपील फाइल की गई और उच्चतम न्यायालय द्वारा इस आदेश को अपास्त कर दिया गया किंतु यह स्पष्ट किया कि विचारण न्यायालय उठाए गए विवाद्यक के गुणागुण पर आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर विचार करने के लिए स्वतंत्र होगा । उसके पश्चात्, विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को

जमानत दे दी । अपीलार्थियों द्वारा विद्वान् विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो न्यायालय, गाजियाबाद के समक्ष उन्मोचन के लिए आवेदन फाइल किया गया किंतु विद्वान् मजिस्ट्रेट ने उनके अभिवाक् को नामंजूर कर दिया और आरोप विरचित करने के लिए मामले को सूचीबद्ध किए जाने का निदेश दिया । अपीलार्थियों ने तदुपरांत दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, गाजियाबाद के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा पुनरीक्षण आवेदन को मंजूर किया गया और विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा पारित किए गए आदेश को अपास्त कर दिया गया और पुनरीक्षण आदेश में की गई मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए मामले की नए सिरे से सुनवाई करने के लिए प्रतिप्रेषित किया । परिणामत:, विद्वान् मजिस्ट्रेट ने मामले की पुन: सुनवाई की और अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 420 और धारा 120ख के अधीन अभिकथित अपराध से उन्मोचित करते हुए आदेश पारित किया । इस उन्मोचन आदेश के पारित होने के लगभग डेढ़ वर्ष पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा इसे इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती देते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन फाइल किया गया । उच्च न्यायालय द्वारा इसे मंजूर किया गया । अपीलार्थियों द्वारा व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 420 के अधीन अपराध को सिद्ध करने के लिए अनिवार्य है अपीलार्थियों द्वारा छल का कार्य करना और तद्द्वारा उस व्यक्ति को, जिसे प्रवंचित किया गया है अर्थात् अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को बेईमानी से कोई संपत्ति परिदत्त करने के लिए उत्प्रेरित करना । अत: अपीलार्थियों द्वारा सोसाइटी के लिए और उसकी ओर से आवेदन करते समय या तो तात्विक जानकारी छुपाई गई हो या असत्य जानकारी अभिदर्शित की गई हो जिससे कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को ऐसे बेईमानीपूर्ण साधनों द्वारा इसके शैक्षणिक संस्थानों के लिए अनुमोदन प्रदान करने के लिए उत्प्रेरित किया जा

सके । इसके अतिरिक्त, चूंकि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के किसी पदधारी को अपराध में आलिप्त नहीं किया गया है इसलिए आरोप पत्र के अनुसार भारतीय दंड संहिता की धारा 120ख के अधीन अभिकथित 'आपराधिक षड्यंत्र' केवल अपीलार्थियों पर अभ्यारोपणीय है । इस आलोक में विचार करते हुए, यह न्यायालय उल्लेख कर सकता है कि अपीलार्थी सं. 1 द्वारा 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' आरंभ करने के लिए तारीख 22 जनवरी, 2007 को प्रस्तुत किए गए पहले आवेदन में इस तथ्य का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि इस संस्थान को स्थापित करने के लिए लगभग 5 एकड़ माप की पट्टाकृत भूमि को प्रयुक्त किया जाएगा और कारपोरेशन बैंक से 5.75 करोड़ रुपए का सावधि ऋण लिया गया है । प्रति संदाय किया जाने वाला बकाया ऋण भी 3 करोड़ से ऊपर का दर्शाया गया था । आवेदन का खंड 6 'भूमि' से संबंधित है और तद्धीन यह उल्लेख किया गया था कि सरकार की लगभग 5 एकड़ पट्टाकृत भूमि का महाविद्यालय को स्थापित करने के लिए प्रयुक्त किया जाना आशयित है । इसके अतिरिक्त, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने इस संस्थान को आरंभ करने के लिए तारीख 17 अगस्त, 2007 को अनुमोदन प्रदान करना उपयुक्त समझा । यह अनुमोदन अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) की 'अनुमोदन प्रक्रिया 2006' में इस उपबंध के बावजूद दिया गया था कि प्रस्ताव प्रस्तुत करने की तारीख को या इससे पूर्व भूमि किसी प्रकार के विल्लंगम से मुक्त आवेदक सोसाइटी/न्यास के नाम में रजिस्ट्रीकृत होनी चाहिए । तथापि, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के किसी पदधारी को किसी गलती के लिए आलिप्त नहीं किया गया । सोसाइटी के 'बिजनेस स्कूल फॉर वूमेन' के लिए दूसरे आवेदन पर आते हैं जिसके लिए खंड 6 के सामने उतनी ही 5 एकड़ भूमि को दर्शाया गया था किंतु बकाया बैंक ऋण प्राप्त करने के लिए भूमि को बंधक करने का प्रकटन नहीं किया गया था । खंड 6(v) के अधीन सोसाइटी यह उल्लेख करने में असफल रही थी कि भूमि के हक के विरुद्ध ऋण लिया गया था/उसे बंधक किया गया था और 'हां' की बजाय 'नहीं' के सामने निशान लगाया था । ये वे कार्य हैं जिनके आधार पर अपीलार्थियों के विरुद्ध केंद्रीय

अन्वेषण ब्यूरो का मामला गठित किया गया था । जैसाकि इसमें पहले ही उल्लेख किया गया है, यह दावा अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने नहीं किया था कि उसे प्रवंचित किया गया था और अपीलार्थियों द्वारा सोसाइटी की ओर से कार्य करते हुए तात्विक जानकारी को छिपाने के कारण बेईमानी से अनुमोदन प्रदान करने के लिए उत्प्रेरित किया था । वह पर-पक्षकार था जिसने अपने नाम का उल्लेख नहीं किया था और उसके आधार पर अन्वेषण आरंभ किया गया था । इसके अतिरिक्त, आरोप पत्र में अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के किसी पदधारी को आलिप्त न करके और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के उपबंधों को निकालकर केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने पाया कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के पदधारी कतई सह-अपराधी नहीं थे और उन्हें क्लीन चिट दी गई थी । इस प्रक्रम पर, यह न्यायालय यह उल्लेख कर सकता है कि यद्यपि अपीलार्थी आरंभ में उच्च न्यायालय द्वारा कार्यवाहियों को अभिखंडित कराने में सफल रहे थे, तो भी इस न्यायालय ने उक्त आदेश को उलट दिया था, किंतु विचारण न्यायालय को आरोप विरचित करने के समय पर उठाए गए विवाद्यक की गुणागुण के आधार पर परीक्षा करने की स्वतंत्रता दी गई थी । इस न्यायालय द्वारा दी गई इस स्वतंत्रता के अनुसरण में विद्वान् विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के अधीन शक्ति का प्रयोग किया और अपीलार्थियों को उन्मोचित कर दिया । इस कवायद की विधिमान्यता को उच्च न्यायालय के समक्ष प्रश्नगत किया गया था जिसे अंततोगत्वा अपीलार्थियों के विरुद्ध अभिनिर्धारित किया गया । महत्वपूर्ण रूप से, उच्च न्यायालय अपीलार्थियों द्वारा इस आशय के आरंभिक आक्षेप को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था कि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को उन्मोचन आदेश के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन एक पुनरीक्षण आवेदन फाइल करना चाहिए था और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन आवेदन नहीं कर सकता था । इस संबंध में, उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को सदैव दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन के

रूप में समझ सकता है और इसलिए अपीलार्थियों के आक्षेप में कोई सार नहीं है । गुणागुण के आधार पर उच्च न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि अपीलार्थियों ने सुसंगत जानकारी को जानबूझकर पूरी तरह से यह जानते हुए विधारित किया था कि यदि भूमि किसी प्रकार से विल्लंगमित होगी, तो शैक्षणिक संस्थानों को स्थापित करने के लिए अनुमोदन से इनकार कर दिया जाएगा । ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए उच्च न्यायालय ने उन्मोचन आदेश को अपास्त कर दिया । तथापि, इस न्यायालय की यह सुविचारित राय है कि अपीलार्थियों द्वारा जानकारी को जानबूझकर विधारित करने के बारे में उच्च न्यायालय के निष्कर्ष को प्रस्तुत तथ्यों के आधार पर स्वीकार नहीं किया जा सकता । यह अभिलेख पर है कि तारीख 22 जनवरी, 2007 को अपीलार्थी सं. 1 द्वारा सोसाइटी की ओर से फाइल किए गए प्रथम आवेदन में यह प्रकटीकरण किया गया था कि एक बैंक ऋण अभी बकाया है और लगभग 5 एकड़ विषयांतर्गत भूमि ऋण को प्रतिभूत करने के लिए बंधक की गई है । इसके पश्चात् अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के पदधारियों द्वारा स्थल निरीक्षण सहित संवीक्षा और सत्यापन किया गया और उसके पश्चात् 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' आरंभ करने के लिए तारीख 17 अगस्त, 2007 को अनुमोदन प्रदान किया गया । इस बाबत अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के पदधारियों पर कोई गलत कार्य करने का अभ्यारोपण नहीं किया गया है । 'बिजनेस स्कूल फॉर वूमेन' के लिए तारीख 17 अक्तूबर, 2007 के बाद के आवेदन और 'इंटरनेशनल बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' के लिए तारीख 28 अक्तूबर, 2007 के आवेदन में ही बकाया बैंक ऋण और इसके संबंध में भूमि को बंधक करने के बारे में सही जानकारी का उल्लेख नहीं किया गया था । तथापि, सभी तीनों आवेदनों में लगभग 5 एकड़ भूमि का उल्लेख किया गया था और यह नहीं कहा जा सकता है कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) इस तथ्य से अनभिज्ञ थी कि आवेदन करने के समय पर उक्त भूमि विल्लंगम के अधीन थी । विशेष रूप से, बाद के दोनों आवेदनों में इस तथ्य का उल्लेख किया गया था कि एक संस्थान को पहले ही वर्ष 2017 में उसी परिसर से संचालित करने का अनुमोदन प्रदान किया गया है । यह स्पष्ट रूप से 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' के

संदर्भ में था और इसके लिए आवेदन में ऋण और भूमि पर विल्लंगम जारी रहने का प्रकटीकरण किया गया था । इसके अतिरिक्त, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) का यह भी पक्षकथन नहीं था कि उसे कोई भ्रम था जिसके द्वारा उसे प्रश्नगत महाविद्यालयों के स्थापन के लिए अनुमोदन प्रदान करने के लिए बेईमानी से उत्प्रेरित किया गया था । 'बेईमानी से कोई कार्य करने या न करने के लिए उत्प्रेरित करने' की बात केवल वही पक्षकार कह सकता है जो स्वयं पक्षकार है और जब अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने ऐसी कोई शिकायत नहीं की थी इसलिए अन्य व्यक्ति चोरी-छिपे यह नहीं कह सकते थे कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को बेईमानी से कोई कार्य करने के लिए उत्प्रेरित किया गया था । प्रस्तुत मामले में इस तथ्य का प्रकटीकरण किया गया था कि विषयांतर्गत भूमि को बैंक के ऋण को प्रतिभूत करने के लिए बंधक किया गया था किंतु इसके बावजूद, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' के लिए अनुमोदन प्रदान किया और उसने कभी यह शिकायत नहीं की कि ऐसा इस विषय में गलत जानकारी देने के कारण किया गया था । इस प्रकार, छल के अपराध को सिद्ध करने के लिए आवश्यक अध्यापेक्षा का अभाव है । अपीलार्थियों की ओर से द्वितीय और तृतीय आवेदनों को और प्रथम आवेदन के भी एक भाग को भरने में मात्र असावधानी को, स्वीकृत तथ्यात्मक स्थिति के आधार पर, जानबूझकर प्रवंचना करने से उत्प्रेरित नहीं माना जा सकता जिससे कि आपराधिक आरोप लगाए जा सकें । इसके अतिरिक्त, ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी जानबूझकर अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को मिथ्या जानकारी देने के लिए भानपूर्वक सहमत हो रहे थे या षड्यंत्र कर रहे थे जिससे कि उनके महाविद्यालयों के लिए अनुमोदन प्राप्त किया जा सके । जैसाकि पहले ही उल्लेख किया गया है, अपीलार्थी सं. 1 ने प्रथम आवेदन बैंक के ऋण और पट्टाकृत भूमि पर बंधक होने का सुसंगत ब्यौरा देते हुए फाइल किया था किंतु उसके द्वारा फाइल किए गए तृतीय आवेदन में वह ऐसा करने में असफल रहा । अपीलार्थी सं. 2 ने द्वितीय आवेदन इसी प्रकार के अप्रकटीकरण के साथ फाइल किया

था, किंतु किसी प्रकार का ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी इस विषय में जानबूझकर और परस्पर मौनानुकूलता से प्रवंचना करने का आश्रय ले रहे थे । अत: भारतीय दंड संहिता की धारा 120ख के अधीन आरोप भी न्यायिक संवीक्षा में खरा नहीं उतरता है । (पैरा 10-17, 21 और 22)

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल किए गए केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के आवेदन की संधार्यता के बारे में अपीलार्थियों द्वारा किए गए आक्षेप के संबंध में यह उल्लेख करना होगा कि परिसीमा अधिनियम, 1963 की अनुसूची में अनुच्छेद 131 के अनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन दांडिक पुनरीक्षण, चाहे उच्च न्यायालय के समक्ष या सेशन न्यायालय के समक्ष, फाइल करने की परिसीमा अवधि 90 दिन है । तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का आश्रय लेने के लिए कोई परिसीमा विहित नहीं की गई है और इसका किसी भी समय आश्रय लिया जा सकता है । यह अभिलेख पर है कि जब विद्वान् विशेष मजिस्ट्रेट, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो न्यायालय ने पहली बार में उन्मोचन के लिए अपीलार्थियों के आवेदन को खारिज किया था तब उन्होंने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन सेशन न्यायालय के समक्ष एक पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया था और मामले को नए सिरे से सुनवाई के लिए प्रतिप्रेषित किया गया था । तथापि, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने तब इस प्रक्रिया को अपनाना उचित नहीं समझा जब विद्वान् विशेष मजिस्ट्रेट द्वारा दूसरे दौर में अपीलार्थियों के उन्मोचन के लिए आवेदन को मंजूर किया गया था । केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने 90 दिन की परिसीमा अवधि समाप्त होने के बहुत बाद उच्च न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । यह आवेदन स्पष्ट रूप से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन फाइल करने के लिए परिसीमा की बाधा से छुटकारा पाने के लिए फाइल किया था । यह न्यायालय यह भी उल्लेख कर सकता है कि यदि कोई पुनरीक्षण विधिपूर्वक उच्च न्यायालय के समक्ष संस्थित किया जाता है किंतु तत्पश्चात् किसी अन्य आधार पर

उसे संधार्य नहीं पाया जाता है, तो उच्च न्यायालय उस मामले में न्याय करने के लिए उसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए आवेदन के रूप में समझ सकता है । तथापि, यह विपर्यस्त अनुरूपता सभी मामलों में लागू नहीं हो सकती और उच्च न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए किसी आवेदन को, परिसीमा सहित अन्य मुद्दों के प्रतिनिर्देश किए बिना, इसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन फाइल किए गए आवेदन के रूप में संपरिवर्तित करने या समझने के लिए स्वतंत्र नहीं होगा । जब केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को पुनरीक्षण फाइल करने का विनिर्दिष्ट उपचार उपलब्ध था, तो वह इसकी अनदेखी नहीं कर सकता था और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन आवेदन फाइल नहीं कर सकता था । अत: यह न्यायालय इस आधार पर भी उसे अपीलार्थियों के पक्ष में पाता है । उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर इस न्यायालय की यह राय है कि विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के अधीन शक्ति का प्रयोग करके और अपीलार्थियों को 2012 के मामला सं. 456 के संबंध में दांडिक कार्यवाहियों से उन्मोचित करके पूरी तरह से न्यायोचित किया था । उच्च न्यायालय ने बल्कि एक तकनीकी दृष्टिकोण अपनाया और व्यावहारिक रूप से यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी जानबूझकर सुसंगत जानकारी विधारित करने के दोषी थे जिससे कि प्रवंचनापूर्ण उपायों द्वारा अनुमोदन प्राप्त किया जा सके । उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष का स्वीकृत तथ्यों से समर्थन नहीं होता है, जिनसे आरंभ में ही बंधक के बारे में प्रकटीकरण किया जाना उपदर्शित होता है जब प्रथम आवेदन फाइल किया गया था और इसलिए यह निष्कर्ष निकलने की कोई संभाव्यता नहीं है कि अपीलार्थियों ने अनुमोदनों को प्राप्त करने के लिए तथ्यों को छिपाए जाने का एक अवैध कृत्य करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 120क के निबंधनों के अनुसार षड्यंत्र किया था । इसके अतिरिक्त, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने स्वयं कभी यह दावा नहीं किया था कि उसे ऐसे अनुमोदन प्रदान करने के लिए बेईमानी से उत्प्रेरित किया गया था और यह आवश्यक कड़ी पूरी तरह गायब है, जिसके द्वारा छल करने

का कोई ऐसा आपराधिक आरोप अपीलार्थियों के विरुद्ध संधार्य किया जा सके । अत: इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन 2021 के आवेदन सं. 11426 में तारीख 20 जनवरी, 2023 को पारित किए गए आक्षेपित आदेश को अपास्त किया जाता है और विद्वान् विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो न्यायालय, गाजियाबाद द्वारा 2012 के मामला सं. 456 में पारित किए गए उन्मोचन आदेश को प्रत्यावर्तित किया जाता है । परिणामत:, अपीलार्थियों को 2011 के आपराधिक मामला सं. 219(ई)0016 में भारतीय दंड संहिता की धारा 420 और धारा 120ख के अधीन अभिकथित अपराध से उन्मोचित किया जाता है । (पैरा 23, 24, 25 और 26)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2013]	(2013) 7 एस. सी. सी. 789 : **मोहित** उर्फ **सोनू और एक अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** ;	23
[2010]	(2010) 10 एस. सी. सी. 361 : **वी. पी. श्रीवास्तव** बनाम **इंडियन एक्सप्लोसिव लि. और अन्य** ;	20
[1970]	(1970) 2 एस. सी. सी. 740 : **रामजस** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ।	19

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2024 की दांडिक अपील सं. 1980.

2021 की दांडिक अपील सं. 482 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 20 जनवरी, 2023 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री मुकुल रोहतगी, ज्येष्ठ अधिवक्ता, जयदीप गुप्ता, ज्येष्ठ अधिवक्ता, समीर रोहतगी, अनुव्रत शर्मा और (सुश्री) अल्का सिन्हा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री विक्रमजीत बनर्जी, अपर महा सालिसिटर, मुकेश कुमार मरोड़िया, पद्मेष मिश्रा, अर्कज कुमार, अनुकल्प जैन, (सुश्री) बाणी दीक्षित और मेरुसागर सामंत्रे

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति संजय कुमार ने दिया ।

न्या. कुमार – इजाजत दी गई ।

2. विद्वान् विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो न्यायालय, गाजियाबाद ने पुलिस थाना केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, ईओ-1, नई दिल्ली की फाइल पर रजिस्ट्रीकृत आरसी-2192011(ई)0016 से उद्भूत 2012 के मामला सं. 456 में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए तारीख 31 अगस्त, 2019 के आदेश द्वारा इस अपील में अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 420 और धारा 120ख के अधीन आरोप से उन्मोचित कर दिया । इससे व्यथित होकर, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन 2021 के धारा 482 के अधीन आवेदन सं. 11426 द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय में समावेदन किया । उच्च न्यायालय ने इसमें तारीख 20 जनवरी, 2023 को पारित किए गए आदेश द्वारा उन्मोचन आदेश को अपास्त कर दिया और विद्वान् मजिस्ट्रेट को अपीलार्थियों के विरुद्ध मामले में अग्रसर होने का निदेश दिया । उक्त आदेश को चुनौती देते हुए वे इस न्यायालय के समक्ष आए हैं ।

3. अपीलार्थियों ने सनशाइन एजुकेशनल एंड डेवलेपमेंट सोसाइटी, नोएडा, उत्तर प्रदेश स्थापित की थी और इसे वर्ष 2004 में सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत कराया था । इस सोसाइटी का उद्देश्य और लक्ष्य, अन्य बातों के साथ-साथ, तकनीकी शिक्षा का प्रसार करना था । अपीलार्थी सं. 1 उक्त सोसाइटी का अध्यक्ष जबकि उसकी पत्नी अर्थात् अपीलार्थी सं. 2 इसकी सचिव थी । सितंबर, 2006 में सोसाइटी ने ग्रेटर नोएडा, उत्तर प्रदेश में ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण, गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश से

शैक्षणिक संस्थाओं को स्थापित करने के लिए 90 वर्ष के पट्टे पर 4.90 एकड़ भूमि अर्जित की । सोसाइटी ने पट्टाकृत भूमि में से एक एकड़ में कारबार प्रबंधन में स्नातकोत्तर डिप्लोमा पाठ्यक्रम (पीजीडीएम) का प्रस्ताव करते हुए 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' स्थापित करने के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के अनुमोदन की ईप्सा करते हुए तारीख 22 जनवरी, 2007 को आवेदन फाइल किया । इस आवेदन में सोसाइटी ने प्रकटित किया कि उसके द्वारा कारपोरेशन बैंक से 5.05 करोड़ का ऋण लिया गया है और बकाया ऋण 3 करोड़ से ऊपर है । उसने खंड 6(v) के उत्तर के खाने में 'हां' का निशान लगाते हुए यह भी प्रकटित किया कि ऋण भूमि के विरुद्ध/इसे बंधक करके लिया गया है । तथापि, प्रथम पृष्ठ में सारणीबद्ध रूप में इस प्रश्न के सामने – 'बैंक के पास बंधक' है हां/नहीं, उत्तर में 'नहीं' कहा गया । इस प्रकार, स्वयं आवेदन पत्र में एक स्पष्ट विरोधाभास था । किसी भी स्थिति में, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) द्वारा 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' आरंभ करने के लिए तारीख 17 अगस्त, 2007 को अनुमोदन दिया गया ।

4. उसके पश्चात्, सोसाइटी ने पीजीडीएम पाठ्यक्रम का प्रस्ताव करके 'बिजनेस स्कूल फॉर वूमेन' स्थापित करने की ईप्सा करते हुए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को तारीख 17 अक्तूबर, 2007 को एक अन्य आवेदन प्रस्तुत किया । एक दिन बाद, तारीख 28 अक्तूबर, 2007 को सोसाइटी ने 'इंटरनेशनल बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' नामक एक तीसरा संस्थान आरंभ करने के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) से अनुमोदन की ईप्सा करते हुए फिर एक अन्य आवेदन फाइल किया । पहला और तीसरा आवेदन अपीलार्थी सं. 1 द्वारा सोसाइटी की ओर से इसका अध्यक्ष होने के नाते फाइल किया गया था, जबकि दूसरा आवेदन अपीलार्थी सं. 2 द्वारा इसका सचिव होने के नाते फाइल किया गया था । बाद के इन दो आवेदनों में सोसाइटी ने यह उल्लेख नहीं किया कि पट्टाकृत भूमि को बंधक किया गया है अपितु उसने इस तथ्य का प्रकटन किया कि उसे उसी परिसर से एक अन्य संस्थान का संचालन करने के लिए वर्ष 2007

में पहले ही अनुमोदन प्रदान किया गया था । अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने तारीख 29 मई, 2008 की कार्यवाहियों द्वारा उक्त भूमि में से 0.8 एकड़ में 'बिजनेस स्कूल फॉर वूमेन' आरंभ करने के लिए अनुमोदन प्रदान किया । अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने तारीख 19 जून, 2008 को पट्टाकृत भूमि में 'इंटरनेशनल बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' आरंभ करने के लिए भी अनुमोदन दिया ।

5. इस दौरान, यह प्रतीत होता है कि मुख्य सतर्कता आयुक्त को एक अनाम शिकायत की गई जिसमें यह अभिकथन किया गया कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के पदधारियों ने सोसाइटी के पक्ष में अनुचित पक्षपात दिखाया था । इसके आधार पर मुख्य सतर्कता आयुक्त ने मामले को अन्वेषण के लिए केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को निर्दिष्ट कर दिया । पहली बार में, कानपुर स्थित केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के क्षेत्रीय अधिकारी ने थाना अधिकारी, पुलिस थाना ग्रेटर नोएडा को अन्वेषण के लिए मामला रजिस्ट्रीकृत करने के लिए तारीख 24 जुलाई, 2011 को एक पत्र संबोधित किया । किंतु गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश की जिला पुलिस ने राय व्यक्त की कि शिकायत से प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत करना और/या अन्वेषण के लिए अग्रसर होना औचित्यपूर्ण नहीं है क्योंकि कोई संज्ञेय अपराध नहीं बनता है ।

6. तथापि, तारीख 30 नवंबर, 2011 को पुलिस थाना, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, ईओ - 1, नई दिल्ली की फाइल पर भारतीय दंड संहिता की धारा 420 और धारा 120ख के साथ-साथ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(घ) के साथ पठित धारा 13(2) के अधीन अपराध मामला सं. 219 2011 (ई) 0016 रजिस्ट्रीकृत किया गया । यह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अपीलार्थियों और अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के अनाम पदधारियों के विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत की गई थी जिसमें यह अभिकथन किया गया कि अपीलार्थियों ने अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) से अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) अनुमोदन प्रक्रिया 2006 की धारा 4.2(iii) का अतिक्रमण करते हुए प्रवंचनापूर्ण उपाय करके

अनुमोदन अभिप्राप्त किया था । इस उपबंध के अनुसार, शैक्षणिक संस्थान आरंभ करने के लिए अनुमोदित भूमि को विल्लंगमित नहीं किया जाना चाहिए । अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा केवल अपीलार्थियों को अभियुक्तों के रूप में नामित करते हुए भारतीय दंड संहिता की धारा 420 और धारा 120ख के अधीन अपराधों के लिए 2012 का आरोप पत्र सं. 11 फाइल किया गया । अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के किसी पदधारी पर सोसाइटी के संस्थानों को अनुमोदन प्रदान करने में आपराधिकता का आरोप नहीं लगाया गया था ।

7. अपीलार्थियों ने दोषारोपण से व्यथित होकर, उनके विरुद्ध दांडिक कार्यवाहियों को अभिखंडित करने की ईप्सा करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय में 2012 का धारा 482 के अधीन आवेदन सं. 37398 फाइल किया । उच्च न्यायालय ने तारीख 14 फरवरी, 2013 के आदेश द्वारा उनके अभिवाक् को स्वीकार किया और उक्त कार्यवाहियों को अभिखंडित कर दिया । तथापि, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा इस न्यायालय में 2015 की दांडिक अपील सं. 239 में समावेदन करने पर इस न्यायालय ने इस आवेदन में तारीख 5 फरवरी, 2018 को पारित किए गए आदेश द्वारा तारीख 14 फरवरी, 2013 के आदेश को अपास्त कर दिया किंतु यह स्पष्ट किया कि विचारण न्यायालय उठाए गए विवाद्यक के गुणागुण पर आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर विचार करने के लिए स्वतंत्र होगा । उसके पश्चात्, विचारण न्यायालय ने तारीख 2 जुलाई, 2018 को अपीलार्थियों को जमानत दे दी ।

8. अपीलार्थियों ने तारीख 25 सितंबर, 2018 को विद्वान् विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो न्यायालय, गाजियाबाद के समक्ष उन्मोचन के लिए आवेदन दिया, किंतु विद्वान् मजिस्ट्रेट ने तारीख 15 फरवरी, 2019 के आदेश द्वारा उनके अभिवाक् को नामंजूर कर दिया और आरोप विरचित करने के लिए मामले को सूचीबद्ध किए जाने का निदेश दिया । अपीलार्थियों ने तदुपरांत दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, गाजियाबाद के

समक्ष 2019 का दांडिक पुनरीक्षण सं. 101 फाइल किया । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा पुनरीक्षण को तारीख 29 मई, 2019 के आदेश द्वारा मंजूर किया गया, जिसके द्वारा विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा पारित किए गए आदेश को अपास्त कर दिया गया और पुनरीक्षण आदेश में की गई मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए मामले की नए सिरे से सुनवाई करने के लिए प्रतिप्रेषित किया । परिणामतः, विद्वान् मजिस्ट्रेट ने मामले की पुनः सुनवाई की और अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 420 और धारा 120ख के अधीन अभिकथित अपराध से उन्मोचित करते हुए तारीख 31 अगस्त, 2019 का आदेश पारित किया । इस उन्मोचन आदेश के पारित होने के लगभग डेढ़ वर्ष पश्चात् अर्थात् तारीख 21 फरवरी, 2021 को केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने इसे इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती देते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । इस आवेदन को धारा 482 के अधीन 2021 के आवेदन सं. 11426 के रूप में फाइल पर लिया गया और उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा इसे मंजूर किया । परिणामस्वरूप वर्तमान अपील फाइल की गई है ।

9. इससे पूर्व कि हम मामले की गुणागुण के आधार पर परीक्षा करने के लिए अग्रसर हों, हम पहले सुसंगत विधिक उपबंधों का उल्लेख कर सकते हैं । भारतीय दंड संहिता की धारा 415 में 'छल' को परिभाषित किया गया है और यह इस प्रकार है :–

> "**415. छल** – जो कोई किसी व्यक्ति से प्रवंचना कर उस व्यक्ति को, जिसे इस प्रकार प्रवंचित किया गया है, कपटपूर्वक या बेईमानी से उत्प्रेरित करता है कि वह कोई संपत्ति किसी व्यक्ति को परिदत्त कर दे, या यह सम्मति दे दे कि कोई व्यक्ति किसी संपत्ति को रख रखे या साशय उस व्यक्ति को, जिसे इस प्रकार प्रवंचित किया गया है, उत्प्रेरित करता है कि वह ऐसा कोई कार्य करे, या करने का लोप करे जिसे वह यदि उसे हर प्रकार प्रवंचित न किया गया होता तो, न करता, या करने का लोप न करता, और जिस कार्य या लोप से उस व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक, ख्याति

संबंधी या सांपत्तिक नुकसान या अपहानि कारित होती है, या कारित होनी संभाव्य है, वह 'छल' करता है, यह कहा जाता है ।

स्पष्टीकरण – तथ्यों का बेईमानी से छिपाना इस धारा के अर्थ के अंतर्गत प्रवंचना है ।

भारतीय दंड संहिता की धारा 420 का उपबंध जिससे हमारा इस समय सरोकार है, इस प्रकार है :–

'420. **छल करना और सम्पत्ति परिदत्त करने के लिए बेईमानी से उत्प्रेरित करना** – जो कोई छल करेगा, और तद्द्वारा उस व्यक्ति को, जिसे प्रवंचित किया गया है, बेईमानी से उत्प्रेरित करेगा कि वह कोई संपत्ति किसी व्यक्ति को परिदत्त कर दे, या किसी भी मूल्यवान प्रतिभूति को, या किसी चीज को, जो हस्ताक्षरित या मुद्रांकित है, और जो मूल्यवान प्रतिभूति में संपरिवर्तित किए जाने योग्य है, पूर्णत: या अंशत: परिवर्तित कर दे, या नष्ट कर दे, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।'

भारतीय दंड संहिता की धारा 120क और 120ख इस प्रकार हैं –

'**120क. आपराधिक षड्यंत्र की परिभाषा –** जबकि दो या अधिक व्यक्ति –

(1) कोई अवैध कार्य, अथवा

(2) कोई ऐसा कार्य, जो अवैध नहीं है, अवैध साधनों द्वारा करने या करवाने को सहमत होते हैं, तब ऐसी सहमति आपराधिक षड्यंत्र कहलाती है :

परंतु किसी अपराध को करने की सहमति के सिवाय कोई सहमति आपराधिक षड्यंत्र तब तक नहीं होगी जब तक कि सहमति के अलावा कोई कार्य उसके अनुसरण में उस सहमति के एक या अधिक पक्षकारों द्वारा नहीं किया जाता ।'

'**120ख. आपराधिक षड्यंत्र का दंड –** (1) जो कोई मृत्यु, आजीवन कारावास या दो वर्ष या उससे अधिक अवधि के कठोर कारावास दंडनीय अपराध करने के आपराधिक षड्यंत्र में शरीक होगा, यदि ऐसे षड्यंत्र के दंड के लिए इस संहिता में कोई अभिव्यक्त उपबंध नहीं है, तो वह उसी प्रकार दंडित किया जाएगा, मानो उसने ऐसे अपराध का दुष्प्रेरण किया था ।

(2) जो कोई पूर्वोक्त रूप से दंडनीय अपराध को करने के आपराधिक षड्यंत्र से भिन्न किसी भिन्न आपराधिक षड्यंत्र में शरीक होगा, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि छह माह से अधिक की नहीं होगी या जुर्माने से, या दोनों से दंडित किया जाएगा ।'

10. जहां तक वर्तमान मामले का संबंध है, भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन अपराध को सिद्ध करने के लिए अनिवार्य है अपीलार्थियों द्वारा छल का कार्य करना और तद्द्वारा उस व्यक्ति को, जिसे प्रवंचित किया गया है अर्थात् अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को बेईमानी से कोई संपत्ति परिदत्त करने के लिए उत्प्रेरित करना है । अत: अपीलार्थियों द्वारा सोसाइटी के लिए और उसकी ओर से आवेदन करते समय या तो तात्विक जानकारी छुपाई गई हो या असत्य जानकारी अभिदर्शित की गई हो जिससे कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को ऐसे बेईमानीपूर्ण साधनों द्वारा इसके शैक्षणिक संस्थानों के लिए अनुमोदन प्रदान करने के लिए उत्प्रेरित किया जा सके । इसके अतिरिक्त, चूंकि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के किसी पदधारी को अपराध में आलिप्त नहीं किया गया है इसलिए आरोप पत्र के अनुसार भारतीय दंड संहिता की धारा 120ख के अधीन अभिकथित 'आपराधिक षड्यंत्र' केवल अपीलार्थियों पर अभ्योपणीय है ।

11. इस आलोक में विचार करते हुए, हम उल्लेख कर सकते हैं कि अपीलार्थी सं. 1 द्वारा 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' आरंभ करने के लिए तारीख 22 जनवरी, 2007 को प्रस्तुत किए गए पहले आवेदन में इस तथ्य का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि इस संस्थान को

स्थापित करने के लिए लगभग 5 एकड़ माप की पट्टाकृत भूमि को प्रयुक्त किया जाएगा और कारपोरेशन बैंक से 5.75 करोड़ रुपए का सावधि ऋण लिया गया है । प्रति संदाय किया जाने वाला बकाया ऋण भी 3 करोड़ से ऊपर का दर्शाया गया था । आवेदन का खंड 6 'भूमि' से संबंधित है और तद्धीन यह उल्लेख किया गया था कि सरकार की लगभग 5 एकड़ पट्टाकृत भूमि का महाविद्यालय को स्थापित करने के लिए प्रयुक्त किया जाना आशयित है । आवेदन का खंड 6(v) और इसके लिए सोसाइटी के उत्तर को इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"(v) भूमि के हक के विरुद्ध लिया गया कोई ऋण/बंधक

हां नहीं"

(हां के सामने सही का निशान लगाया गया है)

12. इसके अतिरिक्त, जैसाकि पहले उल्लेख किया गया है, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने इस संस्थान को आरंभ करने के लिए तारीख 17 अगस्त, 2007 को अनुमोदन प्रदान करना उपयुक्त समझा । यह अनुमोदन अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) की 'अनुमोदन प्रक्रिया 2006' में इस उपबंध के बावजूद दिया गया था कि प्रस्ताव प्रस्तुत करने की तारीख को या इससे पूर्व भूमि किसी प्रकार के विल्लंगम से मुक्त आवेदक सोसाइटी/न्यास के नाम में रजिस्ट्रीकृत होनी चाहिए । तथापि, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के किसी पदधारी को किसी गलती के लिए आलिप्त नहीं किया गया ।

13. सोसाइटी के 'बिजनेस स्कूल फॉर वूमेन' के लिए दूसरे आवेदन पर आते हैं जिसके लिए खंड 6 के सामने उतनी ही 5 एकड़ भूमि को दर्शाया गया था किंतु बकाया बैंक ऋण प्राप्त करने के लिए भूमि को बंधक करने का प्रकटन नहीं किया गया था । खंड 6(v) के अधीन सोसाइटी यह उल्लेख करने में असफल रही थी कि भूमि के हक के विरुद्ध ऋण लिया गया था/उसे बंधक किया गया था और 'हां' की बजाय 'नहीं' के सामने निशान लगाया था ।

14. ये वे कार्य हैं जिनके आधार पर अपीलार्थियों के विरुद्ध केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो का मामला गठित किया गया था । जैसाकि इसमें पहले ही उल्लेख किया गया है, यह दावा अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने नहीं किया था कि उसे प्रवंचित किया गया था और अपीलार्थियों द्वारा सोसाइटी की ओर से कार्य करते हुए तात्विक जानकारी को छिपाने के कारण बेईमानी से अनुमोदन प्रदान करने के लिए उत्प्रेरित किया था । वह पर-पक्षकार था जिसने अपने नाम का उल्लेख नहीं किया था और उसके आधार पर अन्वेषण आरंभ किया गया था । इसके अतिरिक्त, आरोप पत्र में अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के किसी पदधारी को आलिप्त न करके और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के उपबंधों को निकालकर केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने पाया कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के पदधारी कतई सह-अपराधी नहीं थे और उन्हें क्लीन चिट दी गई थी ।

15. इस प्रक्रम पर, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि यद्यपि अपीलार्थी आरंभ में उच्च न्यायालय द्वारा कार्यवाहियों को अभिखंडित कराने में सफल रहे थे, तो भी इस न्यायालय ने उक्त आदेश को उलट दिया था, किंतु विचारण न्यायालय को आरोप विरचित करने के समय पर उठाए गए विवाद्यक की गुणागुण के आधार पर परीक्षा करने की स्वतंत्रता दी गई थी । इस न्यायालय द्वारा दी गई इस स्वतंत्रता के अनुसरण में विद्वान् विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के अधीन शक्ति का प्रयोग किया और अपीलार्थियों को उन्मोचित कर दिया । इस कवायद की विधिमान्यता को उच्च न्यायालय के समक्ष प्रश्नगत किया गया था जिसे अंततोगत्वा अपीलार्थियों के विरुद्ध अभिनिर्धारित किया गया ।

16. महत्वपूर्ण रूप से, उच्च न्यायालय अपीलार्थियों द्वारा इस आशय के आरंभिक आक्षेप को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था कि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को उन्मोचन आदेश के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन एक पुनरीक्षण आवेदन फाइल करना चाहिए था और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन आवेदन नहीं कर

सकता था । इस संबंध में, उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को सदैव दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन के रूप में समझ सकता है और इसलिए अपीलार्थियों के आक्षेप में कोई सार नहीं है । गुणागुण के आधार पर उच्च न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि अपीलार्थियों ने सुसंगत जानकारी को जानबूझकर पूरी तरह से यह जानते हुए विधारित किया था कि यदि भूमि किसी प्रकार से विल्लंगमित होगी, तो शैक्षणिक संस्थानों को स्थापित करने के लिए अनुमोदन से इनकार कर दिया जाएगा । ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए उच्च न्यायालय ने उन्मोचन आदेश को अपास्त कर दिया ।

17. तथापि, हमारी यह सुविचारित राय है कि अपीलार्थियों द्वारा जानकारी को जानबूझकर विधारित करने के बारे में उच्च न्यायालय के निष्कर्ष को प्रस्तुत तथ्यों के आधार पर स्वीकार नहीं किया जा सकता । यह अभिलेख पर है कि तारीख 22 जनवरी, 2007 को अपीलार्थी सं. 1 द्वारा सोसाइटी की ओर से फाइल किए गए प्रथम आवेदन में यह प्रकटीकरण किया गया था कि एक बैंक ऋण अभी बकाया है और लगभग 5 एकड़ विषयांतर्गत भूमि ऋण को प्रतिभूत करने के लिए बंधक की गई है । इसके पश्चात् अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के पदधारियों द्वारा स्थल निरीक्षण सहित संवीक्षा और सत्यापन किया गया और उसके पश्चात् 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' आरंभ करने के लिए तारीख 17 अगस्त, 2007 को अनुमोदन प्रदान किया गया । इस बाबत अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) के पदधारियों पर कोई गलत कार्य करने का अभ्यारोपण नहीं किया गया है । 'बिजनेस स्कूल फॉर वूमेन' के लिए तारीख 17 अक्तूबर, 2007 के बाद के आवेदन और 'इंटरनेशनल बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' के लिए तारीख 28 अक्तूबर, 2007 के आवेदन में ही बकाया बैंक ऋण और इसके संबंध में भूमि को बंधक करने के बारे में सही जानकारी का उल्लेख नहीं किया गया था । तथापि, सभी तीनों आवेदनों में लगभग 5 एकड़ भूमि का उल्लेख किया गया था और यह नहीं कहा जा सकता है कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) इस तथ्य से अनभिज्ञ थी कि आवेदन करने के समय पर

उक्त भूमि विल्लंगम के अधीन थी । विशेष रूप से, बाद के दोनों आवेदनों में इस तथ्य का उल्लेख किया गया था कि एक संस्थान को पहले ही वर्ष 2017 में उसी परिसर से संचालित करने का अनुमोदन प्रदान किया गया है । यह स्पष्ट रूप से 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' के संदर्भ में था और इसके लिए आवेदन में ऋण और भूमि पर विल्लंगम जारी रहने का प्रकटीकरण किया गया था ।

18. इसके अतिरिक्त, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) का यह भी पक्षकथन नहीं था कि उसे कोई भ्रम था जिसके द्वारा उसे प्रश्नगत महाविद्यालयों के स्थापन के लिए अनुमोदन प्रदान करने के लिए बेईमानी से उत्प्रेरित किया गया था । 'बेईमानी से कोई कार्य करने या न करने के लिए उत्प्रेरित करने' की बात केवल वही पक्षकार कह सकता है जो स्वयं पक्षकार है और जब अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने ऐसी कोई शिकायत नहीं की थी इसलिए अन्य व्यक्ति चोरी-छिपे यह नहीं कह सकते थे कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को बेईमानी से कोई कार्य करने के लिए उत्प्रेरित किया गया था ।

19. **रामजस** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में छल के अपराध का गठन करने के लिए अपेक्षित संघटकों का संक्षिप्त और स्पष्ट रूप में इस प्रकार सारांश दिया गया था :–

> "(i) किसी व्यक्ति को उसे प्रवंचित करके उसका कपटपूर्वक या बेईमानी से उत्प्रेरण किया जाना चाहिए ;
>
> (ii) (क) इस प्रकार प्रवंचित किए गए व्यक्ति को, कोई संपत्ति किसी व्यक्ति को परिदत्त करने के लिए या यह सम्मति देने के लिए कि वह किसी सम्पत्ति को रख रखे, उत्प्रेरित किया जाना चाहिए ; अथवा
>
> (ख) जिस व्यक्ति को इस प्रकार प्रवंचित किया गया हो उसे साशय कोई ऐसा कार्य करने के लिए या करने का लोप करने के लिए आशयपूर्वक उत्प्रेरित किया जाना चाहिए जिसे वह, यदि उसे

[1] (1970) 2 एस. सी. सी. 740.

इस प्रकार प्रवंचित न किया गया होता, तो वह नही करता या करने का लोप नहीं करता ; और

(iii) ऐसे मामलों में जो (ii)(ख) के अंतर्गत आते हैं, कार्य या लोप ऐसा होना चाहिए जिससे उस व्यक्ति को, जिसे उत्प्रेरित किया गया है, शारीरिक, मानसिक, ख्याति संबंधी या सांपत्तिक नुकसान या अपहानि कारित होती है या कारित होने संभाव्य है ।"

20. **वी. पी. श्रीवास्तव** बनाम **इंडियन एक्सप्लोसिव लि. और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि छल के अपराध का गठन करने के लिए अवश्य यह दर्शित किया जाना चाहिए कि व्यपदेशन करने या वचन देने के समय पर अभियुक्त का कपटपूर्ण या बेईमानीपूर्ण आशय था और ऐसा दोषपूर्ण आशय करार करने के समय पर होना चाहिए । तथ्यों के आधार पर, यह पाया गया था कि वह पक्षकार, जिसके साथ अभिकथित रूप से छल किया गया था, उस समय पर उस स्थिति से अवगत था जब उसने संविदा करने का विनिश्चय किया था और बेईमानी से किया गया कोई उत्प्रेरण नहीं था ।

21. प्रस्तुत मामले में इस तथ्य का प्रकटीकरण किया गया था कि विषयांतर्गत भूमि को बैंक ऋण को प्रतिभूत करने के लिए बंधक किया गया था किंतु इसके बावजूद, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने 'बिजनेस स्कूल ऑफ दिल्ली' के लिए अनुमोदन प्रदान किया और उसने कभी यह शिकायत नहीं की कि ऐसा इस विषय में गलत जानकारी के कारण किया गया था । इस प्रकार, छल के अपराध को सिद्ध करने के लिए आवश्यक अध्यापेक्षा का अभाव है । अपीलार्थियों की ओर से द्वितीय और तृतीय आवेदनों को और प्रथम आवेदन के भी एक भाग को भरने में मात्र असावधानी को, स्वीकृत तथ्यात्मक स्थिति के आधार पर, जानबूझकर प्रवंचना करने से उत्प्रेरित नहीं माना जा सकता जिससे कि आपराधिक आरोप लगाए जा सकें ।

22. इसके अतिरिक्त, ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी जानबूझकर अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को

---

[1] (2010) 10 एस. सी. सी. 361.

मिथ्या जानकारी देने के लिए भानपूर्वक सहमत हो रहे थे या षड्यंत्र कर रहे थे जिससे कि उनके महाविद्यालयों के लिए अनुमोदन प्राप्त किया जा सके । जैसाकि पहले ही उल्लेख किया गया है, अपीलार्थी सं. 1 ने प्रथम आवेदन बैंक के ऋण और पट्टाकृत भूमि पर बंधक होने का सुसंगत ब्यौरा देते हुए फाइल किया था किंतु उसके द्वारा फाइल किए गए तृतीय आवेदन में वह ऐसा करने में असफल रहा । अपीलार्थी सं. 2 ने द्वितीय आवेदन इसी प्रकार के अप्रकटीकरण के साथ फाइल किया था, किंतु किसी प्रकार का ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी इस विषय में जानबूझकर और परस्पर मौनानुकूलता से प्रवंचना करने का आश्रय ले रहे थे । अत: भारतीय दंड संहिता की धारा 120ख के अधीन आरोप भी न्यायिक संवीक्षा में खरा नहीं उतरता है ।

23. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल किए गए केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के आवेदन की संधार्यता के बारे में अपीलार्थियों द्वारा किए गए आक्षेप के संबंध में हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि परिसीमा अधिनियम, 1963 की अनुसूची में अनुच्छेद 131 के अनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन दांडिक पुनरीक्षण, चाहे उच्च न्यायालय के समक्ष या सेशन न्यायालय के समक्ष, फाइल करने की परिसीमा अवधि 90 दिन है । तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का आश्रय लेने के लिए कोई परिसीमा विहित नहीं की गई है और इसका किसी भी समय आश्रय लिया जा सकता है । यह अभिलेख पर है कि जब विद्वान् विशेष मजिस्ट्रेट, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो न्यायालय ने पहली बार में उन्मोचन के लिए अपीलार्थियों के आवेदन को खारिज किया था तब उन्होंने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन सेशन न्यायालय के समक्ष एक पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया था और मामले को नए सिरे से सुनवाई के लिए प्रतिप्रेषित किया गया था । तथापि, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने तब इस प्रक्रिया को अपनाना उचित नहीं समझा जब विद्वान् विशेष मजिस्ट्रेट द्वारा दूसरे दौर में अपीलार्थियों के उन्मोचन के लिए आवेदन को मंजूर किया गया था । केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने 90 दिन की परिसीमा अवधि समाप्त होने के बहुत बाद उच्च न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक

आवेदन फाइल किया । यह आवेदन स्पष्ट रूप से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन फाइल करने के लिए परिसीमा की बाधा से छुटकारा पाने के लिए फाइल किया था । इस संबंध में, **मोहित** उर्फ **सोनू और एक अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के प्रतिनिर्देश करना उपयोगी होगा जिसमें यह मत व्यक्त किया गया था :–

> "28. जहां तक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 में अंतर्विष्ट उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का संबंध है, इस विषय में विधि को इस न्यायालय द्वारा अनेक विनिश्चयों में स्थिर किया गया है । तथापि, हम यह दोहराना चाहेंगे कि जब किसी आदेश को, जो अंतवर्ती आदेश की प्रकृति का न हो, उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण अधिकारिता में चुनौती दी जा सकती है, तब उच्च न्यायालय की अंतर्निहित अधिकारिता का अवलंब लेने के लिए वर्जन होना चाहिए । दूसरे शब्दों में, न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग तब किया जा सकता है जब शिकायत के निवारण के लिए दंड प्रक्रिया संहिता में कोई उपचार उपबंधित न हो । यह भली-भांति स्थिर है कि न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का मामूली तौर पर तब प्रयोग किया जा सकता है जब संहिता में ऐसा अभिव्यक्त उपबंध न हो जिसके अधीन आक्षेपित आदेश को चुनौती दी जा सकती हो ।
>
> 29. न्यायालयों को सिविल प्रक्रिया संहिता (सीपीसी) जैसे अन्य कानून में भी अंतर्निहित शक्ति प्राप्त है, जिसकी धारा 151 ऐसी शक्ति से संबंधित है । सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 इस प्रकार है :–
>
> > '**151. न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों की व्यावृत्ति** – इस संहिता की किसी भी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह ऐसे आदेशों के देने की न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को परिसीमित या अन्यथा प्रभावित करती

[1] (2013) 7 एस. सी. सी. 789.

है, जो न्याय के उद्देश्यों के लिए या न्यायालय की आदेशिका के दुरुपयोग का निवारण करने के लिए आवश्यक है ।'

30. पदम सेन **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य [(1961) 1 क्रि. ला जर्नल 322] वाले मामले में इस न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति के संबंध में यह मत व्यक्त किया था :–

'8. ..... न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियां संहिता द्वारा न्यायालय को विनिर्दिष्ट रूप से प्रदत्त की गई शक्तियों के अतिरिक्त हैं । वे उन शक्तियों की पूरक हैं और इसलिए यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि न्यायालय संहिता की धारा 151 में वर्णित प्रयोजनों के लिए तब उनका प्रयोग करने के लिए स्वतंत्र है जब उन शक्तियों का प्रयोग करना किसी प्रकार से उसके विरोध में नहीं है जो संहिता में अभिव्यक्त रूप से उपबंधित किया गया है या विधान-मंडल के आशय के विरुद्ध नहीं है । यह भी भली-भांति मान्यताप्राप्त है कि अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग ऐसी रीति में नहीं किया जाना चाहिए जो संहिता में अभिव्यक्त रूप से उपबंधित प्रक्रिया के प्रतिकूल या उससे भिन्न हो ।'

31. मनोहर लाल चोपड़ा **बनाम** सेठ हीरालाल (ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 527 वाले मामले में एक संविधान न्यायपीठ के विनिश्चय में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि :–

'43. ..... न्यायालय की न्यायानुसार आदेश करने की अंतर्निहित अधिकारिता की संहिता की धारा 151 द्वारा निस्संदेह अभिपुष्टि की गई है किंतु (अंतर्निहित) अधिकारिता का प्रयोग सिविल प्रक्रिया संहिता के उपबंधों को अकृत करने के लिए नहीं किया जा सकता । जहां सिविल प्रक्रिया संहिता में किसी विशिष्ट विषय के बारे में अभिव्यक्त रूप से उपबंध किया गया है, तो उस उपबंध को प्रसामान्यत: सर्वांगपूर्ण समझा जाना चाहिए ।'

32. इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के मुकाबले दंड प्रक्रिया संहिता और सिविल प्रक्रिया संहिता को अधिनियमित करने के विधान-मंडल के आशय से सुरक्षित रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जब अपील या पुनरीक्षण के द्वारा एक विनिर्दिष्ट उपचार उपबंधित है, तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 या सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन अंतर्निहित शक्ति का आश्रय नहीं लिया जा सकता और नहीं लेना चाहिए ।"

24. विधि की उपरोक्त घोषणा को ध्यान में रखते हुए, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन उसे उपलब्ध कानूनी उपचार की बेफिक्री से अनदेखी करके और उसके पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन आवेदन फाइल करने का आश्रय नहीं ले सकता था ।

25. हम यह भी उल्लेख कर सकते हैं कि यदि कोई पुनरीक्षण विधिपूर्वक उच्च न्यायालय के समक्ष संस्थित किया जाता है किंतु तत्पश्चात् किसी अन्य आधार पर उसे संधार्य नहीं पाया जाता है, तो उच्च न्यायालय उस मामले में न्याय करने के लिए उसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए आवेदन के रूप में समझ सकता है । तथापि, यह विपर्यस्त अनुरूपता सभी मामलों में लागू नहीं हो सकती और उच्च न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए किसी आवेदन को, परिसीमा सहित अन्य मुद्दों के प्रतिनिर्देश किए बिना, इसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के अधीन फाइल किए गए आवेदन के रूप में संपरिवर्तित करने या समझने के लिए स्वतंत्र नहीं होगा । जब केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को पुनरीक्षण फाइल करने का विनिर्दिष्ट उपचार उपलब्ध था, तो वह इसकी अनदेखी नहीं कर सकता था और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन आवेदन फाइल नहीं कर सकता था । अत: हम इस आधार पर भी उसे अपीलार्थियों के पक्ष में पाते हैं ।

26. उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर हमारी यह राय है कि विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के अधीन शक्ति का प्रयोग करके और अपीलार्थियों को 2012 के मामला सं. 456

के संबंध में दांडिक कार्यवाहियों से उन्मोचित करके पूरी तरह से न्यायोचित किया था । उच्च न्यायालय ने बल्कि एक तकनीकी दृष्टिकोण अपनाया और व्यावहारिक रूप से यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी जानबूझकर सुसंगत जानकारी विधारित करने के दोषी थे जिससे कि प्रवंचनापूर्ण उपायों द्वारा अनुमोदन प्राप्त किया जा सके । उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष का स्वीकृत तथ्यों से समर्थन नहीं होता है, जिनसे आरंभ में ही बंधक के बारे में प्रकटीकरण किया जाना उपदर्शित होता है जब प्रथम आवेदन फाइल किया गया था और इसलिए यह निष्कर्ष निकलने की कोई संभाव्यता नहीं है कि अपीलार्थियों ने अनुमोदनों को प्राप्त करने के लिए तथ्यों को छिपाए जाने का एक अवैध कृत्य करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 120क के निबंधनों के अनुसार षड्यंत्र किया था । इसके अतिरिक्त, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) ने स्वयं कभी यह दावा नहीं किया था कि उसे ऐसे अनुमोदन प्रदान करने के लिए बेईमानी से उत्प्रेरित किया गया था और यह आवश्यक कड़ी पूरी तरह गायब है, जिसके द्वारा छल करने का कोई ऐसा आपराधिक आरोप अपीलार्थियों के विरुद्ध संधार्य किया जा सके । अत: इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन 2021 के आवेदन सं. 11426 में तारीख 20 जनवरी, 2023 को पारित किए गए आक्षेपित आदेश को अपास्त किया जाता है और विद्वान् विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो न्यायालय, गाजियाबाद द्वारा 2012 के मामला सं. 456 में पारित किए गए उन्मोचन आदेश को प्रत्यावर्तित किया जाता है । परिणामत:, अपीलार्थियों को 2011 के आपराधिक मामला सं. 219(ई)0016 में भारतीय दंड संहिता की धारा 420 और धारा 120ख के अधीन अभिकथित अपराध से उन्मोचित किया जाता है । तद्नुसार, यह दांडिक अपील मंजूर की जाती है । लंबित आवेदन बंद हो जाएंगे ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2024] 2 उम. नि. प. 245

रविशंकर टंडन

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य

[2023 की दांडिक अपील सं. 3869 (इसके साथ 2023 की दांडिक अपील सं. 2740 और 2024 की दांडिक अपील सं. 2046 और 2047)]

10 अप्रैल, 2024

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति संदीप मेहता

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34, 120ख और 201 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 27] – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – मृतक के गुम हो जाने पर पुलिस द्वारा संदेह के आधार पर अभियुक्त-अपीलार्थियों से परिप्रश्न किया जाना – पुलिस अभिरक्षा में किए गए उनके प्रकटन कथन के आधार पर एक तालाब से शव को बरामद किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – किसी मामले को साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन लाने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा यह सिद्ध करना आवश्यक है कि पुलिस अभिरक्षा में रहते हुए अभियुक्तों द्वारा दी गई जानकारी के परिणामस्वरूप किसी तथ्य का पता चला था और उसमें से उतनी जानकारी, जितनी पता चले तथ्य से स्पष्ट रूप से संबंधित है, साक्ष्य में ग्राह्य होगी और जहां अभियोजन पक्ष यह साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा हो कि केवल पुलिस अभिरक्षा में अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा किए गए प्रकटन कथन के आधार पर मृतक के शव का पता चला था और पुलिस तथा साक्षियों को इसके बारे में पहले से कोई जानकारी नहीं थी, वहां धारा 27 को लागू नहीं किया जा सकता और अभियुक्तों को अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थितियों की श्रृंखला इतनी पूर्ण न होने पर कि अभियुक्तों की दोषिता के सिवाय कोई अन्य निष्कर्ष न निकलता हो, उन्हें संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इन अपीलों के तथ्य इस प्रकार हैं कि मृतक के गुम हो जाने के पश्चात् पुलिस थाने में एक गुमशुदा व्यक्ति रिपोर्ट दर्ज कराई गई । जब व्यापक तलाश की जा रही थी तब पुलिस ने संदेह के आधार पर अभियुक्तों-अपीलार्थियों से परिप्रश्न किए । परिप्रश्न करने के दौरान, अभियुक्तों-अपीलार्थियों ने प्रकटित किया कि उन्होंने मृतक की गला घोंटकर मृत्यु कारित की थी । उसके पश्चात्, पुलिस द्वारा अभियुक्तों के कथनों का ज्ञापन अभिलिखित किया गया और इन ज्ञापनों के आधार पर पुलिस ने एक तालाब से मृतक के शव को बरामद किया और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत, अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया जिसमें अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302, धारा 120ख और धारा 201 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए जबकि अभियुक्त सं. 3 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 120ख के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोपित किया गया । विचारण समाप्त होने पर विचारण न्यायालय ने पाया कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों-अपीलार्थियों के विरुद्ध मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है और तद्नुसार अभियुक्त सं. 1, 2 और 3 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302, धारा 120ख और धारा 201 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए और अभियुक्त सं. 4 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और 120ख के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और उन सभी को जुर्माने सहित आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । अभियुक्तों-अपीलार्थियों द्वारा इससे व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष तीन दांडिक अपीलें फाइल की गईं । उच्च न्यायालय द्वारा दांडिक अपीलों को खारिज कर दिया गया और विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश की अभिपुष्टि की गई । इससे व्यथित होकर अभियुक्तों द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – किसी मामले को साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के

अधीन लाने के लिए अभियोजन पक्ष के लिए यह सिद्ध करना आवश्यक होगा कि अभियुक्त द्वारा पुलिस अभिरक्षा में रहते हुए दी गई जानकारी के परिणामस्वरूप ऐसे तथ्य का पता चला था जो स्पष्ट रूप से उक्त कथन को करने वाले के ज्ञान में था । ऐसी जानकारी में से केवल उतनी, जितनी तद्द्वारा पता चले तथ्य से स्पष्टतया संबंधित है, ग्राह्य होगी । इस उपबंध के पीछे का तर्काधार यह है कि यदि दी गई जानकारी के परिणामस्वरूप वास्तव में किसी तथ्य का पता चलता है, तो इससे इस बात की कुछ गारंटी हो जाती है कि जानकारी सही है और इसलिए इसे अपराध में आलिप्त करने वाले कारक के रूप में अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य में सुरक्षित रूप से ग्रहण किया जाना अनुज्ञात किया जा सकता है । अत: यह परीक्षा करनी होगी कि क्या अभियोजन पक्ष ने युक्तियुक्त संदेह के परे यह साबित किया है कि शव की बरामदगी अभियुक्तों द्वारा साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभिलिखित किए गए कथन में दी गई जानकारी के आधार पर की गई थी या नहीं । अभियोजन पक्ष को यह सिद्ध करना होगा कि अभियुक्तों द्वारा दी गई उस जानकारी से पूर्व जिसके आधार पर शव बरामद किया गया था, किसी व्यक्ति को उस स्थान पर शव के मौजूद होने के बारे में ज्ञान नहीं था जहां से इसे बरामद किया गया था । जहां तक साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन ज्ञापनों का संबंध है, अभियोजन पक्ष ने रामकुमार (अभि. सा. 5) और अजब सिंह (अभि. सा. 18) के अभिसाक्ष्यों का अवलंब लिया है । अभियोजन पक्ष के अनुसार, रविशंकर टंडन (अभियुक्त सं. 1) का कथन तारीख 3 दिसंबर, 2011 को 10.00 बजे पूर्वाह्न में अभिलिखित किया गया था । उसी दिन ही उमेंद प्रसाद धृतलहरे (अभियुक्त सं. 2) का कथन 10.30 बजे पूर्वाह्न में और दिनेश चंद्राकर (अभियुक्त सं. 3) का कथन 11.00 बजे पूर्वाह्न में अभिलिखित किया गया था । जबकि सत्येन्द्र कुमार पात्रे (अभियुक्त सं. 4) का कथन तारीख 6 दिसंबर, 2011 को 7.00 बजे अपराह्न में अभिलिखित किया गया था । यह उल्लेखनीय है कि रामकुमार (अभि. सा. 5) मृतक का बहनोई है । उसके साक्ष्य के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि उसने स्वीकार किया था कि गांव कुंडा में उसके पहुंचने पर उसे उसके बहनोई

और भतीजे नरेन्द्र कुमार (अभि. सा. 2) द्वारा मृतक की हत्या के बारे में सूचित किया गया था जो अभियुक्तों द्वारा की गई थी । उसने कथन किया था कि उस समय तक वे घटनास्थल पर नहीं पहुंचे थे और यही कारण है कि उन्हें इस बारे में जानकारी नहीं थी कि यह शव धर्मेंद्र का था या नहीं । उसने यह भी स्वीकार किया कि जब वे भटगांव पहुंचे तो वहां गांव के बहुत सारे लोग थे । उसने यह भी स्वीकार किया कि शव होने के कारण वहां बहुत सारे लोग थे । उसने यह भी स्वीकार किया कि अभियुक्तों ने कुंडा पुलिस थाने में अपने कथन किए थे । उसने आगे यह भी स्वीकार किया कि वे भटगांव लगभग 4.30 से 5.00 बजे अपराह्न में पहुंचे थे और मुंगेली सूर्यास्त से पहले पहुंचे थे । उसने यह भी कथन किया कि उसने पंचनामा पर हस्ताक्षर भटगांव में किए थे । इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि इस साक्षी (अभि. सा. 5) के अनुसार यद्यपि कथन कुंडा में किया गया था किंतु इस पर हस्ताक्षर भटगांव में किए गए थे । अजब सिंह (अभि. सा. 18) साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभिलिखित ज्ञापन और बाद में शव की बरामदगी का एक अन्य साक्षी है । उसने यह कथन किया कि रविशंकर ने पुलिस को सूचित किया कि धर्मेंद्र की हत्या कर दी गई है और तालाब में फेंक दिया गया है । तथापि, उसने मुख्य परीक्षा में कहा कि उमेंद और दिनेश ने उसके सामने पुलिस को कुछ नहीं बताया था । इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि अजब सिंह (अभि. सा. 18) ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया था कि उसने कागजातों को उन पर अपने हस्ताक्षर करने से पूर्व नहीं पढ़ा था । उसने स्वीकार किया कि उसने पुलिस के कहने पर 3-4 कागजातों पर हस्ताक्षर किए थे । उसने यह भी कथन किया कि उसने डंढ़ान में कथन पर हस्ताक्षर किए थे । रामकुमार (अभि. सा. 5) के साक्ष्य के साथ पठित नरेन्द्र कुमार (अभि. सा. 2) के साक्ष्य का परिशीलन करने पर स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि पुलिस तथा ये साक्षी धर्मेन्द्र सतनामी की मृत्यु होने के बारे में और शव भटगांव में पाए जाने के बारे में साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभियुक्तों के कथन अभिलिखित करने से पूर्व जानते थे । सभी कथन 10.00 बजे पूर्वाह्न के बाद अभिलिखित किए गए हैं जबकि रामकुमार

(अभि. सा. 2) ने कथन किया था कि लगभग 8.00 बजे पूर्वाह्न में पुलिस ने उसे अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा मृतक की हत्या करने के बारे में सूचित किया था और उसके पश्चात् वे भटगांव जा रहे थे । रामकुमार (अभि. सा. 5) ने भी स्वीकार किया था कि वह गांव कुंडा पहुंचा और उसके पहुंचने पर उसे उसके बहनोई और भतीजे द्वारा हत्या के बारे में सूचित किया गया था जो अभियुक्तों द्वारा की गई थी । अत: यह न्यायालय पाता है कि अभियोजन पक्ष यह साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा है कि भटगांव स्थित तालाब से मृतक के शव का केवल साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभियुक्तों द्वारा किए गए प्रकटन कथन के आधार पर ही पता चला था और कोई व्यक्ति उससे पूर्व इसके बारे में नहीं जानता था । यह भी उल्लेखनीय है कि अजब सिंह (अभि. सा. 18) ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि उसने कागजातों पर उन्हें पढ़े बिना हस्ताक्षर किए थे और वह भी पुलिस के कहने पर । रामकुमार (अभि. सा. 5) के साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि यद्यपि उसका बयान कुंडा पुलिस थाने में लिया गया था, तो भी इस पर हस्ताक्षर भटगांव में किए थे । इसलिए अभियुक्तों को फंसाने के लिए इन दस्तावेजों को सृजित किए जाने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता । किसी भी दशा में, जहां तक दिनेश चंद्राकर (अभि. सा. 3) का संबंध है, साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन का भी मृतक के शव की बरामदगी से कतई संबंध नहीं है । वस्तुत:, साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन के परिणामस्वरूप अपराध में आलिप्त करने वाले किसी तथ्य का पता नहीं चला था । अत: इस न्यायालय का निष्कर्ष है कि अभियोजन पक्ष इस अपील में अपीलार्थियों के विरुद्ध अपराध में आलिप्त करने वाली किसी भी परिस्थिति को साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा है । किसी भी दशा में, परिस्थितियों की श्रृंखला अवश्य इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि इसके परिणामस्वरूप अभियुक्त व्यक्तियों की दोषिता के सिवाय कोई अन्य निष्कर्ष न निकलता हो और वर्तमान मामले में ऐसा नहीं है । (पैरा 13-21, 22, 23 और 26)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2023] 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 50 = 2023 आईएनएससी 23 : **बोबी** बनाम **केरल राज्य** ; 25

[2019] (2019) 12 एस. सी. सी. 253 = 2018 आईएनएससी 985 : **असर मोहम्मद और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 25

[2005] (2005) 11 एस. सी. सी. 600 = 2005 आईएनएससी 333 : **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** बनाम **नवजोत संधु** उर्फ **अफसान गुरु** ; 12

[1985] [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116 : **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** । 8

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2023 की दांडिक अपील सं. 3869 (इसके साथ 2023 की दांडिक अपील सं. 2740 और 2024 की दांडिक अपील सं. 2046 और 2047).

2013 की दांडिक अपील सं. 194, 232 और 277 में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर द्वारा तारीख 2 जनवरी, 2023 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री मनीष कुमार सरन, (सुश्री) अनन्या त्यागी, चंद्रिका प्रसाद मिश्रा, (सुश्री) निशि प्रभा सिंह, (सुश्री) प्रशस्ति सिंह, (सुश्री) स्वाति सुरभि, उपेन्द्र नारायण मिश्रा, (सुश्री) अस्वाति एम. के., प्रशांत कुमार उमराव, वी. रामासुब्बु और रिशेष सिकरवार

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री प्रणीत प्रणव, उप महाधिवक्ता और प्रशांत सिंह

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बी. आर. गवई ने दिया ।

न्या. गवई – 2024 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 837 और 1174 में इजाजत दी गई ।

2. इन अपीलों में 2013 की दांडिक अपील सं. 194, 232 और 277 में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर की खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 2 जनवरी, 2023 को पारित किए गए उस निर्णय और आदेश को चुनौती दी गई है, जिसमें खंड न्यायपीठ ने अपीलार्थियों अर्थात् रविशंकर टंडन (अभियुक्त सं. 1), उमेंद प्रसाद धृतलहरे (अभियुक्त सं. 2), दिनेश चंद्राकर (अभियुक्त सं. 3) और सत्येन्द्र कुमार पात्रे (अभियुक्त सं. 4) द्वारा फाइल की गई दांडिक अपीलों को खारिज कर दिया गया और 2012 के सेशन विचारण सं. 10 में विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, मुंगेली (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'विचारण न्यायालय' कहा गया है) द्वारा तारीख 5 फरवरी, 2013 को यथा अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश को कायम रखा गया ।

3. अनावश्यक ब्यौरों को छोड़कर, वे तथ्य निम्नलिखित हैं जिनसे वर्तमान अपीलें उद्भूत हुई हैं –

3.1 तारीख 2 दिसंबर, 2011 को रामअवतार (अभि. सा. 1) ने अपने पुत्र धर्मेंद्र सतनामी (मृतक) के गुम हो जाने के पश्चात् पुलिस थाना, कुंडा में एक गुमशुदा व्यक्ति रिपोर्ट दर्ज कराई, जो गुमशुदा व्यक्ति रिपोर्ट क्रम सं. 10/11 थी । जब व्यापक तलाश की जा रही थी तब पुलिस ने संदेह के आधार पर अपीलार्थियों से परिप्रश्न किए । परिप्रश्न करने के दौरान, अपीलार्थियों ने प्रकटित किया कि उन्होंने भटगांव कनाल रोड पर मृतक की गला घोंटकर मृत्यु कारित की थी । उसके पश्चात्, पुलिस ने तारीख 3 दिसंबर, 2011 को अभियुक्त सं. 1 से 3 का क्रमश: 10 बजे पूर्वाह्न, 10.30 बजे पूर्वाह्न और 11.00 बजे पूर्वाह्न में कथनों का ज्ञापन अभिलिखित किया, जबकि अभियुक्त सं. 4 के कथन का ज्ञापन तारीख 6 दिसंबर, 2011 को 7.00 बजे अपराह्न में

अभिलिखित किया गया । पूर्वोक्त कथनों के ज्ञापन के आधार पर पुलिस ने तारीख 3 दिसंबर, 2011 को लगभग 4.05 बजे अपराह्न में भटगांव स्थित तालाब से मृतक के शव को बरामद किया और शव की शनाख्त की गई । उसके पश्चात्, उसी दिन ही पुलिस थाना मुंगेली, जिला बिलासपुर में 2011 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 402 रजिस्ट्रीकृत की गई जिसमें यह अभिलिखित किया गया कि पूर्वोक्त अपराध तारीख 30 नवंबर, 2011 और 3 दिसंबर, 2011 के बीच कारित किए गए थे । मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श पी-22) के अनुसार, मृतक की मृत्यु का कारण गला घोंटने की वजह से श्वासोवरुद्ध हो जाना था और मृत्यु मानव वध प्रकृति की थी ।

3.2 अभियोजन का पक्षकथन अपीलार्थियों के कथनों के ज्ञापन से उत्पन्न होता है जिनमें अपीलार्थियों ने स्वीकार किया था कि दिनेश चंद्राकर (अभियुक्त सं. 3) ने रविशंकर टंडन (अभियुक्त सं. 1) और सत्येन्द्र कुमार पात्रे (अभियुक्त सं. 4) को 90,000/- रुपए के बदले मृतक की हत्या करने का निदेश दिया था, जो उक्त हत्या करने के उपरांत दिए जाने थे । उपरोक्त अनुदेश प्राप्त होने के उपरांत, रविशंकर टंडन (अभियुक्त सं. 1) और सत्येन्द्र कुमार पात्रे (अभियुक्त सं. 4) ने उमेंद प्रसाद धृतलहरे (अभियुक्त सं. 2) के साथ अभियुक्त की हत्या करने का आपराधिक षड्यंत्र रचा और इसे निष्पादित करने की योजना बनाई । तद्नुसार, पूर्वोक्त तीनों अभियुक्तों ने मृतक को तारीख 30 नवंबर, 2011 को चांदी खरीदने के बहाने मुंगेली बुलाया । उमेंद प्रसाद धृतलहरे (अभियुक्त सं. 2) और सत्येन्द्र कुमार पात्रे (अभियुक्त सं. 4) डाटगांव सत्येन्द्र कुमार पात्रे के एक नातेदार की मोटरसाइकिल पर जो पुलिस थाना, मुंगेली की परिधि के अंतर्गत आता है । पहुंचे जबकि रविशंकर टंडन (अभियुक्त सं. 1) और मृतक बस से डाटगांव पहुंचे, उसके पश्चात्, तीनों अभियुक्त मृतक के साथ सत्येन्द्र कुमार पात्रे (अभियुक्त सं. 4) के बहनोई अर्थात् सुनील के मकान पर जाने के लिए गए । उसी रात्रि को ही, भोजन करने के पश्चात् वे अपने-अपने घरों को लौटने का बहाना बनाकर सुनील के मकान से चले गए । तथापि, जब वे भटगांव के निकट पहुंचे, तो रविशंकर टंडन (अभियुक्त सं. 1), उमेंद

प्रसाद धृतलहरे (अभियुक्त सं. 2) और सत्येन्द्र कुमार पात्रे (अभियुक्त सं. 4) ने मृतक की गला घोंटकर मृत्यु कारित कर दी और हत्या के उक्त कृत्य से स्वयं को बचाने के लिए अभियुक्तों ने मृतक के शव को उसके ही वस्त्रों से बांधा और एक जूट की बोरी में रखा जिसे सुनील के मकान से लिया गया था । उसके पश्चात्, अपीलार्थी मृतक के शव को सत्येन्द्र कुमार पात्रे (अभियुक्त सं. 4) की मोटरसाइकिल पर ग्राम भटगांव स्थित एक तालाब पर लेकर गए और शव को उक्त तालाब में फेंक दिया, जहां से इसे बाद में बरामद किया गया था ।

3.3 अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, मुंगेली, छत्तीसगढ़ के न्यायालय के समक्ष एक आरोप पत्र फाइल किया गया जिसमें अभियुक्त सं. 1, 2 और 4 को भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'भारतीय दंड संहिता') की धारा 34 के साथ पठित धारा 302, धारा 120ख और धारा 201 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोपित किया गया था जबकि अभियुक्त सं. 3 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 120ख के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोपित किया गया । चूंकि मामला अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय था इसलिए इसे सेशन न्यायालय को सुपुर्द किया गया ।

3.4 विचारण न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त अपराधों के लिए आरोप विरचित किए गए । अभियुक्तों/अपीलार्थियों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया ।

3.5 अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों/अपीलार्थियों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए 18 साक्षियों की परीक्षा की और 37 दस्तावेज प्रदर्शित किए । दूसरी ओर, प्रतिरक्षा पक्ष ने किसी साक्षी की परीक्षा नहीं की या कोई दस्तावेज प्रदर्शित नहीं किया ।

3.6 विचारण समाप्त होने पर विचारण न्यायालय ने पाया कि अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थियों के विरुद्ध मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है और तद्नुसार अभियुक्त सं. 1, 2 और 3 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302, धारा 120ख

और धारा 201 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और अभियुक्त सं. 4 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और 120ख के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और उन सभी को जुर्माने सहित आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया ।

3.7 अपीलार्थियों ने इससे व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष तीन दांडिक अपीलें फाइल कीं । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा दांडिक अपीलों को खारिज कर दिया और विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश की अभिपुष्टि की ।

4. इससे व्यथित होकर वर्तमान अपीलें फाइल की गई हैं ।

5. हमने 2023 की दांडिक अपील सं. 3869 में अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री मनीष कुमार सरन, 2023 की दांडिक अपील सं. 2740, 2024 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 837 और 1174 से उद्भूत अपीलों में अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री चंद्रिका प्रसाद मिश्रा और प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् उप महाधिवक्ता श्री प्रणीत प्रणव को विस्तारपूर्वक सुना ।

6. अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री सरन और श्री मिश्रा ने दलील दी कि वर्तमान मामला पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । यह दलील दी कि अभियोजन पक्ष अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थितियों में से किसी भी परिस्थिति को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा है । यह दलील दी कि किसी भी दशा में अभियोजन पक्ष साबित परिस्थितियों की ऐसी श्रृंखला को सिद्ध करने में असफल रहा है जिसके आधार पर अभियुक्तों की दोषिता के सिवाय कोई अन्य निष्कर्ष न निकलता हो । अत: उन्होंने दलील दी कि ये अपीलें मंजूर किए जाने योग्य हैं और दोषसिद्धि के निर्णयों और आदेशों को अभिखंडित और अपास्त किए जाने की आवश्यकता है ।

7. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाले

विद्वान् उप महाधिवक्ता श्री प्रणव ने दलील दी कि उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय दोनों ने समवर्ती रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है । उन्होंने दलील दी कि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के निष्कर्ष साक्ष्य के तर्कपूर्ण मूल्यांकन पर आधारित हैं और इसलिए किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

8. निस्संदेह, अभियोजन का पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि के संबंध में विधि को **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय में भली-भांति स्पष्ट किया गया है, जिसमें इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था :–

> "152. उच्च न्यायालय द्वारा अवलंब लिए गए मामलों पर चर्चा करने से पूर्व हम एकमात्र पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित किसी दांडिक मामले की प्रकृति, स्वरूप और अपेक्षित आवश्यक सबूत पर कुछेक विनिश्चयों को उद्धृत करना चाहेंगे । इस न्यायालय का सबसे मौलिक और मूलभूत विनिश्चय हनुमंत **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य {ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 343 = [1952] एस. सी. आर. 1091 = 1953 क्रि. ला जर्नल 129} वाला मामला है । इस न्यायालय द्वारा आज तक अनेक विनिश्चयों में इस मामले का बराबर अनुसरण और उपयोग किया गया है । उदाहरण के लिए, तुफेल **उर्फ** सिम्मी **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य [(1969) 3 एस. सी. सी. 198 = 1970 एस. सी. सी. (क्रि.) 55] और रामगोपाल **बनाम** महाराष्ट्र राज्य [(1972) 4 एस. सी. सी. 625 = ए. आई. आर. 1972 एस. सी. 656 वाले मामले] । हनुमंत वाले मामले {ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 343 = [1952] एस. सी. आर. 1091 = 1953 क्रि. ला जर्नल. 129} में न्यायमूर्ति महाजन ने जो कुछ अधिकथित किया है, उसे उद्धृत करना उपयोगी होगा –

---

[1] [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

'यह ध्यान रखना होगा कि जिन मामलों में साक्ष्य पारिस्थितिक साक्ष्य होता है, उनमें वे परिस्थितियां जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, पहली बार में पूरी तरह से सिद्ध की जानी चाहिएं और इस प्रकार सिद्ध सभी तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता की कल्पना के अनुरूप होने चाहिए । साथ ही वे परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं तथा वे ऐसी होनी चाहिएं कि प्रत्येक कल्पना अपवर्जित हो जाए और वही शेष रहे जो साबित की जानी है । दूसरे शब्दों में, साक्ष्य की श्रृंखला अवश्य इतनी पूर्ण होनी चाहिए जिससे अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप किसी निष्कर्ष के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार शेष न बचे और वह ऐसी होनी चाहिए जिससे यह दर्शित होता हो कि समस्त मानवीय अधिसंभाव्यताओं में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा ।'

153. इस विनिश्चय के सूक्ष्म-विश्लेषण से यह दर्शित होता है कि अभियुक्त के प्रतिकूल मामले को पूरी तरह सिद्ध मानने से पहले निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिएं :

(1) वे परिस्थितियां, जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, पूरी तरह सिद्ध की जानी चाहिएं ।

यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि इस न्यायालय ने यह इंगित किया था कि संबंधित परिस्थितियां 'सिद्ध करनी होंगी' या 'की जानी चाहिएं न कि की जा सकती हैं' । 'साबित की जा सकती हैं' और 'साबित करनी होंगी या की जानी चाहिएं' में केवल व्याकरणिक अंतर ही नहीं है, बल्कि विधिक अंतर है, जैसाकि इस न्यायालय ने शिवाजी साहबराव बोबडे और एक अन्य **बनाम** महाराष्ट्र राज्य {[1973] 3 उम. नि. प. 1011 = (1973) 2 एस. सी. सी. 793} वाले मामले में अभिनिर्धारित किया था । उसमें न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

'निश्चय ही यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि इससे पहले कि न्यायालय अभियुक्त को दोषसिद्ध कर सके, अभियुक्त दोषी 'होना चाहिए' न कि केवल 'दोषी हो सकता है' तथा 'हो सकता है' और 'होना चाहिए' के बीच मानसिक अंतर बहुत लंबा है, अस्पष्ट अटकलों को निश्चित निष्कर्षों से अलग करता है ।'

(2) इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता के कल्पना के अनुरूप होने चाहिएं अर्थात् इस बात के सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं,

(3) परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं,

(4) उन्हें साबित की जाने वाली हर उप-कल्पना के सिवाय हर संभावित उप-कल्पना अपवर्जित करनी चाहिए, और

(5) साक्ष्य की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार न बचे और उससे यह दर्शित हो कि संपूर्ण मानवीय अधिसंभावना में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा ।

154. ये पांच स्वर्णिम सिद्धांत हैं, यदि हम ऐसा कह सकते हैं । ये पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित किसी पक्षकथन के सबूत के पंचशील सिद्धांत हैं ।"

9. इस प्रकार, स्पष्ट रूप से यह देखा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष के लिए यह आवश्यक है कि जिन परिस्थितियों से दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है वे पूरी तरह सिद्ध की जानी चाहिएं । न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि इससे पूर्व कि न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जा सके, अभियुक्त 'अवश्य दोषी होना चाहिए' न कि मात्र 'दोषी हो सकता है' । यह अभिनिर्धारित किया गया कि 'साबित किया जा सकता है' और

'अवश्य साबित करना होगा या किया जाना चाहिए' के बीच न केवल एक व्याकरणिक अंतर है अपितु विधिक अंतर भी है । यह अभिनिर्धारित किया गया कि इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता के संगत होने चाहिएं अर्थात् वे इसके सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि परिस्थितियां ऐसी होनी चाहिएं कि साबित की जाने वाली कल्पना के सिवाय प्रत्येक संभावित उप-कल्पना अपवर्जित हो जाए । यह अभिनिर्धारित किया गया कि साक्ष्य की श्रृंखला अवश्य इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई युक्तियुक्त आधार शेष न रहे और अवश्य यह दर्शित होना चाहिए कि सभी मानवीय अधिसंभाव्यताओं में वह कार्य अवश्य अभियुक्त द्वारा किया गया होगा ।

10. यह स्थिर विधि है कि संदेह चाहे कितना भी मजबूत हो, युक्तियुक्त संदेह के परे सबूत का स्थान नहीं ले सकता । किसी अभियुक्त को संदेह के आधार पर दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता, भले ही वह कितना मजबूत क्यों न हो । अभियुक्त के तब तक निर्दोष होने की उपधारणा की जाती है जब तक युक्तियुक्त संदेह के परे दोषी साबित नहीं किया जाता है ।

11. विधि के उपरोक्त स्थिर सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए हमें वर्तमान मामले की परीक्षा करनी होगी ।

12. अभियोजन का पक्षकथन मूल रूप से भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (संक्षेप में 'साक्ष्य अधिनियम') की धारा 27 के अधीन अभियुक्तों के ज्ञापन में की परिस्थिति और बाद में भटगांव स्थित तालाब से शव की बरामदगी पर निर्भर है । उच्च न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीशों ने **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** बनाम **नवजोत संधु** उर्फ **अफसान गुरु**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया है । उच्च न्यायालय ने उक्त निर्णय में की निम्नलिखित मताभिव्यक्तियों का अवलंब लिया है :–

---

[1] (2005) 11 एस. सी. सी. 600 = 2005 आईएनएससी 333.

"121. धारा 27 का अभियोजन के पक्षकथन के समर्थन में उपयोग करने के लिए पहली आवश्यक शर्त यह है कि अन्वेषण करने वाले पुलिस अधिकारी को यह अभिसाक्ष्य देना चाहिए कि उसे पुलिस अभिरक्षा में व्यक्ति से प्राप्त जानकारी के परिणामस्वरूप किसी तथ्य का पता चला था । इस प्रकार, प्राप्त हुई जानकारी के परिणामस्वरूप अवश्य ऐसे तथ्य का पता चलना चाहिए जो पुलिस अधिकारी के ज्ञान में न हो । निस्संदेह, यह अभिगृहीत बात है कि ऐसी जानकारी या प्रकटन किसी प्रकार की बाध्यता से मुक्त हो । धारा 27 का अगला घटक जानकारी की प्रकृति और उस सीमा से संबंधित है जिस सीमा तक उसे साबित किया जा सकता है । उस जानकारी में से उतनी को, जितनी तद्द्वारा पता चले तथ्य से स्पष्ट रूप से संबंधित है, साबित किया जा सकता है न कि इससे अधिक । धारा में साफ-साफ स्पष्ट किया गया है कि ऐसी जानकारी को केवल इस कारण साक्ष्य में प्राप्त करने के विरुद्ध कोई वर्जन नहीं है कि यह संस्वीकृति की कोटि में आती है । साथ ही साथ, अंतिम खंड में यह स्पष्ट किया गया है कि संस्वीकृति भाग नहीं जो ग्राह्य है अपितु केवल ऐसी जानकारी या उसका भाग ग्राह्य है जो दी गई जानकारी के माध्यम से पता चले तथ्य से स्पष्ट रूप से संबंधित है । इस प्रकार, पुलिस को किए गए कथन में दी गई जानकारी को, यदि आवश्यक हो तो, भाजित किया जाना चाहिए जिससे कि केवल धारा में वर्णित प्रकृति की जानकारी को ही ग्रहण किया जा सके । इस उपबंध के पीछे का तर्काधार यह है कि यदि दी गई जानकारी के परिणामस्वरूप वास्तव में किसी तथ्य का पता चलता है, तो इससे इस बात की कुछ गारंटी हो जाती है कि जानकारी सही है और इसलिए इसे अपराध में आलिप्त करने वाले कारक के रूप में अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य में सुरक्षित रूप से ग्रहण किया जाना अनुज्ञात किया जा सकता है । जैसा कि कोट्टया वाले मामले में [ए. आई. आर. 1947 पी.सी. 67 = 48 क्रि. ला जर्नल 533 = 74 आई.ए. 65 = ए. आई. आर. पृष्ठ 70, पैरा 10] प्रिवी कौंसिल द्वारा उल्लेख किया गया है, 'स्पष्ट रूप से

ग्राह्य जानकारी की सीमा अवश्य पता चले तथ्य की सुनिश्चित प्रकृति पर निर्भर होनी चाहिए' और जानकारी स्पष्ट रूप से उस तथ्य से संबंधित होनी चाहिए । इस धारा की व्याप्ति को स्पष्ट करते हुए प्रिवी कौंसिल ने सर जॉन बेमोंट के माध्यम से यह कहा –

> 'प्रसामान्यत:, इस धारा को तब कार्यान्वित किया जाता है जब पुलिस अभिरक्षा में कोई व्यक्ति किसी स्थान से छिपाई गई किसी वस्तु, जैसेकि शव, आयुध या आभूषणों को निकालकर प्रस्तुत करता है जो कथित रूप से उस अपराध से संबंधित है जिसका जानकारी देने वाला व्यक्ति अभियुक्त है ।'

हमने 'प्रसामान्यत:' शब्द पर जोर दिया है क्योंकि विद्वान् न्यायाधीश द्वारा दिए गए दृष्टांत सर्वांगपूर्ण नहीं हैं । अगला उल्लेखनीय बिंदु यह है कि प्रिवी कौंसिल ने क्राउन की ओर से हाजिर होने वाले काउंसेल की इस दलील को नामंजूर कर दिया था कि पता चला तथ्य प्रस्तुत की गई भौतिक वस्तु है और हर कोई जानकारी, जो उस वस्तु से स्पष्ट रूप से संबंधित है, साबित की जा सकती है । इस दृष्टिकोण से, किसी व्यक्ति द्वारा दी गई यह जानकारी कि प्रस्तुत किया गया आयुध वह है जो उसके द्वारा हत्या करने में प्रयुक्त किया गया था, संपूर्ण रूप से ग्राह्य होगी । क्राउन के काउंसेल की इस दलील को निम्नलिखित जोरदार शब्दों में नामंजूर कर दिया गया था :–

> 'यदि धारा 27 का यह आशय है, तो दो पूर्ववर्ती धाराओं द्वारा पुलिस को, या पुलिस अभिरक्षा में व्यक्तियों द्वारा की गई संस्वीकृतियों पर अधिरोपित वर्जन का थोड़ा ही महत्व रह जाएगा । यह वर्जन संभाव्यत: विधान-मंडल की इस आशंका से प्रेरित था कि पुलिस के प्रभाव में किसी व्यक्ति पर अनुचित दबाव का प्रयोग करके संस्वीकृति करने के लिए उत्प्रेरित किया जा सकता है । किंतु यदि यह सब इस वर्जन को हटाने के लिए आवश्यक हो चाहे बाद में प्रस्तुत की गई वस्तु से संबंधित जानकारी की संस्वीकृति इसमें सम्मिलित हो, यह अनुमान लगाने के लिए युक्तियुक्त प्रतीत होता है कि

पुलिस की विश्वासोत्पादक शक्तियां समय के अनुकूल साबित होंगी और व्यवहार में इस वर्जन का कोई प्रभाव नहीं रहेगा ।'

इसके पश्चात्, माननीय न्यायाधीशों ने 'पता चले तथ्य' अभिव्यक्ति की निम्नलिखित पैरा में सुबोधगम्य व्याख्या की, जिसे इस न्यायालय द्वारा बारंबार उद्धृत किया गया है –

'विद्वान् न्यायाधीशों के मत में, धारा में 'पता चले तथ्य' को निकालकर प्रस्तुत की गई वस्तु के समतुल्य समझना भ्रांतिजनक होगा ; पता चले तथ्य में वह स्थान सम्मिलित है जहां से वस्तु को निकालकर प्रस्तुत किया जाता है और इस बारे में अभियुक्त का ज्ञान और दी गई जानकारी का इस तथ्य से स्पष्ट रूप से संबंध होना चाहिए । प्रस्तुत की गई वस्तु के पूर्विक प्रयोक्ता, या पूर्विक इतिहास के बारे में जानकारी का संबंध इसके उस रूप में पता चलने से नहीं है, जिस रूप में इसका पता चला है । अभिरक्षा में किसी व्यक्ति द्वारा दी गई इस जानकारी से कि 'मैं मेरे मकान की छत में छिपाए गए चाकू को निकालकर प्रस्तुत कर दूंगा' चाकू का पता नहीं चलता है क्योंकि चाकुओं का पता तो कई वर्ष पहले चल गया था । इसके परिणामस्वरूप इस तथ्य का पता चलता है कि जानकारी देने वाले के मकान में एक चाकू छिपाया गया है और उसे उसकी जानकारी है और यदि चाकू को अपराध कारित करने में प्रयुक्त किया जाना साबित कर दिया जाता है, तो पता चला तथ्य अति सुसंगत है । किंतु यदि इस कथन में ये शब्द जोड़ दिए जाएं कि 'जिससे मैंने 'ए' को चाकू घोंपा था', ये शब्द अग्राह्य हैं क्योंकि वे जानकारी देने वाले के मकान में चाकू का पता चलने से संबंधित नहीं हैं ।'

128. उदय भान **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य {[1962] सप्ली. 2 एस. सी. आर. 830 = ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 1116 = (1962) 2 क्रि. ला जर्नल 251} वाले मामले में भी न्यायमूर्ति जे. एल. कपूर ने कोट्टया वाले मामले को [ए. आई. आर. 1947 पी.सी.

67 = 48 क्रि. ला जर्नल 533 = 74 आई.ए. 65] निर्दिष्ट करने के पश्चात् विधिक स्थिति का निम्नलिखित रूप में उल्लेख किया –

> 'पता चले तथ्य में पाई गई वस्तु, वह स्थान जहां से इसे प्रस्तुत किया जाता है और इसके विद्यमान होने के बारे में अभियुक्त का ज्ञान सम्मिलित है ।'

विधि का उपरोक्त कथन श्री राम जेठमलानी की इस दलील के प्रतिकूल नहीं है कि पता चले तथ्य में भौतिक वस्तु और उसके संबंध में जानकारी देने वाले अभियुक्त की मानसिक सचेतता सम्मिलित है । तथापि, तब क्या स्थिति होगी यदि भौतिक वस्तु अभियुक्त के बताने पर बरामद नहीं की गई हो, इस बात की चर्चा इन मामलों में से किसी में भी नहीं की गई थी ।"

13. अत: किसी मामले को साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन लाने के लिए अभियोजन पक्ष के लिए यह सिद्ध करना आवश्यक होगा कि अभियुक्त द्वारा पुलिस अभिरक्षा में रहते हुए दी गई जानकारी के परिणामस्वरूप ऐसे तथ्य का पता चला था जो स्पष्ट रूप से उक्त कथन को करने वाले के ज्ञान में था । ऐसी जानकारी में से केवल उतनी, जितनी तद्द्वारा पता चले तथ्य से स्पष्टतया संबंधित है, ग्राह्य होगी । यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इस उपबंध के पीछे का तर्काधार यह है कि यदि दी गई जानकारी के परिणामस्वरूप वास्तव में किसी तथ्य का पता चलता है, तो इससे इस बात की कुछ गारंटी हो जाती है कि जानकारी सही है और इसलिए इसे अपराध में आलिप्त करने वाले कारक के रूप में अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य में सुरक्षित रूप से ग्रहण किया जाना अनुज्ञात किया जा सकता है ।

14. अत: हमें यह परीक्षा करनी होगी कि क्या अभियोजन पक्ष ने युक्तियुक्त संदेह के परे यह साबित किया है कि शव की बरामदगी अभियुक्तों द्वारा साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभिलिखित किए गए कथन में दी गई जानकारी के आधार पर की गई थी या नहीं । अभियोजन पक्ष को यह सिद्ध करना होगा कि अभियुक्तों द्वारा दी गई उस जानकारी से पूर्व जिसके आधार पर शव बरामद किया गया था,

किसी व्यक्ति को उस स्थान पर शव के मौजूद होने के बारे में ज्ञान नहीं था जहां से इसे बरामद किया गया था ।

15. जहां तक साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन ज्ञापन का संबंध है, अभियोजन पक्ष ने रामकुमार (अभि. सा. 5) और अजब सिंह (अभि. सा. 18) के अभिसाक्ष्यों का अवलंब लिया है । अभियोजन पक्ष के अनुसार, रविशंकर टंडन (अभियुक्त सं. 1) का कथन तारीख 3 दिसंबर, 2011 को 10.00 बजे पूर्वाह्न में अभिलिखित किया गया था । उसी दिन ही उमेंद प्रसाद धृतलहरे (अभियुक्त सं. 2) का कथन 10.30 बजे पूर्वाह्न में और दिनेश चंद्राकर (अभियुक्त सं. 3) का कथन 11.00 बजे पूर्वाह्न में अभिलिखित किया गया था । जबकि सत्येन्द्र कुमार पात्रे (अभियुक्त सं. 4) का कथन तारीख 6 दिसंबर, 2011 को 7.00 बजे अपराह्न में अभिलिखित किया गया था । रामकुमार (अभि. सा. 5) के साक्ष्य के सुसंगत भाग को निर्दिष्ट करना प्रासंगिक होगा, जो इस प्रकार है :–

> "2. मेरे सामने अभियुक्त रविशंकर ने पुलिस को बताया था कि अभियुक्त दिनेश के कहने पर उन्होंने 90,000/- रुपए के लिए धर्मेंद्र की हत्या की थी और एक योजना बनाई थी तथा रविशंकर ने धर्मेंद्र को चांदी खरीदने के लिए बुलाया था और भटगांव में उसकी हत्या कर दी तथा उसके शव को एक बोरी में लपेटा और इसे तालाब में फेंक दिया । प्रदर्श पी-10 पर कथन के ज्ञापन को दिखाने पर उसने भाग 'ए' से 'ए' पर अपने हस्ताक्षर होने की बात बताई ।
>
> 3. उमेंद ने भी मेरे सामने पुलिस को बताया था कि सत्तू ने रविशंकर के साथ धर्मेंद्र की हत्या की थी और उसे दिनेश के कहने पर भटगांव की झील में फेंक दिया था । इस साक्षी के कथन का ज्ञापन प्रदर्श पी-11 है और भाग 'ए' से 'ए' पर अपने हस्ताक्षर होने की बात स्वीकार की है ।
>
> 4. दिनेश ने मेरे सामने बताया था कि छह माह पहले उसने रविशंकर और सत्तू के साथ 90,000/- रुपए के लिए धर्मेंद्र की हत्या

करने का सौदा किया था । दिनेश ने यह भी बताया था कि शंकर ने कहा था कि काम हो गया है, उसे धनराशि दी जाए । प्रदर्श पी-12 दिखाए जाने पर इसके 'ए' से 'ए' भाग पर अपने हस्ताक्षर होने की बात स्वीकार की । इस साक्षी ने कथन किया कि इसे मेरे सामने तालाब से अभिगृहीत किया गया था ।

5. गांव कुंडा मेरे गांव से 16 किलोमीटर दूर है । यह सही है कि धर्मेंद्र की हत्या के बारे में पता 3 तारीख को चला था । इस साक्षी ने कहा कि पुलिस द्वारा यह जानकारी दी गई थी । यह सही है कि अगले दिन सवेरे लगभग 7.00-8.00 बजे गांव कुंडा में मेरे पहुंचने पर मेरे बहनोई और भतीजे नरेन्द्र ने मुझे हत्या के बारे में बताया था जो अभियुक्तों द्वारा की गई थी । उस समय तक हम घटनास्थल पर नहीं पहुंचे थे । इसलिए इसी वजह से यह धर्मेंद्र का शव था या नहीं, मैं नहीं कह सकता ।

6. मैं 2 तारीख को पुलिस के साथ कुंडा से भटगांव गया, फिर उसने कहा कि उस समय सायं के 2.30 बजे थे । यह सही है कि जब मैं भटगांव पहुंचा, वहां गांव के बहुत सारे लोग थे । यह सही है कि शव के कारण वहां बहुत सारे लोग थे । यह कहना सही है कि पुलिस शव को मुंगेली पुलिस थाने से लाई थी जहां मरणोत्तर परीक्षा की गई थी ।

7. यह सही है कि अभियुक्तों को मुंगेली पुलिस थाने लाया गया था । यह सही नहीं है कि मैंने मुंगेली पुलिस थाने में अभियुक्तों के हस्ताक्षर कराए थे । अभियुक्तों ने मेरे सामने कुंडा पुलिस थाने में कथन किए थे । अभियुक्तों के अतिरिक्त, पुलिस थाना कुंडा में हम परिवार के 5-6 अन्य सदस्य थे । पुलिस ने लगभग 12.00 बजे कथन लिया था ।

.....

14. हम 4.30-5.00 बजे भटगांव पहुंचे और मुंगेली सूर्यास्त से पहले पहुंचे । यह कहना सही नहीं है कि पुलिस ने मेरे हस्ताक्षर

कराए थे । इस साक्षी ने स्वयं यह कहा है कि मैंने भटगांव में हस्ताक्षर किए थे । यह कहना सही नहीं है कि मैंने कागजातों को उन पर हस्ताक्षर करने से पहले नहीं पढ़ा था । साक्षी का कहना है कि मैंने मुख्य भाग को पढ़ा था । यह कहना सही नहीं है कि मैंने आज पहली बार अभियुक्तों को देखा है । यह कहना सही नहीं है कि मैं अभियुक्तों को केवल नाम से जानता हूं साक्षी ने कथन किया है कि मैं चेहरे से भी उन्हें जानता हूं । यह कहना सही नहीं है कि अभियुक्तों का नाम मेरे बहनोई और नरेन्द्र द्वारा प्रकट किया गया था या पुलिस द्वारा बताया गया था ।"

16. यह उल्लेखनीय है कि रामकुमार (अभि. सा. 5) मृतक का बहनोई है । उसके साक्ष्य के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि उसने स्वीकार किया था कि गांव कुंडा में उसके पहुंचने पर उसे उसके बहनोई और भतीजे नरेन्द्र कुमार (अभि. सा. 2) द्वारा मृतक की हत्या के बारे में सूचित किया गया था जो अभियुक्तों द्वारा की गई थी । उसने कथन किया था कि उस समय तक वे घटनास्थल पर नहीं पहुंचे थे और यही कारण है कि उन्हें इस बारे में जानकारी नहीं थी कि यह शव धर्मेंद्र का था या नहीं । उसने यह भी स्वीकार किया कि जब वे भटगांव पहुंचे तो वहां गांव के बहुत सारे लोग थे । उसने यह भी स्वीकार किया कि शव होने के कारण वहां बहुत सारे लोग थे । उसने यह भी स्वीकार किया कि अभियुक्तों ने कुंडा पुलिस थाने में अपने कथन किए थे । उसने आगे यह भी स्वीकार किया कि वे भटगांव लगभग 4.30 से 5.00 बजे अपराह्न में पहुंचे थे और मुंगेली सूर्यास्त से पहले पहुंचे थे । उसने यह भी कथन किया कि उसने पंचनामा पर हस्ताक्षर भटगांव में किए थे ।

17. इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि इस साक्षी (अभि. सा. 5) के अनुसार यद्यपि कथन कुंडा में किया गया था किंतु इस पर हस्ताक्षर भटगांव में किए गए थे ।

18. अजब सिंह (अभि. सा. 18) साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभिलिखित ज्ञापन और बाद में शव की बरामदगी का एक अन्य

साक्षी है । उसने यह कथन किया कि रविशंकर ने पुलिस को सूचित किया कि धर्मेंद्र की हत्या कर दी गई है और तालाब में फेंक दिया गया है । तथापि, उसने मुख्य परीक्षा में कहा था कि उमेंद और दिनेश ने उसके सामने पुलिस को कुछ नहीं बताया था । उसकी मुख्य परीक्षा को निर्दिष्ट करना सुसंगत होगा, जो इस प्रकार है :–

> "4. यह सही है कि मैं कोटवाड़ी के रूप में काम करता हूं । यह सही है कि मैंने कागजातों को नहीं पढ़ा था । यह सही है कि मैंने पुलिस के कहने पर 3-4 कागजातों पर हस्ताक्षर किए थे । यह सही है कि कोटवाड़ होने के कारण नियमित रूप से पुलिस थाने जाता रहता था । यह सही है कि मैंने दस्तावेजों पर पुलिस के कहने पर हस्ताक्षर किए थे । यह कहना गलत है कि मैंने पुलिस थाना कुंडा में हस्ताक्षर किए थे । साक्षी का कहना है कि इन पर डंढ़ान में हस्ताक्षर किए थे ।"

19. इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि अजब सिंह (अभि. सा. 18) ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया था कि उसने कागजातों को उन पर अपने हस्ताक्षर करने से पूर्व नहीं पढ़ा था । उसने स्वीकार किया कि उसने पुलिस के कहने पर 3-4 कागजातों पर हस्ताक्षर किए थे । उसने यह भी कथन किया कि उसने डंढ़ान में कथन पर हस्ताक्षर किए थे ।

20. नरेन्द्र कुमार (अभि. सा. 2) मृतक का भाई है । उसने कथन किया कि उसके भाई के गुम हो जाने के पश्चात् अगले दिन सवेरे लगभग 8.00 बजे पुलिस उनके स्थान पर आई और सूचित किया कि उसके भाई धर्मेंद्र की रविशंकर, सतनामी, उमेंद और सत्येन्द्र द्वारा हत्या कर दी गई है । उसके पश्चात् वे पुलिस के साथ भटगांव गए । नरेन्द्र कुमार (अभि. सा. 2) के साक्ष्य का उद्धरण निम्नलिखित है :–

> "3. सवेरे लगभग 8.00 बजे पुलिस मेरे स्थान पर आई और सूचित किया कि मेरे भाई धर्मेन्द्र की रविशंकर, सतनामी, उमेंद और सत्येन्द्र द्वारा हत्या कर दी गई है । उसके पश्चात् हम पुलिस के साथ भटगांव गए । रामकुमार, कृष्णा, बंसी मेरे साथ गए थे ।"

21. रामकुमार (अभि. सा. 5) के साक्ष्य के साथ पठित नरेन्द्र कुमार (अभि. सा. 2) के साक्ष्य का परिशीलन करने पर स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि पुलिस तथा ये साक्षी धर्मेन्द्र सतनामी की मृत्यु होने के बारे में और शव भटगांव में पाए जाने के बारे में साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभियुक्तों के कथन अभिलिखित करने से पूर्व जानते थे । सभी कथन 10.00 बजे पूर्वाह्न के बाद अभिलिखित किए गए हैं जबकि रामकुमार (अभि. सा. 2) ने कथन किया था कि लगभग 8.00 बजे पूर्वाह्न में पुलिस ने उसे अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा मृतक की हत्या करने के बारे में सूचित किया था और उसके पश्चात् वे भटगांव जा रहे थे । रामकुमार (अभि. सा. 5) ने भी स्वीकार किया था कि वह गांव कुंडा पहुंचा और उसके पहुंचने पर उसे उसके बहनोई और भतीजे द्वारा हत्या के बारे में सूचित किया गया था जो अभियुक्तों द्वारा की गई थी ।

22. अत: हम पाते हैं कि अभियोजन पक्ष यह साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा है कि भटगांव स्थित तालाब से मृतक के शव का केवल साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभियुक्तों द्वारा किए गए प्रकटन कथन के आधार पर ही पता चला था और कोई व्यक्ति उससे पूर्व इसके बारे में नहीं जानता था । यह भी उल्लेखनीय है कि अजब सिंह (अभि. सा. 18) ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि उसने कागजातों पर उन्हें पढ़े बिना हस्ताक्षर किए थे और वह भी पुलिस के कहने पर ।

23. रामकुमार (अभि. सा. 5) के साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि यद्यपि उसका बयान कुंडा पुलिस थाने में लिया गया था, तो भी इस पर हस्ताक्षर भटगांव में किए थे । इसलिए अभियुक्तों को फंसाने के लिए इन दस्तावेजों को सृजित किए जाने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता । किसी भी दशा में, जहां तक दिनेश चंद्राकर (अभि. सा. 3) का संबंध है, साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन का भी मृतक के शव की बरामदगी से कतई संबंध नहीं है । वस्तुत:, साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभिलिखित

किए गए उसके कथन के परिणामस्वरूप अपराध में आलिप्त करने वाले किसी तथ्य का पता नहीं चला था ।

24. एक अन्य पहलू जिसका उल्लेख किए जाने की आवश्यकता है, यह है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभियुक्तों के कथनों का ज्ञापन अभिलिखित करने के संबंध में एकमात्र साक्ष्य बी. आर. सिंह, तत्कालीन अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 16) का है । उसका सुसंगत भाग इस प्रकार है :–

> "1. ..... मैंने अभियुक्त रविशंकर का कथन ज्ञापन प्रदर्श पी-10 के अनुसार उसे अभिरक्षा में लेने के पश्चात् लिखा था जिस पर बी से बी भाग पर मेरे हस्ताक्षर हैं । मैंने अभियुक्त उमेंद का कथन उसके ज्ञापन प्रदर्श पी-11 के अनुसार और अभियुक्त दिनेश का कथन उसके ज्ञापन प्रदर्श पी-12 के अनुसार लिखा था जिन पर बी से बी भाग पर मेरे हस्ताक्षर हैं ।"

25. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 16) यह कथन करने में असफल रहा है कि अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा वह क्या जानकारी दी गई थी जिसके परिणामस्वरूप शव का पता चला था । यह साक्ष्य भी इस बारे में पूरी तरह से मौन है कि शव का कैसे पता चला था और बाद में इसकी बरामदगी की गई थी । अत: हमारा निष्कर्ष है कि अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 16) का साक्ष्य भी मामले को साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के क्षेत्र के अधीन नहीं लाता है । इस संबंध में **असर मोहम्मद और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] और **बोबी** बनाम **केरल राज्य**[2] वाले मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों का अवलंब लिया जा सकता है ।

26. अत: हमारा निष्कर्ष है कि अभियोजन पक्ष इस अपील में अपीलार्थियों के विरुद्ध अपराध में आलिप्त करने वाली किसी भी परिस्थिति को साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा है । किसी भी

---

[1] (2019) 12 एस. सी. सी. 253 = 2018 आईएनएससी 985.

[2] 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 50 = 2023 आईएनएससी 23.

दशा में, परिस्थितियों की श्रृंखला अवश्य इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि इसके परिणामस्वरूप अभियुक्त व्यक्तियों की दोषिता के सिवाय कोई अन्य निष्कर्ष न निकलता हो और वर्तमान मामले में ऐसा नहीं है ।

27. परिणामत:, हम निम्नलिखित आदेश पारित करते हैं :–

(i) ये अपीलें मंजूर की जाती हैं ;

(ii) उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 2 जनवरी, 2023 को पारित किए गए निर्णय विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 5 फरवरी, 2013 को पारित किए गए निर्णय को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है ; और

(iii) अपीलार्थियों को उन सभी आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है जिनसे उन्हें आरोपित किया गया था और यदि किसी अन्य मामले में आवश्यकता न हो, तो उन्हें तुरंत छोड़े जाने का निदेश दिया जाता है ।

28. लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, का निपटारा हो जाएगा ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2024] 2 उम. नि. प. 270

किरपाल सिंह

बनाम

पंजाब राज्य

[2009 की दांडिक अपील सं. 1052]

18 अप्रैल, 2024

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति संदीप मेहता

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 और 307 – हत्या और हत्या का प्रयत्न – हेतु – मृतक की पत्नी-इत्तिलाकर्ता द्वारा अपने साक्ष्य में घटना का यह हेतु प्रस्तुत किया जाना कि अभियुक्त के हलवाई के कारबार के मुकाबले मृतक के जोरदार रूप से चल रहे हलवाई के कारबार से ईर्ष्या रखने के कारण अभियुक्त द्वारा सह-अभियुक्त के साथ मृतक के मकान में जाकर प्रथम तल पर सो रहे मृतक को क्षतियां कारित किया जाना और फिर नीचे आकर भूतल पर परिवार के अन्य सदस्यों के साथ सो रही प्रथम इत्तिलाकर्ता (मृतक की पत्नी) को क्षतियां कारित किया जाना – क्षतियों के कारण मृतक की मृत्यु हो जाना – अभियुक्त को हत्या और हत्या के प्रयत्न के अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना और सह-अभियुक्त को दोषमुक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – जहां अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करने के उपरांत साक्षियों का साक्ष्य पूर्णत: अविश्वसनीय पाया गया हो और उसकी संपुष्टि के लिए कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत न किया गया हो, साक्षियों के साक्ष्य में विरोधाभास पाया गया हो, घटना का हेतु भी अत्यंत कमजोर और संदेहास्पद हो, वहां अभियुक्त को संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि प्रथम इत्तिलाकर्ता (अभि. सा. 5), (मृतक की पत्नी) अपने परिवार के सदस्यों के साथ बस अड्डा, खुड्डा पर उसके पति (मृतक) के स्वामित्व वाली पंसारी और हलवाई की दुकानों

की पिछली तरफ स्थित मकान में रह रही थी । तारीख 12/13 नवंबर, 1997 की मध्यवर्ती रात्रि में मृतक से मकान के चौबारे में सोने के लिए चला गया, जिसका कोई दरवाजा नहीं था, जबकि उसकी पत्नी (अभि. सा. 5) परिवार के अन्य सदस्यों के साथ भूतल पर स्थित कमरे में सो रही थी । यह अभिकथन किया गया कि लगभग 2.30 बजे पूर्वाह्न में शरण कौर (अभि. सा. 5) ने कमरे के उस दरवाजे पर खटखटाने की आवाज सुनी जिसमें वह सो रही थी । उसने सोचा कि उसका पति है और इसलिए उसने दरवाजा खोल दिया । अपीलार्थी ने आयुध से शरण कौर (अभि. सा. 5) के उदर पर क्षति कारित की । एक अन्य हमलावर ने, जो अपीलार्थी किरपाल सिंह के साथ था, उसकी बाजू पकड़ ली । दोनों हमलावर क्षतियां कारित करके भाग गए । शरण कौर (अभि. सा. 5) अपने पति को देखने के लिए सीढ़ियां चढ़कर ऊपर गई और उसे चारपाई पर गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त पड़े हुए पाया तथा उसके मुंह और सिर से रक्त बह रहा था । शरण कौर (अभि. सा. 5) और उसके पति को सिविल अस्पताल ले जाया गया किंतु अस्पताल के रास्ते में उसके पति का देहांत हो गया । अभियोजन पक्ष का यह अभिकथन था कि घटना के पीछे का हेतु यह था कि अपीलार्थी और उसका साथी बलविन्दर सिंह (मृतक) की हलवाई की दुकान पर किए जा रहे जोरदार कारोबार के कारण ईर्ष्या कर रहे थे, जो कि अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा चलाई जा रही हलवाई की दुकान की तुलना में अधिक बेहतर कर रहा था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त अपीलार्थी-किरपाल सिंह को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । तथापि, उसी निर्णय के द्वारा सह-अभियुक्त को आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया । अभियुक्त अपीलार्थी-किरपाल सिंह द्वारा पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष अपनी दोषसिद्धि और दंडादेश को चुनौती देते हुए दांडिक अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा अपील को खारिज कर दिया गया । अभियुक्त द्वारा व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रथम इत्तिलाकर्ता, शरण कौर (अभि. सा. 5) (प्रमुख अभियोजन साक्षी जिसे स्वयं को उसी घटना में क्षति पहुंची थी) के

साक्ष्य में यथा प्रकटित अभियोजन का पक्षकथन यह है कि वह अपने दो पुत्रों दलजीत सिंह **उर्फ** गोल्डी (अभि. सा. 6) और गुरमीत सिंह के साथ मकान के भूतल पर स्थित कमरे में सो रही थी, जबकि उसका पति बलविन्दर सिंह (मृतक) चौबारे में सो रहा था जिसका कोई दरवाजा नहीं था । अभियोजन पक्ष ने इस बात पर जोर देने की कोशिश की है कि अभियुक्त ने मकान की दीवार पर एक सीढ़ी लगाई, उसकी सहायता से चौबारे में चढ़ा और एक फावड़े से बलविन्दर सिंह (मृतक) पर प्रहार किया जिसके परिणामस्वरूप उसे गंभीर क्षतियां पहुंचीं । घटना के लिए हेतु, जैसाकि शरण कौर (अभि. सा. 5) के साक्ष्य में प्रस्तुत किया गया है, यह था कि अभियुक्त उसके पति के हलवाई के फलते-फूलते कारबार के कारण ईर्ष्या रखता था जबकि अभियुक्त का कारबार उतना फल-फूल नहीं रहा था । तथापि, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि घटना के लिए अभियुक्त पर इस हेतु को अभ्यारोपित करते हुए शरण कौर(अभि. सा. 5) द्वारा किए गए इस अस्पष्ट प्रकथन के सिवाय अन्वेषण अधिकारियों द्वारा हेतु की इस कहानी पर विश्वास करने के लिए कोई संपुष्टिकारी सामग्री एकत्रित नहीं की गई थी । इस पहलू पर शरण कौर (अभि. सा. 5) का कथन भी बहुत अस्पष्ट है । उसके अभिसाक्ष्य में ऐसा कुछ नहीं है जिससे न्यायालय का समाधान हो सके कि केवल इस तथाकथित ईर्ष्या के कारण ही अभियुक्त ने उस मकान की दीवार पर सीढ़ी लगाकर इतना परिश्रम किया होगा जहां बलविन्दर सिंह (मृतक) अपने परिवार के साथ रहता था और फिर उस सीढ़ी पर चढ़कर उसकी हत्या की होगी और वह भी उसके परिवार के सदस्यों की मौजूदगी में । यदि अभियोजन के पक्षकथन को स्वीकार किया जाए, तो यह स्पष्ट है कि अभियुक्तों ने बलविन्दर सिंह (मृतक) की हत्या करने की योजना बड़ी मेहनत से बनाई होगी क्योंकि उन्होंने मकान की बाह्य दीवार पर सीढ़ी लगाई, उस सीढ़ी का प्रयोग करके मकान में चढ़े और फावड़े से मृतक पर आक्रमण किया । इस प्रकार, बलविन्दर सिंह (मृतक) की जोरदार पिटाई करने के पश्चात् उसी क्षण अभियुक्तों का प्रयोजन पूरा हो गया होगा और इसलिए कोई कारण नहीं था कि क्यों अभियुक्त परिवार के अन्य सदस्यों के सामने अपना भेद खोलने की जोखिम लेते । यही वह यथावत् कहानी है

जो शरण कौर के साक्ष्य में प्रस्तुत की गई है, जिसने कथन किया था कि जब वह भूतल पर अपने दो पुत्रों के साथ कमरे में सो रही थी तब उसने कुछ शोर सुनाई दिया और चौबारे से लगी सीढ़ियों पर जाने वाला दरवाजा खोला और उसमें अभियुक्त-अपीलार्थी किरपाल सिंह और उसके साथी को खड़े हुए देखा । अभियुक्तअपीलार्थी किरपाल सिंह, जो एक चाकू से लैस था, ने उसके उदर में चाकू घोंप दिया जबकि अन्य अभियुक्त अपीलार्थी ने उसकी बाजू पकड़ ली । अभियोजन पक्ष के अनुसार, अभियुक्त अपीलार्थी ने बलविन्दर सिंह (मृतक) पर एक फावड़े से हमला किया था जिसे घटनास्थल पर छोड़ दिया गया था और फिर अभियुक्त चाकू के साथ नीचे आए थे । अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत की गई इस कहानी से कई कारणों से विश्वास प्रेरित नहीं होता है । जैसी की ऊपर चर्चा की गई है, जब एक बार अभियुक्तों का बलविन्दर सिंह (मृतक) को समाप्त करने का उद्देश्य किसी को पता चले बिना पूरा हो गया था, तो उनके पास उसी सीढ़ी का प्रयोग करके जो चौबारे में चढ़ने के लिए प्रयुक्त की गई थी, घटनास्थल से बचकर भागने का पूरा अवसर था । इस प्रकार, अभियुक्तों के लिए नीचे आकर और परिवार के सदस्यों को सचेत करके अपना भेद खोलने का कोई कारण नहीं था । इसके अतिरिक्त, अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार दो अभियुक्त घटना में अंतर्वलित थे । यदि अभियोजन के पक्षकथन पर विश्वास भी किया जाए, तो बलविन्दर सिंह (मृतक) की हत्या करने के पश्चात् अभियुक्त अवश्य परिवार के अन्य सदस्यों को समाप्त करने के लिए नीचे आए होंगे और इस पृष्ठभूमि में कोई कारण नहीं था कि अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ वाला व्यक्ति निहत्था था । इस बात से भी अभियोजन पक्ष की कहानी की सत्यता पर संदेह पैदा होता है । प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) ने अन्वेषण अभिकरण के आचरण के संबंध में यह अभिकथन करते हुए एक बड़ा मुद्दा बनाया था कि जो अन्वेषण किया जा रहा है वह पक्षपातपूर्ण और दूषित है । उसने मुख्यमंत्री और उच्च न्यायालय सहित विभिन्न मंचों के समक्ष आवेदन फाइल किए थे । उसकी प्रतिपरीक्षा में इन आवेदनों से विस्तारपूर्वक उसका सामना कराया गया था और वास्तव में वह उनमें किए गए प्रकथनों से मुकर गई थी ।

प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) ने अपनी मुख्य परीक्षा में स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि उसका कथन तारीख 13 नवंबर, 1997 को लगभग 7.30 बजे पूर्वाह्न में सिविल अस्पताल, दसुया में अभिलिखित किया गया था । इसे उसे पढ़कर सुनाया और स्पष्ट किया गया था और उसने इस पर इसे सही होना स्वीकार करते हुए हस्ताक्षर किए थे । यदि ऐसा है, तो शरण कौर (अभि. सा. 5) के बाद में यह शोर मचाने के इस आचरण से उसकी विश्वसनीयता पर अत्यधिक संदेह पैदा होता है कि जो अन्वेषण किया जा रहा है वह दूषित है और पुलिस ने अपराधियों की सूची से सह-अभियुक्त कुलविन्दर सिंह का नाम हटाकर साशय उसकी सहायता की थी । न तो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-पीजी/2) और न ही प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरणकौर (अभि. सा. 5) द्वारा हस्ताक्षरित और मुख्यमंत्री पंजाब को संबोधित आवेदन (प्रदर्श-डीए) में दूसरे अभियुक्त कुलविन्दर सिंह का नाम हमलावरों में से एक के रूप में वर्णित है । यह विवादग्रस्त नहीं है कि दोषमुक्त अभियुक्त कुलविन्दर सिंह और अपीलार्थी किरपाल सिंह मृतक और प्रथम इत्तिलाकर्ता के परिवार के घनिष्ठ संबंधी हैं । इस स्थिति में, यदि प्रथम इत्तिलाकर्ता ने घटना के समय पर अपराधियों की शनाख्त की थी, तो कोई कारण नहीं था कि वह पुलिस अधिकारी, जिसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-पीजी/2) अभिलिखित की थी, को कथन करते समय कुलविन्दर सिंह का नाम क्यों छोड़ती । इस साक्षी का उसके द्वारा अन्वेषण अभिकरणों द्वारा किए जा रहे अन्वेषण की सद्भाविकता को प्रश्नगत करते हुए फाइल किए गए अन्य आवेदनों/याचिकाओं, प्रदर्श-डीबी, प्रदर्श-डीजी आदि से विस्तारपूर्वक सामना कराया गया था और उसने स्वयं उसके द्वारा फाइल किए गए इन आवेदनों/याचिकाओं में उपवर्णित वृत्तांतों का समर्थन करने से इनकार कर दिया था । इतना ही नहीं, प्रथम इत्तिलाकर्ता का एक कथन (प्रदर्श-डीएल) पुलिस उप अधीक्षक राजेन्द्र सिंह द्वारा अभिलिखित किया गया था, जिसमें यह कहा गया था कि कुछ अज्ञात व्यक्ति उनके मकान में घुसे और इस साक्षी और उसके पति को क्षतियां कारित कीं जिसका घटना में देहांत हो गया था । यद्यपि प्रथम इत्तिलाकर्ता ने यह कथन करने की बात से इनकार किया किंतु इस तथ्य

से निश्चित रूप से उसकी कहानी की सत्यता पर संदेह पैदा होता है । प्रथम इत्तिलाकर्ता द्वारा दिए गए इस अभिसाक्ष्य की विश्वसनीयता पर गंभीर संदेह पैदा होता है जब हम इस तथ्य पर विचार करते हैं कि उसने अपनी मुख्य परीक्षा में यह दावा किया था कि उसके पुत्र द्वारा एक वैन को लाया गया था जिसमें उसे और उसके पति को सिविल अस्पताल, टांडा ले जाया गया था जहां चिकित्सा अधिकारियों ने यह राय व्यक्त की थी कि उसके पति का देहांत हो गया है और इस साक्षी का चिकित्सीय परीक्षण किया गया था । तथापि, उन्होंने इस राय पर विश्वास नहीं किया और विपदग्रस्त को भोगपुर ले गए जहां पुनः डाक्टरों ने यह दोहराया था कि उसके पति का देहांत हो गया है । केवल इस पुष्टि के पश्चात् ही बलविन्दर सिंह के शव को वापस मकान पर लाया गया था जहां पुलिस पहले से मौजूद थी । इस वृत्तांत से, जो प्रथम इत्तिलाकर्ता शरण कौर (अभि. सा. 5) के परिसाक्ष्य में उपवर्णित है, उसकी विश्वसनीयता पूरी तरह ध्वस्त हो जाती है । इस पहलू पर दो मत नहीं हो सकते कि यदि किसी राजकीय अस्पताल में मानव वध मृत्यु का मामला आता है तो डाक्टर तुरंत पुलिस को सूचित करते हैं और इस बात की कोई संभावना नहीं है कि शव को परिवार के सदस्यों द्वारा ले जाने की अनुज्ञा दी गई होगी । (पैरा 17-21)

शरण कौर (अभि. सा. 5) और दलजीत सिंह (अभि. सा. 6) के साक्ष्य पर अभिलेख पर उपलब्ध अन्य साक्ष्य के प्रतिनिर्देश करके विचार करने पर हमारी दृढ़ राय है कि ये दोनों साक्षी द्वितीय प्रवर्ग अर्थात् पूर्णतः अविश्वसनीय के अंतर्गत आते हैं । अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को अपराध से संपृक्त करने के लिए कोई अन्य ठोस साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अभियोजन पक्ष की हेतु से संबंधित कहानी बहुत ही कमजोर और बल्कि असंभव और अविश्वसनीय है जिससे कि उसका अवलंब लिया जा सके । दो अन्वेषण अधिकारियों ने पूर्ण रूप से अन्वेषण किया था और प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) द्वारा प्रस्तुत किया गया संपूर्ण मामला मिथ्या पाया गया था । प्रथम इत्तिलाकर्ता का आचरण अवलंब लेने योग्य नहीं है, जब हम इस तथ्य पर विचार करते

हैं कि उसने विभिन्न याचिकाएं फाइल करके जब अन्वेषण अभी चल ही रहा था और यहां तक कि विचारण के दौरान अपने परिसाक्ष्य में भी कुलविन्दर सिंह को फंसाने की कोशिश की थी । तथापि, यहां तक कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-पीजी/2) में भी, जो स्वीकृत रूप से उसके स्वयं के कथन के आधार पर रजिस्ट्रीकृत की गई थी, प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) ने इस अपील में अपीलार्थी-अभियुक्त के साथ सह-हमलावर के रूप में उक्त कुलविन्दर सिंह को नामित नहीं किया था । यहां तक कि पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल की गई याचिका अर्थात् 1998 की प्रकीर्ण याचिका सं. 2053-एम में भी उक्त कुलविन्दर सिंह के नाम का उल्लेख नहीं था । अभियुक्त पर हमला करने के लिए अभिकथित रूप से प्रयुक्त फावड़ा घटनास्थल पर पड़ा हुआ पाया गया था । सारे के सारे अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य पर विचार करने पर हम पाते हैं कि अभियुक्त-अपीलार्थी के बताने पर अपराध करने के लिए प्रयुक्त किसी आयुध की बरामदगी नहीं की गई थी और इस प्रकार ऐसा कोई संपुष्टिकारी साक्ष्य नहीं है जिससे शरण कौर (अभि. सा. 5) और दलजीत सिंह (अभि. सा. 6) के ढुलमुल और अविश्वसनीय परिसाक्ष्य पर विश्वास किया जा सके । प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा लाजपाल सिंह (प्रति. सा. 3), उप पुलिस महा निरीक्षक (संचालन), पंजाब की परीक्षा की गई थी, जिसने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया था कि उसके अन्वेषण में उसने अभियुक्त को निर्दोष पाया था । अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण सामग्री पर गंभीरतापूर्वक विचार करने के पश्चात् इस न्यायालय का दृढ़ मत है कि शरण कौर (अभि. सा. 5) और दलजीत सिंह (अभि. सा. 6) का साक्ष्य पूर्णत: अविश्वसनीय है और न्यायालय में विश्वास प्रेरित नहीं होता है जिससे कि अपीलार्थी की दोषसिद्धि की अभिपुष्टि की जा सके । यह दोहराया जा सकता है कि अभियोजन पक्ष द्वारा ऐसा कोई संपुष्टिकारी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था जिससे कि इन दोनों साक्षियों के परिसाक्ष्य पर विश्वास किया जा सके । परिणामत:, अपीलार्थी को संदेह का फायदा देते हुए वह दोषमुक्त किए जाने योग्य है । परिणामस्वरूप, क्रमश: विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के तारीख 26 जुलाई, 2003 और 28

फरवरी, 2008 के निर्णयों को तद्द्वारा अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । अपीलार्थी को आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है । (पैरा 27-32)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[1957] ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 614 :
वाडीवेलु थेवर बनाम **महाराष्ट्र राज्य** । 26

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 1052.

2003 की दांडिक अपील सं. 662 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ द्वारा तारीख 28 फरवरी, 2008 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री विनीत झांजी, रणबीर सिंह कुंडू, इमरान मौला, रविन्द्र पाल सिंह और (सुश्री) ज्योति मेंदीरत्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री सिद्धांत शर्मा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति संदीप मेहता ने दिया ।

न्या. मेहता – यह अपील अपीलार्थी की ओर से 2003 की दांडिक अपील सं. 662-डीवी पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ तारीख 28 फरवरी, 2008 को पारित उस निर्णय को चुनौती देने के लिए फाइल की गई है, जिसके द्वारा अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील को खारिज कर दिया गया था और तद्द्वारा विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश (तदर्थ), होशियारपुर द्वारा तारीख 26 जुलाई, 2003 के उस निर्णय और आदेश की अभिपुष्टि की गई थी, जिसके द्वारा अपीलार्थी को निम्नलिखित अनुसार दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया था :–

(i) भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन – आजीवन कारावास और 2,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक माह की अवधि के लिए अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतेगा ।

(ii) भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन – पांच वर्ष का कठोर कारावास और 1,000/- रुपए का जुर्माना तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर 15 दिनों की अवधि के लिए अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतेगा ।

दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलने का आदेश किया गया था ।

संक्षिप्त तथ्य

2. शरण कौर, प्रथम इत्तिलाकर्ता (अभि. सा. 5), बलविन्दर सिंह (मृतक) की पत्नी अपने परिवार के सदस्यों के साथ उस मकान में रहती थी जो बस अड्डा, खुड्डा पर उसके पति बलविन्दर सिंह (मृतक) के स्वामित्व वाली पंसारी और हलवाई की दुकानों की पिछली तरफ स्थित था । तारीख 12/13 नवंबर, 1997 की मध्यवर्ती रात्रि में बलविन्दर सिंह (मृतक) मकान के चौबारे में सोने के लिए चला गया, जिसका कोई किवाड़ नहीं लगा था, जबकि शरण कौर (अभि. सा. 5) परिवार के अन्य सदस्यों के साथ भूतल पर स्थित कमरे में सो रही थी । यह अभिकथन किया गया कि लगभग 2.30 बजे पूर्वाह्न में शरण कौर (अभि. सा. 5) ने कमरे के उस दरवाजे पर खटखटाने की आवाज सुनी जिसमें वह सो रही थी । उसने सोचा कि उसका पति है जिसने दरवाजा खटखटाया है और इसलिए उसने दरवाजा खोल दिया । आंगन में बिजली की रोशनी में उसने अभियुक्त अपीलार्थी-किरपाल सिंह को छुरे जैसे एक चाकू से लैस खड़े हुए देखा । अपीलार्थी ने आयुध से शरण कौर (अभि. सा. 5) के उदर पर क्षति कारित की । एक अन्य हमलावर ने, जो अपीलार्थी किरपाल सिंह के साथ था, उसकी बाजू पकड़ ली । वह 'मार दिया मार दिया' ('मार दित्ता मार दित्ता') का शोर मचाते हुए चिल्लाई, जिस पर उसके पुत्र गोल्डी और सोनू जाग उठे । इन तीनों व्यक्तियों में से कोई भी अन्य हमलावर की शनाख्त नहीं कर सका । दोनों हमलावर दो दुकानों के बीच के मुख्य दरवाजे को खोल कर भाग गए । शरण कौर (अभि. सा. 5) अपने पति को देखने के लिए सीढ़ियां चढ़कर ऊपर गई और उसे चारपाई पर गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त पड़े हुए पाया तथा उसके मुंह और सिर से रक्त बह रहा था । नीचे जमीन पर रक्त पड़ा हुआ था । वह बोलने में असमर्थ था । उसने अपने दोनों पुत्रों को बुलाया और

उन्हें अपने जेठ गुरनाम सिंह को एक यान के साथ बुलाने के लिए भेजा । शरण कौर (अभि. सा. 5) और बलविन्दर सिंह को सिविल अस्पताल, टांडा ले जाया गया किंतु अस्पताल के रास्ते में बलविन्दर सिंह का देहांत हो गया । शरण कौर (अभि. सा. 5) को प्राथमिक चिकित्सा दी गई, उसके पश्चात् उसे तथा बलविन्दर सिंह (मृतक) के शव को उसी यान में वापस उनके घर लाया गया और उस समय तक पुलिस पहुंच गई थी । अभियोजन पक्ष ने यह अभिकथन किया कि घटना के पीछे का हेतु यह था कि अपीलार्थी और उसका साथी बलविन्दर सिंह (मृतक) की हलवाई की दुकान पर किए जा रहे जोरदार कारोबार के कारण ईर्ष्या कर रहे थे, जो कि अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा चलाई जा रही हलवाई की दुकान की तुलना में अधिक बेहतर कर रहा था । स्वर्ण दास (अभि. सा. 9), थाना अधिकारी, पुलिस थाना दसुया ने शरण कौर (अभि. सा. 5) का कथन अभिलिखित किया जिसमें उपरोक्त अभिकथनों को सम्मिलित किया गया और उनके आधार पर तारीख 13 नवंबर, 1997 को पुलिस थाना, दसुया, जिला होशियारपुर में भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और 307 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए 1997 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 126 रजिस्ट्रीकृत की गई । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को विचारण के दौरान प्रदर्श-पीजी/2 के रूप में चिह्नित किया गया था । अन्वेषण अधिकारी ने बलविन्दर सिंह (मृतक) के शव की मृत्यु-समीक्षा रिपोर्ट तैयार की और शव को मरणोत्तर परीक्षा के लिए सिविल अस्पताल, दसुया प्रेषित किया ; अपराध स्थल की कच्ची स्थल योजना तैयार की ; घटनास्थल से रक्तरंजित मिट्टी एकत्रित की गई और एक पार्सल में मुहरबंद की गई । अपराध स्थल पर पड़े हुए एक फावड़े को अभिगृहीत किया गया, जिसका फलक रक्तरंजित था । अपराध स्थल से एक सीढ़ी भी अभिगृहीत की गई ।

3. बलविन्दर सिंह के शव की डा. नरेश कुमार (अभि. सा. 4), चिकित्सा अधिकारी, सिविल अस्पताल दसुया के हाथों तारीख 13 नवंबर, 1997 को शव-परीक्षा की गई जिसने शव का परीक्षण किया और मृतक के शव पर निम्नलिखित क्षतियां होने का उल्लेख किया :–

"i. माथे की बाईं तरफ हड्डी की गहराई तक 1.5 सें. मी. का

चिरा हुआ घाव । बाईं भौंह के 2 सें. मी. ऊपर और बाह्य सिरे के पार्श्व तक तिर्यक रूप से स्थित इस घाव के मध्य में लाल रंग का नील था जिसकी सतह बाईं भौह के 1.5 सें. मी. ऊपर और समानांतर दबी हुई थी और इसका आकार 3 × 4 सें. मी. था ।

विच्छेदन करने पर दोनों अग्र भागों में सबऐपोन्यूरोटिक हेमाटोमा था । अग्रास्थि में कई सारे टुकड़ों में अस्थिभंग था जिनका मस्तिष्क के अंदरूनी ऊतक पर दबाव पड़ रहा था, मस्तिष्क के ऊतक के भीतर की झिल्ली और मस्तिष्क के ऊतक के बीच रक्त का अर्द्ध थक्का मौजूद था ।

ii. बाईं कर्णपालि के पीछे सिर के बाईं तरफ हड्डी की गहराई तक 1.5 सें. मी. × 1 सें. मी. का चिरा हुआ घाव । यह बाईं कर्णपालि के उपरि सिरे के 2.5 सें. मी. नीचे तियर्क रूप से स्थित था ।

iii. बाईं कर्णपालि के उपरि भाग पर कर्णपालि को दो भागों में बांटते हुए 2 सें. मी. × 1 सें. मी. का चिरा हुआ घाव ।'

4. यह उल्लेख किया गया था कि क्षतियां कुंद आयुध से कारित की गई थीं और यह राय व्यक्त की गई थी कि मृत्यु सिर पर पहुंचीं क्षति के कारण हुई थी जो प्रकृति के मामूली अनुक्रम मेंमृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी ।

5. डा. दिदार सिंह (अभि. सा. 1), चिकित्सा अधिकारी, सिविल अस्पताल, दसुया ने शरण कौर (अभि. सा. 5), प्रथम इत्तिलाकर्ता का चिकित्सीय परीक्षण किया और उदर की बाईं तरफ नाभि के 2 सें. मी. ऊपर और मध्य रेखा से 6 सें. मी. पार्श्व में 2½ × ½ सें. मी. माप का वृताकार आकार में एक विदीर्ण घाव पाया । तथापि, घाव की गहराई का पता लगाने की कोशिश नहीं की गई और मामले को राय और उपचार के लिए शल्य चिकित्सा विशेषज्ञ को रेफर कर दिया गया था ।

6. मामले में उस समय एक अलग मोड़ आया जब प्रथम इत्तिलाकर्ता शरण कौर (अभि. सा. 5) ने अन्वेषण अधिकारी के विरुद्ध पक्षपात करने

और पुलिस का पक्ष लेने के लिए दूषित अन्वेषण करने का अभिकथन करना आरंभ किया ।

7. शरण कौर (अभि. सा. 5) ने अन्वेषण को केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो या किसी अन्य स्वतंत्र अभिकरण को अंतरित करने की ईप्सा करते हुए पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय में दो आवेदन फाइल किए । इन दोनों आवेदनों में उसका अभिकथन यह था कि कुलविन्दर सिंह नामक दूसरे अभियुक्त को अस्पष्ट कारणों से मामले से बाहर रखा गया है ।

8. जो भी स्थिति हो, दो विभिन्न पुलिस पदधारियों ने अन्वेषण किया और यह अभिकथन करते हुए समापन रिपोर्टें फाइल कीं कि प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) ने अभियुक्त को मिथ्या रूप से फंसाया था । तथापि, मजिस्ट्रेट इस राय से सहमत नहीं हुआ । अभियुक्त अपीलार्थी-किरपाल सिंह **उर्फ** लक्की को तारीख 21 नवंबर, 1997 को गिरफ्तार किया गया और उसके विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 307 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोप पत्र फाइल किया गया । चूंकि दोनों अपराध सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय थे इसलिए मामले को विचारण के लिए अपर सेशन न्यायाधीश (तदर्थ), होशियारपुर (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'विचारण न्यायालय' कहा गया है) को सुपुर्द किया गया ।

9. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित किए, जिसने अपनी दोषिता से इनकार किया और विचारण किए जाने का दावा किया । अभियोजन पक्ष द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'दंड प्रक्रिया संहिता' कहा गया है) की धारा 319 के अधीन एक आवेदन फाइल किया गया, जिसे मंजूर किया गया और अभियुक्त कुलविन्दर सिंह को आरोप-पत्रित अभियुक्त अर्थात् इस अपील में अपीलार्थी के साथ विचारण का सामना करने के लिए समन किया गया । दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 307 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए नए सिरे से आरोप विरचित किए गए जिनके लिए उन्होंने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का

दावा किया । अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन का समर्थन करने के लिए दस साक्षियों की परीक्षा की ।

10. अभियुक्तों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन उनके कथनों को अभिलिखित करते समय अभियोजन पक्ष के साक्ष्य में प्रकट अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थितियों को बताया गया । अभियुक्तों ने उन अभिकथनों से इनकार किया और निर्दोष होने का दावा किया । प्रतिरक्षा में कुल चार (4) साक्षियों की परीक्षा की गई । विद्वान् अपर लोक अभियोजक और प्रतिरक्षा पक्ष के काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों को सुनने के पश्चात् और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन करने के उपरांत विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 26 जुलाई, 2003 के निर्णय द्वारा अभियुक्त अपीलार्थी-किरपाल सिंह को दोषसिद्ध किया और उसे इसमें ऊपर उल्लिखित अनुसार दंडादिष्ट किया । तथापि, उसी निर्णय के द्वारा सह-अभियुक्त कुलविन्दर सिंह को आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया । अभियुक्त अपीलार्थी-किरपाल सिंह ने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष अपनी दोषसिद्धि और दंडादेश को चुनौती देते हुए 2003 की दांडिक अपील सं. 662-डीबी फाइल की, जबकि राज्य ने 2000 की दांडिक अपील सं. 535-डीबीए फाइल की तथा शिकायतकर्ता ने कुलविन्दर सिंह की दोषमुक्ति को चुनौती देते हुए 2000 का दांडिक पुनरीक्षण सं. 2259-डीबी फाइल किया ।

11. पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की विद्वान् खंड न्यायपीठ ने दोनों अपीलों, राज्य द्वारा फाइल की गई अपील और दूसरी अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील के साथ-साथ शिकायतकर्ता द्वारा फाइल किए गए पुनरीक्षण आवेदन को तारीख 28 फरवरी, 2008 के एक ही निर्णय और आदेश द्वारा खारिज कर दिया, जिसे अभियुक्त अपीलार्थी-किरपाल सिंह की प्रेरणा पर इस अपील में चुनौती दी गई है ।

अपीलार्थी की ओर से दलीलें

12. अभियुक्त-अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री विनीत झांजी ने जोरदार रूप से दलील दी कि आक्षेपित निर्णय में

अभिलिखित किए गए निष्कर्ष अनुचित और परस्पर विरोधाभासी हैं और इसलिए इन्हें अपास्त किया जाना चाहिए । उन्होंने अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषमुक्ति की ईप्सा करते हुए निम्नलिखित महत्वपूर्ण दलीलें दीं:–

(i) शरण कौर (अभि. सा. 5), प्रथम इत्तिलाकर्ता जो मृतक की पत्नी है और दलजीत सिंह **उर्फ** गोल्डी (अभि. सा. 6), मृतक के पुत्र का साक्ष्य परस्पर-विरोधाभासी, ढुलमुल और अविश्वसनीय है ।

(ii) अभियोजन साक्षियों ने कार्यवाहियों के प्रत्येक प्रक्रम पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में दिए गए वृतांत में सुधार करने की कोशिश की है और इसलिए उनके साक्ष्य को त्यक्त किया जाना चाहिए । विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने पाया था कि साक्षी शरण कौर (अभि. सा. 5) और दलजीत सिंह **उर्फ** गोल्डी (अभि. सा. 6) पूर्णत: विश्वसनीस साक्षी नहीं हैं और सह-अभियुक्त-कुलविन्दर सिंह के संबंध में उनके अभिकथनों को अस्वीकार्य पाया गया था और तद्द्वारा उसकी दोषमुक्ति अभिलिखित की गई थी । इस प्रकार, अभियुक्त-अपीलार्थी (किरपाल सिंह) भी उसी प्रकार के बर्ताव का दायी है ।

(iii) शरण कौर (अभि. सा. 5) द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी पर अभ्यारोपित हेतु पूरी तरह से गढ़ा हुआ और अविश्वसनीय है । उसका यह अस्पष्ट अभिकथन कि अभियुक्त को बलविन्दर सिंह (मृतक) के फलते-फूलते हलवाई के कारबार के कारण ईर्ष्या हो गई थी, मात्र एक कल्पना है और किसी स्वतंत्र स्रोत द्वारा इसकी संपुष्टि नहीं की गई है बल्कि अभियोजन पक्ष ने यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य तक प्रस्तुत नहीं किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी हलवाई का कारबार करता है ।

(iv) अभियुक्त-अपीलार्थी स्वीकृत रूप से मृतक का घनिष्ठ नातेदार है किंतु इस तथ्य को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तथा तात्विक अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्य में छिपाया गया था ।

(v) शरण कौर (अभि. सा. 5) द्वारा अपने साक्ष्य में प्रस्तुत किया गया वृतांत पूर्णत: अविश्वसनीय है क्योंकि उसके स्वयं अपने

प्रकथन के अनुसार, अभियुक्त-अपीलार्थी मृतक के प्रति ईर्ष्या रखता था । इस स्थिति में, अभियुक्त जब एक बार एक सीढ़ी का प्रयोग करके गुप्त रीति में चौबारे में प्रवेश करके बलविन्दर सिंह (मृतक) के साथ मारपीट करने और हत्या करने में सफल हो गया था, तो कोई कारण नहीं था कि क्यों अभियुक्त सीढ़ियों से नीचे आएगा, दरवाजा खटखटाएगा और परिवार के अन्य सदस्यों को स्वयं को जोखिम में डालने के लिए सचेत करेगा ।

(vi) प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) और उसके परिवार के सदस्यों का बलविन्दर सिंह के शव को सिविल अस्पताल, टांडा के डाक्टर द्वारा उसे मृत घोषित किए जाने के पश्चात् भी वापस अपने मकान पर लाने के आचरण से इन साक्षियों की विश्वसनीयता गंभीर संदेह के घेरे में आ आती है । उन्होंने दलील दी कि स्वीकृत रूप से, टांडा से वापस आते हुए दसुया स्थित पुलिस थाना रास्ते में पड़ता है और इस प्रकार यदि उनके वृत्तांत में कतई कोई सच्चाई होती, तो साक्षी मामले की रिपोर्ट करने के लिए पुलिस थाने पर रुके होते । इसके अतिरिक्त, सिविल अस्पताल के डाक्टर ने निश्चित रूप से पुलिस को मामले की रिपोर्ट करने के लिए कदम उठाया होगा चूंकि यह मानव वध का एक स्पष्ट मामला था ।

(vii) प्रतिरक्षा पक्ष के साक्षियों ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि पूर्ण रूप से अन्वेषण करने के पश्चात् प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) द्वारा किए गए अभिकथन मिथ्या पाए गए थे और इसलिए पुलिस द्वारा संबंधित न्यायालय में समापन रिपोर्टें प्रस्तुत की गई थीं ।

(viii) दलजीत सिंह **उर्फ** गोल्डी (अभि. सा. 6), बलविन्दर सिंह (मृतक) और प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) के पुत्र के परिसाक्ष्य में प्रकटित अनुसार यह एक स्वीकृत पक्षकथन है कि मकान के चौबारे में बलविन्दर सिंह (मृतक) के साथ चार नौकर सो रहे थे किंतु साक्ष्य में उनकी परीक्षा नहीं की गई थी । इसी प्रकार, मृतक और प्रथम इत्तिलाकर्ता के अन्य पुत्र गुरमीत सिंह की भी

अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षा नहीं की गई थी और इसका कारण सर्वोत्तम रूप से उन्हें ही ज्ञात थे और इसलिए यह अभियोजन पक्ष के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकालने के लिए एक उपयुक्त मामला है ।

इन आधारों पर विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय से इस अपील को स्वीकार करने और अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषमुक्त करने की याचना की ।

राज्य की ओर से दलीलें

13. इसके विपरीत, राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री सिद्धांत शर्मा ने अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों का जोरदार रूप से और मजबूती से विरोध किया । उन्होंने माना कि अभियुक्त-कुलविन्दर सिंह की अंतर्ग्रस्तता के संबंध में अभियोजन पक्ष के वृत्तांत को विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने स्वीकार नहीं किया था किंतु, उनके अनुसार, यह कारण ही अभियुक्त-अपीलार्थी, जिसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट और तात्विक अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में नामित किया गया था, के संबंध में भी अभियोजन पक्ष के संपूर्ण पक्षकथन को त्यक्त करने के लिए विधिमान्य कारण नहीं हो सकता । उन्होंने जोरदार रूप से दलील दी कि अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में के तुच्छ विरोधाभासों से यह आश्वासन मिलता है कि वे सच्चे साक्षी हैं और गढ़े गए साक्षी नहीं हैं । उन्होंने दलील दी कि 'एक बात में मिथ्या, तो सब बात में मिथ्या' का सिद्धांत भारतीय दांडिक विधिशास्त्र प्रणाली पर लागू नहीं होता है और इसलिए मात्र इस कारण से कि अभियोजन साक्षियों द्वारा नामित दो अभियुक्तों में से एक को विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया है, अभियुक्त-अपीलार्थी इसका लाभ नहीं ले सकता है ।

14. उन्होंने यह भी दलील दी कि विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन और पुनर्मूल्यांकन करने के पश्चात् अनाज को भूसे से अलग किया था और अभियुक्त-अपीलार्थी को आरोपों का दोषी अभिनिर्धारित किया था तथा इस प्रकार इस न्यायालय को

विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए तथ्य संबंधी ऐसे समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने के लिए अनिच्छुक होना चाहिए । इन दलीलों के आधार पर राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने आग्रह किया कि यह अपील गुणागुण रहित है और खारिज किए जाने के लिए उपयुक्त है ।

15. हमने न्यायालय के समक्ष दी गई दलीलों पर गंभीरता से विचार किया और उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया तथा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का विश्लेषण किया ।

साक्ष्य और दलीलों पर विचार

16. प्रथम इत्तिलाकर्ता, शरण कौर (अभि. सा. 5) (प्रमुख अभियोजन साक्षी जिसे स्वयं को उसी घटना में क्षति पहुंची थी) के साक्ष्य में यथा प्रकटित अभियोजन का पक्षकथन यह है कि वह अपने दो पुत्रों दलजीत सिंह **उर्फ** गोल्डी (अभि. सा. 6) और गुरमीत सिंह के साथ मकान के भूतल पर स्थित कमरे में सो रही थी, जबकि उसका पति बलविन्दर सिंह (मृतक) चौबारे में सो रहा था जिसका कोई दरवाजा नहीं था । अभियोजन पक्ष ने इस बात पर जोर देने की कोशिश की है कि अभियुक्त ने मकान की दीवार पर एक सीढ़ी लगाई, उसकी सहायता से चौबारे में चढ़ा और एक फावड़े से बलविन्दर सिंह (मृतक) पर प्रहार किया जिसके परिणामस्वरूप उसे गंभीर क्षतियां पहुंचीं । घटना के लिए हेतु, जैसा कि शरण कौर (अभि. सा. 5) के साक्ष्य में प्रस्तुत किया गया है, यह था कि अभियुक्त उसके पति के हलवाई के फलते-फूलते कारबार के कारण ईर्ष्या रखता था जबकि अभियुक्त का कारबार उतना फल-फूल नहीं रहा था । तथापि, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि घटना के लिए अभियुक्त पर इस हेतु को अभ्यारोपित करते हुए शरण कौर (अभि. सा. 5) द्वारा किए गए इस अस्पष्ट प्रकथन के सिवाय अन्वेषण अधिकारियों द्वारा हेतु की इस कहानी पर विश्वास करने के लिए कोई संपुष्टिकारी सामग्री एकत्रित नहीं की गई थी । इस पहलू पर शरण कौर (अभि. सा. 5) का कथन भी बहुत अस्पष्ट है । उसके अभिसाक्ष्य में ऐसा कुछ नहीं है जिससे न्यायालय का समाधान हो सके कि केवल इस तथाकथित ईर्ष्या

के कारण ही अभियुक्त ने उस मकान की दीवार पर सीढ़ी लगाकर इतना परिश्रम किया होगा जहां बलविन्दर सिंह (मृतक) अपने परिवार के साथ रहता था और फिर उस सीढ़ी पर चढ़कर उसकी हत्या की होगी और वह भी उसके परिवार के सदस्यों की मौजूदगी में ।

17. यदि अभियोजन के पक्षकथन को स्वीकार किया जाए, तो यह स्पष्ट है कि अभियुक्तों ने बलविन्दर सिंह (मृतक) की हत्या करने की योजना बड़ी मेहनत से बनाई होगी क्योंकि उन्होंने मकान की बाह्य दीवार पर सीढ़ी लगाई, उस सीढ़ी का प्रयोग करके मकान में चढ़े और फावड़े से मृतक पर आक्रमण किया । इस प्रकार, बलविन्दर सिंह (मृतक) की जोरदार पिटाई करने के पश्चात् उसी क्षण अभियुक्तों का प्रयोजन पूरा हो गया होगा और इसलिए कोई कारण नहीं था कि क्यों अभियुक्त परिवार के अन्य सदस्यों के सामने अपना भेद खोलने की जोखिम लेते । यही वह यथावत कहानी है जो शरण कौर के साक्ष्य में प्रस्तुत की गई है, जिसने कथन किया था कि जब वह भूतल पर अपने दो पुत्रों के साथ कमरे में सो रही थी तब उसने कुछ शोर सुनाई दिया और चौबारे से लगी सीढ़ियों पर जाने वाला दरवाजा खोला और उसमें अभियुक्त-अपीलार्थी किरपाल सिंह और उसके साथी को खड़े हुए देखा । अभियुक्त अपीलार्थी किरपाल सिंह, जो एक चाकू से लैस था, ने उसके उदर में चाकू घोंप दिया जबकि अन्य अभियुक्त अपीलार्थी ने उसकी बाजू पकड़ ली । अभियोजन पक्ष के अनुसार, अभियुक्त अपीलार्थी ने बलविन्दर सिंह (मृतक) पर एक फावड़े से हमला किया था जिसे घटना स्थल पर छोड़ दिया गया था और फिर अभियुक्त चाकू के साथ नीचे आए थे ।

18. अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत की गई इस कहानी से कई कारणों से विश्वास प्रेरित नहीं होता है । जैसी की ऊपर चर्चा की गई है, जब एक बार अभियुक्तों का बलविन्दर सिंह (मृतक) को समाप्त करने का उद्देश्य किसी को पता चले बिना पूरा हो गया था, तो उनके पास उसी सीढ़ी का प्रयोग करके जो चौबारे में चढ़ने के लिए प्रयुक्त की गई थी, घटनास्थल से बचकर भागने का पूरा अवसर था । इस प्रकार, अभियुक्तों के लिए नीचे आकर और परिवार के सदस्यों को सचेत करके

अपना भेद खोलने का कोई कारण नहीं था । इसके अतिरिक्त, अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार दो अभियुक्त घटना में अंतर्वलित थे । यदि अभियोजन के पक्षकथन पर विश्वास भी किया जाए, तो बलविन्दर सिंह (मृतक) की हत्या करने के पश्चात् अभियुक्त अवश्य परिवार के अन्य सदस्यों को समाप्त करने के लिए नीचे आए होंगे और इस पृष्ठभूमि में कोई कारण नहीं था कि अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ वाला व्यक्ति निहत्था था । इस बात से भी अभियोजन पक्ष की कहानी की सत्यता पर संदेह पैदा होता है । प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) ने अन्वेषण अभिकरण के आचरण के संबंध में यह अभिकथन करते हुए एक बड़ा मुद्दा बनाया था कि जो अन्वेषण किया जा रहा है वह पक्षपातपूर्ण और दूषित है । उसने मुख्यमंत्री और उच्च न्यायालय सहित विभिन्न मंचों के समक्ष आवेदन फाइल किए थे । उसकी प्रतिपरीक्षा में इन आवेदनों से विस्तारपूर्वक उसका सामना कराया गया था और वास्तव में वह उनमें किए गए प्रकथनों से मुकर गई थी । उदाहरण के लिए, हम शरण कौर (अभि. सा. 5) की प्रतिपरीक्षा से कुछ प्रोद्धरणों को उद्धृत करना चाहेंगे :–

> "..... हमने माननीय उच्च न्यायालय में समावेदन किया क्योंकि पुलिस द्वारा मेरा कथन सही प्रकार से अभिलिखित नहीं किया जा रहा था । माननीय उच्च न्यायालय के निदेशों पर मेरा कथन अपराध शाखा द्वारा अभिलिखित किया गया था ।"
>
> *** *** ***
>
> "..... मैंने मुख्यमंत्री पंजाब, चंडीगढ़ को संबोधित आवेदन की कार्बन प्रति देखी है । इस पर मेरे हस्ताक्षर हैं और यह प्रदर्श डीबी है । मेरा पिता कोरे कागजों पर मेरे हस्ताक्षर करवाता रहता था इसलिए मैं नहीं कह सकती कि क्या प्रदर्श डीए पर का आवेदन पुलिस उप अधीक्षक अजायब सिंह द्वारा अन्वेषण के पूर्ण होने के पश्चात् तारीख दिसंबर, 1997 को मेरे द्वारा दिया गया था या नहीं । यह साक्षी इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए तैयार नहीं है कि क्या आवेदन प्रदर्श डीए पर अभियुक्त कुलविन्दर सिंह **उर्फ** नीटा का नाम है या नहीं । आवेदन में कुलविन्दर सिंह **उर्फ** नीटा का

नाम नहीं लिखा है अपितु किसी अपरिचित व्यक्ति का नाम लिखा हुआ है । साक्षी ने यह स्पष्ट किया है कि वह कुलविन्दर सिंह **उर्फ** नीटा का नाम प्रकट करती रहती थी किंतु पुलिस उसका नाम अभिलिखित नहीं कर रही थी और आवेदन प्रदर्श डीए उसके काउंसेल द्वारा स्वयं ड्राफ्ट किया गया हो सकता है । साक्षी इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए तैयार नहीं है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की प्रति रिट याचिका/दांडिक प्रकीर्ण आवेदन के साथ संलग्न थी या उक्त रिट याचिका में कुलविन्दर सिंह **उर्फ** नीटा के नाम का उल्लेख नहीं था या याचिका में अपरिचित व्यक्ति के नाम का उल्लेख था । साक्षी इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए भी तैयार नहीं है कि क्या याचिका में कोई लोप किया गया था और उन लोपों के सुधार के लिए एक आवेदन दिया गया था । यह साक्षी इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए भी तैयार नहीं है कि संशोधित आवेदन में कुलविन्दर सिंह **उर्फ** नीटा का नाम संशोधन करके सम्मिलित नहीं किया गया था । साक्षी इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए भी तैयार नहीं है कि क्या याचिका 6 अगस्त, 1998 को वापस ले ली गई थी ।"

19. प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) ने अपनी मुख्य परीक्षा में स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि उसका कथन तारीख 13 नवंबर, 1997 को लगभग 7.30 बजे पूर्वाह्न में सिविल अस्पताल, दसुया में अभिलिखित किया गया था । इसे उसे पढ़कर सुनाया और स्पष्ट किया गया था और उसने इस पर इसे सही होना स्वीकार करते हुए हस्ताक्षर किए थे ।

20. यदि ऐसा है, तो शरण कौर (अभि. सा. 5) के बाद में यह शोर मचाने के इस आचरण से उसकी विश्वसनीयता पर अत्यधिक संदेह पैदा होता है कि जो अन्वेषण किया जा रहा है वह दूषित है और पुलिस ने अपराधियों की सूची से सह-अभियुक्त कुलविन्दर सिंह का नाम हटाकर साशय उसकी सहायता की थी ।

21. न तो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-पीजी/2) और न ही प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरणकौर (अभि. सा. 5) द्वारा हस्ताक्षरित और मुख्यमंत्री पंजाब को संबोधित आवेदन (प्रदर्श-डीए) में दूसरे अभियुक्त कुलविन्दर सिंह का नाम हमलावरों में से एक के रूप में वर्णित है । यह विवादग्रस्त

नहीं है कि दोषमुक्त अभियुक्त कुलविन्दर सिंह और अपीलार्थी किरपाल सिंह मृतक और प्रथम इत्तिलाकर्ता के परिवार के घनिष्ठ संबंधी हैं । इस स्थिति में, यदि प्रथम इत्तिलाकर्ता ने घटना के समय पर अपराधियों की शनाख्त की थी, तो कोई कारण नहीं था कि वह पुलिस अधिकारी, जिसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-पीजी/2) अभिलिखित की थी, को कथन करते समय कुलविन्दर सिंह का नाम क्यों छोड़ती । इस साक्षी का उसके द्वारा अन्वेषण अभिकरणों द्वारा किए जा रहे अन्वेषण की सद्भाविकता को प्रश्नगत करते हुए फाइल किए गए अन्य आवेदनों/ याचिकाओं, प्रदर्श-डीबी, प्रदर्श-डीजी आदि से विस्तारपूर्वक सामना कराया गया था और उसने स्वयं उसके द्वारा फाइल किए गए इन आवेदनों/ याचिकाओं में उपवर्णित वृत्तांतों का समर्थन करने से इनकार कर दिया था । इतना ही नहीं, प्रथम इत्तिलाकर्ता का एक कथन (प्रदर्श-डीएल) पुलिस उप अधीक्षक राजेन्द्र सिंह द्वारा अभिलिखित किया गया था, जिसमें यह कहा गया था कि कुछ अज्ञात व्यक्ति उनके मकान में घुसे और इस साक्षी और उसके पति को क्षतियां कारित कीं जिसका घटना में देहांत हो गया था । यद्यपि प्रथम इत्तिलाकर्ता ने यह कथन करने की बात से इनकार किया किंतु इस तथ्य से निश्चित रूप से उसकी कहानी की सत्यता पर संदेह पैदा होता है । प्रथम इत्तिलाकर्ता द्वारा दिए गए इस अभिसाक्ष्य की विश्वसनीयता पर गंभीर संदेह पैदा होता है जब हम इस तथ्य पर विचार करते हैं कि उसने अपनी मुख्य परीक्षा में यह दावा किया था कि उसके पुत्र द्वारा एक वैन को लाया गया था जिसमें उसे और उसके पति को सिविल अस्पताल, टांडा ले जाया गया था जहां चिकित्सा अधिकारियों ने यह राय व्यक्त की थी कि उसके पति का देहांत हो गया है और इस साक्षी का चिकित्सीय परीक्षण किया गया था । तथापि, उन्होंने इस राय पर विश्वास नहीं किया और विपदग्रस्त को भोगपुर ले गए जहां पुनः डाक्टरों ने यह दोहराया था कि उसके पति का देहांत हो गया है । केवल इस पुष्टि के पश्चात् ही बलविन्दर सिंह के शव को वापस मकान पर लाया गया था जहां पुलिस पहले से मौजूद थी । इस वृत्तांत से, जो प्रथम इत्तिलाकर्ता शरण कौर (अभि. सा. 5) के परिसाक्ष्य में उपवर्णित है, उसकी विश्वसनीयता पूरी तरह ध्वस्त हो जाती है । इस पहलू पर दो मत नहीं हो सकते कि यदि किसी राजकीय अस्पताल में मानव वध मृत्यु का मामला आता है तो डाक्टर तुरंत

पुलिस को सूचित करते हैं और इस बात की कोई संभावना नहीं है कि शव को परिवार के सदस्यों द्वारा ले जाने की अनुज्ञा दी गई होगी ।

22. यह उल्लेख किया जा सकता है कि अन्वेषण अभिकरण द्वारा टांडा और भोगपुर स्थित सिविल अस्पतालों के चिकित्सीय अभिलेखों को संगृहीत नहीं किया गया था और न ही अभियोजन पक्ष द्वारा अपने साक्ष्य में इन्हें अभिलेख पर लाया गया था । डा. दिदार सिंह (अभि. सा. 1), चिकित्सा अधिकारी, सिविल अस्पताल, दसुआ ने तारीख 13 जनवरी, 1997 को लगभग 7.05 बजे पूर्वाह्न में प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 45) का परीक्षण किया था । डाक्टर (अभि. सा. 1) ने अपनी प्रतिपरीक्षा में निम्नलिखित स्वीकारोक्तियां की थीं :–

> "..... मेरे द्वारा लाए गए अभिलेख के अनुसार उसने हमले की कोई कहानी नहीं बताई थी । यह सही है कि जैसा कि शरण कौर द्वारा कहा गया है कि उसका किसी अन्य डाक्टर द्वारा चिकित्सा विधिक रूप से परीक्षण नहीं किया गया था । मेरे से आज तक प्रयुक्त आयुध के संबंध में कोई राय नहीं मांगी गई थी और न ही मेरे द्वारा आज तक कोई शल्यक्रिया संबंधी राय प्राप्त की गई है । मेरे अभिलेख के अनुसार उसे चिकित्सा परीक्षण के पश्चात् तुरंत अस्पताल में भर्ती किया गया था ।"

23. डा. दिदार सिंह (अभि. सा. 1) के इस वृत्तांत से शरण कौर (अभि. सा. 5) द्वारा प्रस्तुत की गई यह कहानी पूर्ण रूप से ध्वस्त हो जाती है कि वह और उसके परिवार के सदस्य विपदग्रस्त को ऊपर निर्दिष्ट राजकीय अस्पतालों में लेकर गए थे या यह कि उसके शव को उनके मकान पर ऐसा चिकित्सीय परीक्षण करने के पश्चात् वापस लाया गया था । स्पष्ट तौर पर, पुलिस के पहुंचने तक शव मकान पर पड़ा हुआ था, जो दोनों विपदग्रस्तों को अस्पताल लेकर गई थी ।

24. इस तथ्य की तब सुदृढ़ रूप से पुष्टि हो जाती है जब हम डा. दिदार सिंह (अभि. सा. 1) के अभिसाक्ष्य पर विचार करते हैं, जिसने यह कथन किया है कि शरण कौर (अभि. सा. 5) ने उसे बताया था कि किसी अन्य डाक्टर द्वारा उसका चिकित्सा विधिक रूप से परीक्षण नहीं किया गया था और चिकित्सा विधिक परीक्षण करने के तुरंत पश्चात् उसे

अस्पताल में भर्ती किया गया था । शरण कौर (अभि. सा. 5) के परिसाक्ष्य में की इन अंतर्निहित खामियों से उसका साक्ष्यिक महत्व पूरी तरह ध्वस्त हो जाता है और हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि वह एक पूर्णत: अविश्वसनीय पक्षपाती साक्षी है ।

25. दलजीत सिंह (अभि. सा. 6), जो मृतक बलविन्दर सिंह और प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) का पुत्र है, ने यह कथन किया था कि वह अपनी माता के चिल्लाने की आवाज सुनकर जाग उठा और देखा कि कुलविन्दर सिंह ने उसकी माता को उसकी बाजू से पकड़ा हुआ था और दोनों हमलावर उसे देखकर भाग गए । उसने और उसके बड़े भाई गुलमीत सिंह ने अपराधियों का पीछा करने की कोशिश की । उसके पश्चात् वे सीढ़ियों से ऊपर चढ़े और देखा कि उनका पिता रक्त से लथपथ पड़ा हुआ था । इस साक्षी (अभि. सा. 6) ने यह भी कथन किया कि वह अपनी माता के साथ अपने पिता को एक वैन में सिविल अस्पताल, टांडा लेकर गया जहां उसे मृतक घोषित कर दिया गया, तथापि, उन्हें इस राय पर विश्वास नहीं हुआ और इसलिए वे भोगपुर गए और डा. अरोड़ा से परामर्श किया और उसने भी बलविन्दर सिंह की मृत्यु से संबंधित तथ्य की पुष्टि की । फिर वे वापस अपने मकान पर आए, जहां उनके पहुंचने से पहले ही पुलिस पहुंच चुकी थी । इस साक्षी(अभि. सा. 6) का भी उसके पूर्ववर्ती कथन (प्रदर्श-डीबी) से सामना कराया गया था जिसमें कुलविन्दर सिंह के नाम का उल्लेख नहीं था । इस साक्षी (अभि. सा. 6) की प्रतिपरीक्षा में विभिन्न अन्वेषण अधिकारियों द्वारा अभिलिखित किए गए उसके पूर्ववर्ती वृत्तांतों के संदर्भ में बहुत सारे विरोधाभास निकलकर आए हैं । इस साक्षी (अभि. सा. 6) ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यहां तक स्वीकार किया था कि उसे अपनी माता के भाई का नाम याद नहीं है जो उस दिन उनसे मिला था । उसने यह भी कथन किया कि वह और उसकी माता बलविन्दर सिंह (मृतक) को सिविल अस्पताल, दसुया लेकर गए थे । पुलिस थाना, दसुया सिविल अस्पताल, दसुया के रास्ते में पड़ता है किंतु वे रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाने में नहीं गए थे । इस तथ्य से पुन: उपदर्शित होता है कि अभि. सा. 5 और अभि. सा. 6 का आचरण पूर्णत: अस्वाभाविक था । अभियोजन पक्ष द्वारा दलजीत सिंह (अभि. सा. 6) के बड़े भाई गुरमीत सिंह की परीक्षा नहीं की गई थी । हम पाते हैं कि दलजीत सिंह (अभि. सा. 6) एक

शब्द तक नहीं कहा था कि अपीलार्थी के पास उस समय आयुध था जब उसने उसे घटनास्थल से भागते हुए देखा था । साक्ष्य में इन अंतर्निहित अनधिसंभाव्यताओं और खामियों से अभियोजन के पक्षकथन का ताना-बाना पूर्णत: ध्वस्त हो जाता है जिसमें कितनी खामियां हैं कि जिन्हें एक साथ जोड़ना असंभव है ।

26. **वाडीवेलु थेवर** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले प्रख्यात मामले में इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया है :–

> "11. ..... अत: हमारी राय में, यह एक सुदृढ़ और भली-भांति स्थिर विधि का नियम है कि न्यायालय का सरोकार किसी तथ्य को साबित या नासाबित करने के लिए आवश्यक साक्ष्य की गुणवत्ता से है न कि मात्रा से । साधारणतया, इस संदर्भ में मौखिक साक्ष्य को तीन प्रवर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है, अर्थात् –
>
> (1) पूर्णत: विश्वसनीय ।
>
> (2) पूर्णत: अविश्वसनीय ।
>
> (3) न तो पूर्णत: विश्वसनीय और न ही पूर्णत: अविश्वसनीय ।
>
> 12. सबूत के प्रथम प्रवर्ग में, न्यायालय को दोनों में से किसी प्रकार के अपने निष्कर्ष पर पहुंचने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए – वह किसी एकमात्र साक्षी के परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध या दोषमुक्त कर सकता है, यदि यह साक्षी भर्त्सना या हितबद्धता, अक्षमता या कूटरचित साक्ष्य के संदेह से ऊपर पाया जाता है । दूसरे प्रवर्ग में, न्यायालय को अपने निष्कर्ष पर पहुंचने में समान रूप से कोई कठिनाई नहीं है । तीसरे प्रवर्ग के मामलों में ही न्यायालय को सतर्क रहना चाहिए और विश्वसनीय परिसाक्ष्य, प्रत्यक्ष या पारिस्थितिक, द्वारा तात्विक विशिष्टियों में संपुष्टि के लिए प्रत्याशा की जानी चाहिए.....।"

27. शरण कौर (अभि. सा. 5) और दलजीत सिंह (अभि. सा. 6) के साक्ष्य पर अभिलेख पर उपलब्ध अन्य साक्ष्य के प्रतिनिर्देश करके विचार करने पर हमारी दृढ़ राय है कि ये दोनों साक्षी द्वितीय प्रवर्ग अर्थात्

---

[1] ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 614.

पूर्णत: अविश्वसनीय के अंतर्गत आते हैं । अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को अपराध से संपृक्त करने के लिए कोई अन्य ठोस साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था ।

28. जैसा कि हमने ऊपर उल्लेख किया है, अभियोजन पक्ष की हेतु से संबंधित कहानी बहुत ही कमजोर और बल्कि असंभव और अविश्वसनीय है जिससे कि उसका अवलंब लिया जा सके । दो अन्वेषण अधिकारियों ने पूर्ण रूप से अन्वेषण किया था और प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) द्वारा प्रस्तुत किया गया संपूर्ण मामला मिथ्या पाया गया था । प्रथम इत्तिलाकर्ता का आचरण अवलंब लेने योग्य नहीं है, जब हम इस तथ्य पर विचार करते हैं कि उसने विभिन्न याचिकाएं फाइल करके जब अन्वेषण अभी चल ही रहा था और यहां तक कि विचारण के दौरान अपने परिसाक्ष्य में भी कुलविन्दर सिंह को फंसाने की कोशिश की थी । तथापि, यहां तक कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-पीजी/2) में भी, जो स्वीकृत रूप से उसके स्वयं के कथन के आधार पर रजिस्ट्रीकृत की गई थी, प्रथम इत्तिलाकर्ता-शरण कौर (अभि. सा. 5) ने इस अपील में अपीलार्थी-अभियुक्त के साथ सह-हमलावर के रूप में उक्त कुलविन्दर सिंह को नामित नहीं किया था । यहां तक कि पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल की गई याचिका अर्थात् 1998 की प्रकीर्ण याचिका सं. 2053-एम में भी उक्त कुलविन्दर सिंह के नाम का उल्लेख नहीं था ।

29. अभियुक्त पर हमला करने के लिए अभिकथित रूप से प्रयुक्त फावड़ा घटनास्थल पर पड़ा हुआ पाया गया था । सारे के सारे अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य पर विचार करने पर हम पाते हैं कि अभियुक्त-अपीलार्थी के बताने पर अपराध करने के लिए प्रयुक्त किसी आयुध की बरामदगी नहीं की गई थी और इस प्रकार ऐसा कोई संपुष्टिकारी साक्ष्य नहीं है जिससे शरण कौर (अभि. सा. 5) और दलजीत सिंह (अभि. सा. 6) के ढुलमुल और अविश्वसनीय परिसाक्ष्य पर विश्वास किया जा सके ।

30. प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा लाजपाल सिंह (प्रति. सा. 3), उप पुलिस महा निरीक्षक (संचालन), पंजाब की परीक्षा की गई थी, जिसने अपनी

प्रतिपरीक्षा में कथन किया था कि उसके अन्वेषण में उसने अभियुक्त को निर्दोष पाया था ।

31. अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण सामग्री पर गंभीरतापूर्वक विचार करने के पश्चात् हमारा दृढ़ मत है कि शरण कौर (अभि. सा. 5) और दलजीत सिंह (अभि. सा. 6) का साक्ष्य पूर्णत: अविश्वसनीय है और न्यायालय में विश्वास प्रेरित नहीं होता है जिससे कि अपीलार्थी की दोषसिद्धि की अभिपुष्टि की जा सके । यह दोहराया जा सकता है कि अभियोजन पक्ष द्वारा ऐसा कोई संपुष्टिकारी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था जिससे कि इन दोनों साक्षियों के परिसाक्ष्य पर विश्वास किया जा सके ।

32. परिणामत:, अपीलार्थी को संदेह का फायदा देते हुए वह दोषमुक्त किए जाने योग्य है । परिणामस्वरूप, क्रमश: विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के तारीख 26 जुलाई, 2003 और 28 फरवरी, 2008 के निर्णयों को तद्द्वारा अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । अपीलार्थी को आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है । इस अपील के लंबित रहने के दौरान इस न्यायालय द्वारा तारीख 12 अगस्त, 2011 को अपीलार्थी पर अभिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित किए जाने का निदेश दिया गया था और वह जमानत पर है । उसे अभ्यर्पण करने की आवश्यकता नहीं है और जमानत बंधपत्र उन्मोचित किए जाते हैं ।

33. तद्नुसार, यह अपील मंजूर की जाती है ।

34. लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, का निपटारा हो जाएगा ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2024] 2 उम. नि. प. 296

अलाउद्दीन और अन्य

बनाम

असम राज्य और एक अन्य

[2021 की दांडिक अपील सं. 1637]

3 मई, 2024

न्यायमूर्ति अभय एस. ओका और न्यायमूर्ति उज्जल भुयन

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/149 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161, 162, 164 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 145] – हत्या – दोषसिद्धि – अभियुक्तों को अंतिम बार मृतक के साथ देखे जाने का साक्ष्य – साक्षियों के साक्ष्य में विरोधाभास – दोषसिद्धि की संधार्यता – जहां अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्य में पुलिस के समक्ष किए गए कथनों और विचारण के दौरान न्यायालय के समक्ष किए गए कथनों में तात्विक विरोधाभास और लोप पाए गए हों, साक्ष्य से दर्शित होता हो कि मृतक को अंतिम बार अभियुक्तों के साथ देखे जाने के समय उसे उसी समय के दौरान अन्य व्यक्तियों के साथ भी देखा गया, वहां अपराध में अन्य व्यक्तियों की अंतर्ग्रस्तता की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता और अंतिम बार देखे जाने की कहानी के साथ-साथ हेतु साबित नहीं होने के कारण अभियुक्तों को दोषमुक्त करना उचित होगा और उच्च न्यायालय द्वारा केवल चार अभियुक्तों को दोषसिद्ध ठहराए जाने के कारण किसी विधिविरुद्ध जमाव का गठन न होने के आधार पर भी उन्हें धारा 149 की सहायता से दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थियों सहित आठ अभियुक्तों का मृतक की हत्या करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन विचारण किया गया था और जिनमें से पांच को दोषसिद्ध किया गया था । एक की विचारण के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी । दोषसिद्धि के विरुद्ध उच्च

न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई थी । उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थियों की दोषसिद्धि की पुष्टि की गई । तथापि, उच्च न्यायालय द्वारा एक अभियुक्त (सं. 5) की दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया गया । अभियुक्तों द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – जहां तक मृतक पर हमला करने के साक्ष्य का संबंध है, अपीलार्थियों की अंतर्ग्रस्तता को दर्शित करने के लिए कोई विश्वसनीय साक्ष्य नहीं है । अंतिम बार एक साथ देखे जाने के संबंध में एकमात्र साक्ष्य यह है कि घटना की तारीख को 4.00 बजे अपराह्न में अपीलार्थी सं. 2 मृतक को अपनी मोटरसाइकिल पर ले गया था । तथापि, अभि. सा. 3 ने यह कथन किया है कि अपीलार्थी सं. 2 मृतक को 4.00 बजे अपराह्न में कांग्रेस पार्टी की एक बैठक में उपस्थित होने के लिए लेकर गया था । उसने यह भी कहा कि उसका मृतक पिता कांग्रेस का एक प्रभावशाली नेता था । अत: 4.00 बजे अपराह्न के पश्चात् मृतक के आस-पास अभियुक्तों की अपेक्षा अन्य व्यक्ति भी थे । यदि यह मान भी लिया जाए कि अभियुक्तों को उस दिन मृतक के साथ देखा गया था जिस दिन उसे मृत पाया गया था, तो भी मृतक को अभियुक्तों के साथ अभिकथित रूप से देखे जाने के पश्चात् उसने कांग्रेस पार्टी की एक बैठक में भाग लिया था । अंतिम बार देखे जाने की कहानी अभियोजन पक्ष के लिए तब सहायक होती है यदि मृतक को अभियुक्तों के साथ उस समीपवर्ती समय पर देखा गया है जिस समय शव पाया गया है । यदि साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि मृतक को अभियुक्तों के साथ देखे जाने के पश्चात् वह अन्य व्यक्तियों के भी साथ था, तो अंतिम बार एक साथ देखे जाने की कहानी से अभियोजन पक्ष को कोई सहायता नहीं मिलती है । इसका कारण यह है कि अपराध में अन्य व्यक्तियों की अंतर्ग्रस्तता से इनकार नहीं किया जा सकता है । अत: यह तथ्य कि अपीलार्थी सं. 2 को 4.00 बजे अपराह्न में मृतक के साथ देखा गया था, उसे हत्या का अपराध कारित करने से संपृक्त करने के लिए पर्याप्त नहीं है । हमारे द्वारा अभिलिखित किए गए कारणों से तथाकथित प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता । अंतिम बार

एक साथ देखे जाने की कहानी नामंजूर किए जाने योग्य है । अत: अभियोजन पक्ष अपीलार्थियों के विरुद्ध आरोप को सिद्ध करने में असफल रहा है । (पैरा 17)

एक पहलू है जो इस न्यायालय के ध्यान में नहीं लाया गया, जो मामले की तह में जाता है । जैसा कि विचारण न्यायालय के निर्णय के पैरा 108 से देखा जा सकता है, अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहायता से धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया था । हम यहां यह उल्लेख कर सकते हैं कि अंततोगत्वा उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि केवल चार अभियुक्त दोषी थे । भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के अधीन किसी विधिविरुद्ध जमाव का हर सदस्य विधिविरुद्ध जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में कारित किए गए अपराधों का दोषी होता है । अत: भारतीय दंड संहिता की धारा 149 को लागू करने के लिए एक विधिविरुद्ध जमाव होना चाहिए । भारतीय दंड संहिता की धारा 141 में पांच या अधिक व्यक्तियों के जमाव को विधिविरुद्ध जमाव के रूप में परिभाषित किया गया है । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित नहीं किया है कि वर्तमान अपीलार्थियों के अतिरिक्त, जिनकी दोषसिद्धि की अभिपुष्टि की गई थी, अन्य व्यक्ति भी विधिविरुद्ध जमाव का भाग थे । अत: दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 141 के अर्थान्तर्गत कोई विधिविरुद्ध जमाव नहीं था । इसलिए अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहायता से भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था । उच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आरोप को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 में उपांतरित नहीं किया । (पैरा 4)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[1959] [1959] (सप्ली.) 2 एस. सी. आर. 875 :
तहसीलदार सिंह और एक अन्य बनाम
उत्तर प्रदेश राज्य । 10

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2021 की दांडिक अपील सं. 1637.

2019 की दांडिक अपील सं. 205 में गुवाहटी उच्च न्यायालय द्वारा 13 सितंबर, 2021 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री सिद्धार्थ दवे, ज्येष्ठ अधिवक्ता, फारूख रशीद, (सुश्री) जामतीबेन एओ, मोहम्मद अकलाख आलम, सिराज अहमद, (सुश्री) रेशमा बाई भुक्या और महेश कुमार

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री नलिन कोहली, ज्येष्ठ अपर महाधिवक्ता, अंशुल मलिक, सार्थक शर्मा, शुवोदीप राय, प्रवीर चौधरी, (सुश्री) मालिनी पोडुवल, (सुश्री) बबिता संत, (सुश्री) निहारिका द्विवेदी, वैभव तिवारी, रीपक कंसल, सुरेन्द्र त्यागी, (श्रीमती) अन्वेषा देब, (श्रीमती) स्नेहा रानी, प्रिंस अरोड़ा और पंकज कुमार शर्मा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय एस. ओका ने दिया ।

न्या. ओका – तथ्यात्मक स्थिति

अपीलार्थी क्रमश: अभियुक्त सं. 3, 1, 6 और 7 हैं । अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया है । अपीलार्थियों के विरुद्ध अभिकथन शाहबुद्दीन चौधरी का हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध कारित करने का है । घटना तारीख 3 फरवरी, 2013 की है । आठ अभियुक्त थे जिनका अपराध के लिए विचारण किया गया था । आठ अभियुक्तों में से विचारण न्यायालय ने पांच को दोषसिद्ध किया । एक की विचारण के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई । दोषसिद्धि के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई थी । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा

अपीलार्थियों की दोषसिद्धि की पुष्टि की । तथापि, उच्च न्यायालय ने अभियुक्त सं. 5 की दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया । अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अभियुक्त सं. 1 (मोहम्मद अब्दुल कादिर) ने अपराध के शिकार व्यक्ति को घटना की तारीख को 4.00 बजे अपराह्न में उसके निवास से लिया और उसे भोजखोवा चपोरी बाजार लेकर आया । अभियुक्तों ने एल. पी. विद्यालय के पीछे विपदग्रस्त की उस पर धारदार आयुध से हमला करके हत्या कर दी ।

दलीलें

2. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने तात्विक अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य के टिप्पणों की ओर हमारा ध्यान दिलाया । उन्होंने बताया कि विचारण न्यायालय ने अपने निर्णय के पैरा 42 में अभिनिर्धारित किया था कि अभि. सा. 1 (मोहम्मद अख्तर हुसैन चौधरी) का यह दावा भ्रामक है कि वह प्रत्यक्षदर्शी साक्षी था । उन्होंने बताया कि यहां तक कि अभि. सा. 3 (मोहम्मद अफजुद्दीन चौधरी) के साक्ष्य को भी त्यक्त किए जाने की आवश्यकता है क्योंकि उसका साक्ष्य लोप और विरोधाभासों से भरा है । इसके अतिरिक्त, उसे एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं समझा जा सकता । जहां तक अभि. सा. 4 (मोहम्मद सैदूर अली) के साक्ष्य का संबंध है, उन्होंने पुन: यह दलील दी कि उसका साक्ष्य स्वीकार करने योग्य नहीं है क्योंकि यह पूर्णत: अविश्वसनीय है । उन्होंने बताया कि अभि. सा. 6 (मुसम्मात हसीन बानू, मृतक की पत्नी) के साक्ष्य से दर्शित होता है कि उसके पति और अभियुक्तों के बीच पहले से दुश्मनी थी । उन्होंने बताया कि अभि. सा. 6 ने स्वीकार किया था कि उसके पति ने अभियुक्तों के विरुद्ध यह अभिकथन करते हुए एक पुलिस रिपोर्ट दर्ज कराई थी कि अभियुक्तों ने उसे उसकी भूमि से बेकब्जा किया है । उन्होंने दलील दी कि अभि. सा. 7 (मोहम्मद सुलतान अली) के परिसाक्ष्य के रूप में आए अंतिम बार एक साथ देखे जाने के साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता । उन्होंने दलील दी कि यह बात अभि. सा. 9 (मोहम्मद अब्दुल हक) के साक्ष्य से सही साबित होती है । उन्होंने बताया कि अभि. सा. 10 (मोहम्मद अनिसुल हक़) के साक्ष्य से अभियोजन पक्ष को कतई सहायता नहीं मिलती है ।

उन्होंने हमारा ध्यान अभि. सा. 11 (श्री बिद्युत बिकास बरुआ, अन्वेषण अधिकारी) के साक्ष्य की ओर आकृष्ट किया । उन्होंने दलील दी कि अभियोजन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा अभिलिखित करते समय विरोधाभासों को विधि के अनुसार उचित रूप से अभिलिखित नहीं किया गया था ।

3. राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने दलील दी कि अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य से दर्शित होता है कि मृतक को अंतिम बार अभियुक्तों के साथ देखा गया था । उन्होंने दलील दी कि अंतिम बार एक साथ देखे जाने के साक्ष्य के साथ-साथ अपराध कारित करने के हेतु को भी सिद्ध किया गया था । अन्यथा भी, अपीलार्थियों के विरुद्ध विश्वसनीय साक्ष्य है । अत: उन्होंने दलील दी कि उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण में कोई गलती नहीं पाई जा सकती है ।

दलीलों पर विचार

4. एक पहलू है जो इस न्यायालय के ध्यान में नहीं लाया गया, जो मामले की तह में जाता है । जैसा कि विचारण न्यायालय के निर्णय के पैरा 108 से देखा जा सकता है, अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहायता से धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया था । हम यहां यह उल्लेख कर सकते हैं कि अंततोगत्वा उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि केवल चार अभियुक्त दोषी थे । भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के अधीन किसी विधिविरुद्ध जमाव का हर सदस्य विधिविरुद्ध जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में कारित किए गए अपराधों का दोषी होता है । अत: भारतीय दंड संहिता की धारा 149 को लागू करने के लिए एक विधिविरुद्ध जमाव होना चाहिए । भारतीय दंड संहिता की धारा 141 में पांच या अधिक व्यक्तियों के जमाव को विधिविरुद्ध जमाव के रूप में परिभाषित किया गया है । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित नहीं किया है कि वर्तमान अपीलार्थियों के अतिरिक्त, जिनकी दोषसिद्धि की अभिपुष्टि की गई थी, अन्य व्यक्ति भी विधिविरुद्ध जमाव का भाग थे । अत: दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 141 के अर्थान्तर्गत कोई विधिविरुद्ध जमाव नहीं था । इसलिए अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा

149 की सहायता से भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था । उच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आरोप को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 में उपांतरित नहीं किया ।

विरोधाभास और लोप

5. गुणागुण पर विचार करने से पूर्व, इस बारे में अवश्य कुछ कहना होगा कि इस मामले में विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा को कैसे अभिलिखित किया था, विशेष रूप से जब उनका सामना उनके पूर्व कथनों से कराया गया था ।

6. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'दंड प्रक्रिया संहिता') की धारा 161 के अधीन पुलिस को अन्वेषण के दौरान साक्षियों के कथनों को अभिलिखित करने की शक्ति है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 ऐसे कथनों का साक्ष्य में प्रयोग करने के संबंध में है । धारा 162 इस प्रकार है :–

> "**162. पुलिस से किए गए कथनों का हस्ताक्षरित न किया जाना : कथनों का साक्ष्य में उपयोग** – (1) किसी व्यक्ति द्वारा किसी पुलिस अधिकारी से इस अध्याय के अधीन अन्वेषण के दौरान किया गया कोई कथन, यदि लेखबद्ध किया जाता है तो कथन करने वाले व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित नहीं किया जाएगा, और न ऐसा कोई कथन या उसका कोई अभिलेख चाहे वह पुलिस डायरी में हो या न हो, या न ऐसे कथन या अभिलेख का कोई भाग ऐसे किसी अपराध की, जो ऐसा कथन किए जाने के समय अन्वेषणाधीन था, किसी जांच या विचारण में, इसमें इसके पश्चात् यथा उपबंधित के सिवाय, किसी भी प्रयोजन के लिए उपयोग में लाया जाएगा :
>
> परंतु जब कोई ऐसा साक्षी, जिसका कथन उपर्युक्त रूप में लेखबद्ध कर लिया गया है, ऐसी जांच या विचारण में अभियोजन की ओर से बुलाया जाता है तब यदि उसके कथन का कोई भाग,

सम्यक् रूप से साबित कर दिया गया है तो, अभियुक्त द्वारा और न्यायालय की अनुज्ञा से अभियोजन द्वारा उसका उपयोग ऐसे साक्षी का खंडन करने के लिए भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) की धारा 145 द्वारा उपबंधित रीति से किया जा सकता है और जब ऐसे कथन का कोई भाग इस प्रकार उपयोग में लाया जाता है तब उसका कोई भाग ऐसे साक्षी की पुनःपरीक्षा में भी, किंतु उसकी प्रतिपरीक्षा में निर्दिष्ट किसी बात का स्पष्टीकरण करने के प्रयोजन से ही, उपयोग में लाया जा सकता है ।

(2) इस धारा की किसी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) की धारा 32 के खंड (1) के उपबंधों के अंदर आने वाले किसी कथन को लागू होती है या उस अधिनियम की धारा 27 के उपबंधों पर प्रभाव डालती है ।

स्पष्टीकरण – उपधारा (1) में निर्दिष्ट कथन में किसी तथ्य या परिस्थिति के कथन का लोप या खंडन हो सकता है यदि वह उस संदर्भ को ध्यान में रखते हुए जिसमें ऐसा लोप किया गया है महत्वपूर्ण और अन्यथा संगत प्रतीत होता है और कोई लोप किसी विशिष्ट संदर्भ में खंडन है या नहीं, यह तथ्य का प्रश्न होगा ।"

धारा 162 की उपधारा (1) में सम्मिलित मूलभूत सिद्धांत यह है कि किसी व्यक्ति द्वारा अन्वेषण के अनुक्रम में पुलिस अधिकारी को किए गए किसी कथन को, जो लेखबद्ध किया गया है, धारा 162 में यथा उपबंधित के सिवाय किसी प्रयोजन के लिए प्रयुक्त नहीं किया जा सकता । उपधारा (2) में सम्मिलित पहला अपवाद भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (संक्षेप में 'साक्ष्य अधिनियम') की धारा 32 के खंड (1) के अंतर्गत आने वाले कथनों के बारे में है । इस प्रकार, धारा 162 की उपधारा (1) में जो उपबंधित है वह किसी मृत्युकालिक कथन को लागू नहीं होता है । धारा 162 की उपधारा (1) में उपबंधित साधारण नियम का दूसरा अपवाद यह है कि अभियुक्त इस कथन का उपयोग साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 द्वारा उपबंधित रीति में साक्षी का खंडन करने के लिए कर सकता है । यहां तक कि अभियोजन पक्ष भी इस कथन का

उपयोग न्यायालय की पूर्व अनुमति से साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 में उपबंधित रीति में किसी साक्षी का खंडन करने के लिए कर सकता है । अभियोजन पक्ष प्रसामान्यत: इस उपबंध का आश्रय तब लेता है जब उसका साक्षी अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं करता है । खंडन करने के लिए पूर्व कथन का उपयोग करने के लिए एक महत्वपूर्ण शर्त है । शर्त यह है कि खंडन करने के लिए प्रयुक्त कथन के उस भाग को अवश्य सम्यक् रूप से साबित किया जाना चाहिए ।

7. जब दो कथन एक साथ टिक नहीं सकते, तो वे विरोधाभासी कथन बन जाते हैं । जब कोई साक्षी न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में कोई ऐसा कथन करता है जो उस कथन के असंगत है जो उसने पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए अपने कथन में कहा था, तो यह एक विरोधाभास है । जब कोई अभियोजन साक्षी, जिसका दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161(1) या धारा 164 के अधीन कथन अभिलिखित किया गया है, न्यायालय के समक्ष उन तथ्यात्मक पहलुओं का उल्लेख करता है जिनका उसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161(1) या धारा 164 के अधीन अभिलिखित किए गए अपने पूर्वकथन में उल्लेख नहीं किया है, यह कहा जाता है कि यह लोप है । यदि साक्षी ने पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए अपने कथन में किसी तथ्य का उल्लेख करने में लोप किया है, जिसका उसने न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में उल्लेख किया है, तो यह एक लोप होगा । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के स्पष्टीकरण से यह उपदर्शित होता है कि कोई लोप तब विरोधाभास की कोटि में आ सकेगा जब यह महत्वपूर्ण और सुसंगत हो । इस प्रकार, प्रत्येक लोप विरोधाभास नहीं होता है । यह विरोधाभास तब बन जाता है बशर्ते इससे धारा 162 के अधीन स्पष्टीकरण में अधिकथित कसौटी का समाधान हो जाए । अत: जब कोई लोप एक विरोधाभास बन जाता है, तो प्रतिपरीक्षा में साक्षियों का खंडन करने के लिए धारा 162 की उपधारा (1) के परंतुक में उपबंधित प्रक्रिया का अवश्य पालन किया जाना चाहिए ।

8. धारा 162 की उपधारा (1) के परंतुक में उल्लिखित अनुसार, साक्षी का खंडन साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के अधीन उपबंधित रीति में किया जाना चाहिए । धारा 145 इस प्रकार है :–

"**145. पूर्वतन लेखबद्ध कथनों के बारे में प्रतिपरीक्षा** – किसी साक्षी की उन पूर्वतन कथनों के बारे में, जो उसने लिखित रूप में किए हैं या जो लेखबद्ध किए गए हैं या जो प्रश्नगत बातों से सुसंगत हैं, ऐसा लेख उसे दिखाए बिना, या ऐसे लेख साबित हुए बिना, प्रतिपरीक्षा की जा सकेगी, किंतु यदि उस लेख द्वारा उसका खंडन करने का आशय है तो उस लेख को साबित किए जा सकने के पूर्व उसका ध्यान उस लेख के उन भागों की ओर आकर्षित करना होगा जिनका उपयोग उसका खंडन करने के प्रयोजन से किया जाना है ।"

यह धारा दो भागों में प्रवृत्त होती है । पहले भाग में उपबंधित है कि किसी साक्षी की उन पूर्वतन कथनों के बारे में, जो लिखित रूप में किए गए हैं, उसे ऐसा लेख दिखाए बिना प्रतिपरीक्षा की जा सकती है । इस प्रकार, उदाहरण के लिए, किसी साक्षी की यह कहकर प्रतिपरीक्षा की जा सकती है कि क्या उसका पूर्वतन कथन कायम है । दूसरा भाग किसी साक्षी का खंडन करने के संबंध में है । विरोधाभासों को साबित करने के लिए साक्षी का उसके पूर्वतन कथन से सामना कराते समय साक्षी को अवश्य उसका पूर्वतन कथन दिखाना चाहिए । यदि साक्षी द्वारा न्यायालय के समक्ष किए गए कथन और पुलिस द्वारा जो कथन अभिलिखित किया गया है, उनके बीच कोई विरोधाभास है, तो साक्षी का ध्यान अवश्य उसके पूर्वतन कथन के उन विनिर्दिष्ट भागों की ओर दिलाया जाना चाहिए, जिनका उपयोग उसका खंडन करने के लिए किया जाना है । धारा 145 में उपबंधित है कि सुसंगत भाग को लेख को साबित किए बिना साक्षी को दिखाया जा सकता है । तथापि, साक्षियों का खंडन करने के लिए प्रयुक्त पूर्वतन कथन को बाद में अवश्य साबित किया जाना चाहिए । केवल यदि उसके पूर्वतन कथन का विरोधाभासी भाग साबित किया जाता है, तो कहा जा सकता है कि विरोधाभासों को साबित किया गया है । प्रायिक परिपाटी यह है कि अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए साक्षी के पूर्व कथन के उसे दिखाए गए भाग को चिह्नित किया जाए । अलग-अलग राज्यों में यह चिह्नांकन अलग-अलग प्रकार से किया जाता है । कुछ राज्यों में, साक्षी को दिखाए गए आरंभिक भाग

को वर्णमाला अक्षरों से चिह्नित करने और उसी वर्णमाला के अक्षरों से अंतिम भाग को चिह्नित करने की परिपाटी है । प्रतिपरीक्षा अभिलिखित करते समय विचारण न्यायालय को अवश्य यह अभिलिखित करना चाहिए कि चिह्नित किए गए एक विशिष्ट भाग को, उदाहरण के लिए, जैसे एए, साक्षी को दिखाया गया था । साक्षी को उसका खंडन करने के लिए उसके पूर्व कथन का जो भाग दिखाया जाता है उसे प्रतिपरीक्षा में अभिलिखित किया जाना चाहिए । यदि साक्षी ऐसा पूर्व कथन किया जाना स्वीकार करता है, तो उस भाग को साबित किया गया समझा जा सकता है । यदि साक्षी अपने पूर्व कथन के उस भाग को स्वीकार नहीं करता है जिससे उसका सामना कराया जाता है, तो इसे अन्वेषण अधिकारी के माध्यम से उसे यह पूछकर साबित किया जा सकता है कि क्या साक्षी ने वह कथन किया था जो साक्षी को दिखाया गया था । अत: यदि साक्षी के लेखबद्ध किए गए उसके पूर्व कथन से उसका सामना कराए जाने का आशय है, तो कथन के उस विशिष्ट भाग को, यहां तक कि इसे साबित किए जाने से पूर्व, विनिर्दिष्ट रूप से अवश्य साक्षी को दिखाया जाना चाहिए । उसके पश्चात् साक्षी का खंडन करने के लिए प्रयुक्त पूर्व कथन के भाग को साबित किया जाना चाहिए । जैसा कि पहले उपदर्शित किया गया है, इसे साबित किया गया समझा जा सकता है यदि साक्षी द्वारा ऐसा कथन किया जाना स्वीकार किया जाता है, या इसे संबंधित पुलिस अधिकारी की प्रतिपरीक्षा में साबित किया जा सकता है । साक्षी को उसके पूर्व कथन के सुसंगत भाग को उसे दिखाकर उसका खंडन करने के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 में इस अपेक्षा का उद्देश्य साक्षी को उस खंडन को स्पष्ट करने का अवसर देना है । अत: यह एक ऋजुता का नियम है ।

9. यदि साक्षी का पूर्वतन कथन न्यायालय के समक्ष दिए गए उसके साक्ष्य के किसी भाग के असंगत है, तो इसे साक्षी की विश्वसनीयता पर अधिक्षेप करने के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 155 के खंड (3) के अनुसार उपयोग किया जा सकता है, जो इस प्रकार है :–

"**155. साक्षी की विश्वसनीयता पर अधिक्षेप** – किसी साक्षी की विश्वसनीयता पर प्रतिपक्षी द्वारा, या न्यायालय की सम्मति से उस पक्षकार द्वारा, जिसने उसे बुलाया है, निम्नलिखित प्रकारों से अधिक्षेप किया जा सकेगा –

(1) .....

(2) .....

(3) उसके साक्ष्य के किसी ऐसे भाग से, जिसका खंडन किया जा सकता है, असंगत पिछले कथनों को साबित करने द्वारा ।"

यहां यह उल्लेख करना होगा कि प्रत्येक विरोधाभास या लोप साक्षी की विश्वसनीयता पर अधिक्षेप करने या उसके परिसाक्ष्य पर विश्वास न करने का आधार नहीं है । अभिलेख पर लाया गया कोई छुट-पुट या तुच्छ लोप या विरोधाभास साक्षी के वृतांत को अविश्वसनीय ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है । केवल जब कोई तात्विक विरोधाभास या लोप है, तो न्यायालय साक्षी के वृतांत पर या तो पूर्णत: या आंशिक रूप से अविश्वास कर सकता है । कोई तात्विक विरोधाभास या लोप क्या है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है । क्या कोई लोप विरोधाभास भी है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है ।

10. हम **तहसीलदार सिंह और एक अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के प्रख्यात विनिश्चय में जो अभिनिर्धारित किया गया है, उसे उद्धृत करने के लिए उत्सुक हैं । उक्त विनिश्चय का पैरा 13 इस प्रकार है :–

"13. विद्वान् काउंसेल का पहला तर्क दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 में पाए जाने वाले 'भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 145 द्वारा उपबंधित रीति में' शब्दों पर आधारित है । यह कहा गया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 में अभियुक्त को किसी साक्षी का खंडन करने के लिए उसका लेख के उन भागों

[1] [1959] (सप्ली.) 2 एस. सी. आर. 875.

की ओर ध्यान दिलाने से पूर्व सभी सुसंगत प्रश्न पूछने के लिए सशक्त किया गया है । इस दलील के समर्थन में श्याम सिंह **बनाम** पंजाब राज्य [(1952) 1 एस. सी. सी. 514 = (1952) एस. सी. आर. 812] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया गया है । न्यायमूर्ति बोस ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के अधीन किसी साक्षी का खंडन करने के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया को पृष्ठ 819 पर इस प्रकार विहित किया है –

> 'धारा 145 का आश्रय लेना केवल तब आवश्यक होगा यदि साक्षी इनकार करता है कि उसने अपना पूर्वकथित कथन नहीं किया था । उस स्थिति में, यह साबित करना आवश्यक होगा कि उसने ऐसा कथन किया था और पूर्वकथित कथन को लेखबद्ध किया गया था, फिर धारा 145 में यह अपेक्षा की गई है कि उसका ध्यान अवश्य उन भागों की ओर दिलाया जाए जिनका खंडन करने के लिए उपयोग किया जाना है । किंतु वह स्थिति तब उद्भूत नहीं होती जब साक्षी पूर्वकथित कथन करने की बात को स्वीकार कर लेता है । ऐसी स्थिति में जो कुछ आवश्यक है वह है उस पूर्वकथित कथन को देखना जिसके लिए इस स्वीकारोक्ति के कारण कि यह कथन किया गया था किसी और सबूत की आवश्यकता नहीं है ।'

अन्य मामलों को निर्दिष्ट करना अनावश्यक है जिनमें भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के अधीन प्रश्न पूछने के लिए इसी प्रकार की प्रक्रिया सुझाई गई है, क्योंकि इस न्यायालय के उक्त विनिश्चय और इसी प्रकार के विनिश्चयों में ऐसे किसी मामले में प्रक्रिया पर विचार नहीं किया गया था जहां लेखबद्ध किए गए कथन का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के अधीन खंडन करने के लिए उपयोग किया जाना आशयित हो । साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 दो भागों में है : पहला भाग अभियुक्त को किसी साक्षी की उन पूर्वतन कथनों के बारे में, जो उसने लिखित रूप में किए हैं या जो लेखबद्ध किए गए हैं, ऐसा लेख उसे दिखाए बिना प्रतिपरीक्षा करने के लिए समर्थ बनाती है ; दूसरा

भाग ऐसी स्थिति के संबंध में है जहां प्रतिपरीक्षा इसका खंडन का स्वरूप ले लेती है – दूसरे शब्दों में, दोनों भाग प्रतिपरीक्षा के संबंध में हैं ; पहला भाग खंडन करने की बजाय प्रतिपरीक्षा के संबंध में है और दूसरा भाग केवल खंडन के द्वारा प्रतिपरीक्षा करने के संबंध में है । विहित की गई प्रक्रिया यह है कि यदि किसी साक्षी का लेख द्वारा खंडन करने का आशय है, तो लेख को साबित किए जाने से पूर्व उसका ध्यान अवश्य उसके उन भागों की ओर दिलाया जाना चाहिए जिनका उपयोग उसका खंडन करने के प्रयोजनार्थ किया जाना है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 का परंतुक अभियुक्त को केवल किसी साक्षी का खंडन करने के लिए ऐसे कथन का उपयोग साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 द्वारा उपबंधित रीति में करने के लिए समर्थ बनाता है । यदि उक्त कथन का उपयोग साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के पहले भाग के अर्थांतर्गत किसी साक्षी की प्रतिपरीक्षा करने के प्रयोजनार्थ करने के लिए अनुज्ञात किया जाए तो इससे परंतुक की भाषा का दुरुपयोग करना होगा । न ही हम इस तर्क से प्रभावित हैं कि इसके पहले भाग के अधीन सुसंगत प्रश्न पूछे बिना साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के दूसरे भाग का अवलंब लेना संभव होगा । कठिनाई वास्तविकता की बजाय काल्पनिक अधिक है । साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के दूसरे भाग से अनुसरण की जाने वाली सरल प्रक्रिया स्पष्ट रूप से उपदर्शित होती है । उदाहरण के लिए : क साक्षी कटघरे में कहता है कि ख ने क को छुरा घोंपा था ; पुलिस के समक्ष उसने कहा था कि घ ने ग को छुरा घोंपा था । उसका ध्यान पुलिस के समक्ष किए गए कथन के उस भाग की ओर दिलाया जा सकता है जिससे साक्षी कठघरे में उसके कथन का खंडन होता है । यदि वह अपने पूर्वतन कथन को स्वीकार करता है, तो किसी और सबूत की आवश्यकता नहीं है ; यदि वह स्वीकार नहीं करता है, तो साधारणतया अपनाई जाने वाली परिपाटी यह है कि इसे पुलिस अधिकारी द्वारा सबूत देने पर स्वीकार किया जाए । दूसरी ओर, विद्वान् काउंसेल द्वारा सुझाई गई प्रक्रिया का दृष्टांत इस प्रकार दिया जा सकता है – यदि साक्षी से पूछा जाता है 'क्या आपने

पुलिस अधिकारी के समक्ष कहा था कि आपने एक गैस की रोशनी देखी थी ?' और वह 'हां' में उत्तर देता है, तब उस कथन को, जिसमें ऐसा परिवर्णन नहीं है, खंडन के रूप में उसे बताया जाए । इस प्रक्रिया में दो भ्रांतियां अंतर्वलित हैं : एक है यह अभियुक्त को प्रतिपरीक्षा की प्रक्रिया द्वारा यह उजागर करने के लिए समर्थ बनाती है कि साक्षी ने पुलिस अधिकारी के समक्ष पहले क्या कहा था । यदि वह पुलिस अधिकारी ने किसी साक्षी के कथन का अभिलेख नहीं बनाया है, तो उसके संपूर्ण कथन को किसी प्रयोजन के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता, जबकि यदि किसी पुलिस अधिकारी ने कुछ ही वाक्यों को अभिलिखित किया है, तो प्रतिपरीक्षा की इस प्रक्रिया द्वारा साक्षी के मौखिक कथन को अभिलेख पर लाया जा सकता है । अत: यह प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के अभिव्यक्त उपबंध का उल्लंघन करती है । दूसरी भ्रांति यह है कि अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दिए गए दृष्टांत से साक्षी कटघरे में किए गए प्राथमिक कथन का स्वत: खंडन नहीं होता है क्योंकि साक्षी ने अभी उस आधार पर कतई कोई प्राख्यान नहीं किया है जिसे आधार के रूप में प्रयुक्त किया जा सके । इस धारा के अधीन विरोधाभास साक्षी ने जो साक्षी कटघरे में कहा था और जो उसने पहले पुलिस अधिकारी के समक्ष कहा था, के बीच होना चाहिए न कि जो साक्षी कहता है कि उसने पुलिस अधिकारी के समक्ष यह कहा था और जो उसने वास्तव में उसके समक्ष कहा था, के बीच होना चाहिए । ऐसी स्थिति में कतई कोई प्रश्न नहीं पूछा जा सकता ; प्रश्न केवल खंडन करने के लिए पूछे जा सकते हैं और यहां पूछे गए प्रश्न से खंडन नहीं होता है ; इसके परिणामस्वरूप जो उत्तर आता है जिसका पुलिस के कथन द्वारा खंडन होता है । अत: विद्वान् काउंसेल के साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 पर आधारित इस तर्क की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के अभिव्यक्त उपबंधों पर विचार करने के लिए कोई सुसंगतता नहीं है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

यह विनिश्चय एक शास्त्रीय विनिश्चय है, जो हमारे विचारण न्यायालयों का मार्गदर्शन करता रहेगा । इस मामले के तथ्यों में, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने साक्षियों के उन पूर्व कथनों को चिह्नित नहीं किया था जिनके आधार पर प्रतिपरीक्षा में उनका खंडन किए जाने की ईप्सा की गई थी ।

साक्ष्य का विश्लेषण

11. अभि. सा. 1 (मृतक के एक पुत्र) ने दावा किया था कि अभियुक्त सं. 1-अपीलार्थी सं. 2 ने तारीख 3 फरवरी, 2013 को 4.00 बजे अपराह्न में उसके पिता को उनके घर से लिया और उसे भोजखोवा चपोरी बाजार लेकर गया । उसने कथन किया कि 7.00 बजे अपराह्न में यह साक्षी घर वापस आया और लगभग 8.00 से 8.30 बजे अपराह्न में वह कुछ खरीदारी करने के लिए भोजखोवा चपोरी बाजार आया । उसने दावा किया कि वह एक मोटरबाइक चला रहा था और मोटरबाइक की हैड लाइट की रोशनी में उसने अभियुक्त सं. 7 अपीलार्थी सं. 4 (मोहम्मद नूर असलम), अभियुक्त सं. 3 अपीलार्थी सं. 1 (मोहम्मद अलाउद्दीन), दोषमुक्त अभियुक्त सं. 2 (मोहम्मद ताहिरूद्दीन), अभियुक्त सं. 6 अपीलार्थी सं. 3 (मोहम्मद नुरूल इस्लाम), अभियुक्त सं. 1 अपीलार्थी सं. 2 (मोहम्मद अब्दुल कादिर), दोषमुक्त अभियुक्त सं. 5 (मोहम्मद अब्दुल कादिर जिलानी) को एक व्यक्ति को घायल करने के पश्चात् एक मोटरबाइक पर उस स्थान से जाते हुए देखा । अभि. सा. 1 ने कथन किया कि वह मोटरसाइकिल से उतरा और अपने पिता को वहां पड़े हुए पाया । अभि. सा. 1 के साक्ष्य पर हमें विश्वास करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि विचारण न्यायालय ने पहले ही यह अभिनिर्धारित किया है कि उसका यह दावा भ्रांतिजनक था कि उसने घटना देखी थी । तथापि, उसने कथन किया कि घटना की तारीख को लगभग 4.00 बजे अपराह्न में अपीलार्थी सं. 2 ने उसके मकान से उसके पिता को लिया था । अभि. सा. 2 (मोहम्मद असराफुल इस्लाम) को पक्षद्रोही घोषित किया गया था ।

12. अब हम अभि. सा. 3 (मृतक के एक अन्य पुत्र) के साक्ष्य पर आते हैं । उसने अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी सं. 2 घटना की तारीख

को 4.00 बजे अपराह्न में उनके मकान पर आया । इस साक्षी ने कथन किया कि मृतक कांग्रेस पार्टी का एक प्रभावशाली नेता था । उसने कथन किया कि चपोरी केंद्र पर कांग्रेस की एक बैठक थी और इसलिए वह मृतक को अपनी मोटरसाइकिल पर लेकर गया । उसने कथन किया कि 6.30 बजे अपराह्न में अपीलार्थी सं. 2 उसके पिता को लाया । उसने दावा किया कि वह अपनी मोटरसाइकिल पर उनके पीछे-पीछे था । उसने कथन किया कि उसे एल. पी. विद्यालय से लगभग 30 मीटर की दूरी से शोरगुल सुनाई दिया । आगे जाने के पश्चात् उसने अपीलार्थी सं. 3 को अपने हाथ में एक धारदार आयुध के साथ सड़क की ओर दौड़ते हुए देखा । उसने कथन किया कि उसने मोटरसाइकिल की हैडलाइट की रोशनी में अपलार्थी सं. 3 को देखा था । उसने दावा किया कि उसने अपीलार्थी सं. 2 को मोटरसाइकिल छोड़कर जाते हुए देखा था। फिर उसे अपने पिता का शव पाया । प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 3 का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके पूर्व कथन के आधार पर खंडन किए जाने की ईप्सा की गई थी । उसकी प्रतिपरीक्षा में यह प्रश्न किया गया कि उसने पुलिस को यह नहीं बताया था कि लगभग 6.30 बजे अपराह्न में अपीलार्थी सं. 2 उसके पिता के साथ एक मोटरसाइकिल पर वापस आया था । इसके अतिरिक्त, यह प्रश्न किया गया कि उसने पुलिस को यह नहीं बताया था कि वह अपनी बाइसाइकिल पर उनके पीछे-पीछे था । इस साक्षी से एक अन्य प्रश्न यह किया गया था कि उसने पुलिस को यह नहीं बताया था कि एक बैठक से बाइसाइकिल पर वापस आते हुए उसने मोटरसाइकिल की हैडलाइट की रोशनी में देखा था कि अपीलार्थी सं. 3 भागकर एक आयुध के साथ उस स्थान से जा रहा था । इस प्रक्रम पर, अभि. सा. 11 (श्री बिद्युत बिकास बरूआ), अन्वेषण अधिकारी की प्रतिपरीक्षा पर दृष्टि डालना आवश्यक है । प्रतिपरीक्षा में उसने यह कथन किया था :–

> "अभि. सा. 3 अफजुद्दीन चौधरी ने मेरे समक्ष यह उल्लेख नहीं किया था कि वह भी बैठक में भाग लेने के लिए गया था । इस साक्षी ने मेरे समक्ष यह भी उल्लेख नहीं किया था कि लगभग 6.30 बजे अपराह्न में अभियुक्त कादिर उसके पिता को एक

> मोटरसाइकिल पर बैठक से वापस लाया था और वह भी दस मिनट के पश्चात् उनके पीछे-पीछे आया था । इस साक्षी ने मेरे समक्ष यह भी उल्लेख नहीं किया था कि अपनी बाइसाइकिल पर वापस आते हुए उसने बाइक की रोशनी में देखा कि नुरुल अपने हाथ में एक आयुध लिए हुए भाग रहा था ।'

अत: उसने मुख्य परीक्षा में जो यह मामला बनाया था कि उसने अपीलार्थी सं. 3 को अपने हाथ में आयुध के साथ भागते हुए मोटरसाइकिल की हैडलाइट की रोशनी में देखा था, वह एक लोप है । यह लोप अति महत्वपूर्ण है जो विरोधाभास की कोटि में आता है । इसलिए उसका साक्ष्य केवल अपीलार्थी सं. 2 द्वारा 4.00 बजे अपराह्न में एक मोटरसाइकिल पर उसके पिता को ले जाने के बारे में उसके कथन के लिए तात्विक रह जाता है । इस साक्षी ने यह कथन किया था कि 4.00 बजे अपराह्न में उसका पिता अपीलार्थी के साथ एक बैठक में गया था क्योंकि उसका पिता कांग्रेस का एक प्रभावशाली नेता था । अत: यह मान लिया जाए कि 4.00 बजे अपराह्न में मृतक को अंतिम बार अपीलार्थी सं. 2 के साथ देखा गया था और मृतक ने उसके पश्चात् कांग्रेस की एक बैठक में भाग लिया था । इस प्रकार, 4.00 बजे अपराह्न के पश्चात् मृतक अन्य व्यक्तियों के भी साथ में था ।

13. अब अभि. सा. 4 के साक्ष्य पर आते हैं । उसने दावा किया कि अपीलार्थी सं. 2, अपीलार्थी सं. 4 और दोषमुक्त अभियुक्तों सहित आठ से दस व्यक्तियों को एक दाव से मृतक पर हमला करते हुए देखा था । उसने कथन किया कि उसने और अभि. सा. 9 ने शोर मचाया जिसके पश्चात् अभियुक्त चले गए । इस साक्षी का यह सुझाव देते हुए खंडन किया गया कि उसने पुलिस को यह नहीं बताया था कि लगभग आठ से दस लोग मृतक पर उसे घेरकर हमला कर रहे थे । इस पहलू पर, प्रतिपरीक्षा में अन्वेषण अधिकारी ने यह उल्लेख किया :–

> "अभि. सा. 4 सैदर अली ने मेरे समक्ष यह कहा था कि उसने उस समय एल. पी. विद्यालय के निकट हुल्ला देखा जब वह बाजार से वापस आ रहा था । <u>इस साक्षी ने मेरे समक्ष यह नहीं</u>

कहा था कि वह अईनुल के साथ एक मोटरसाइकिल पर जा रहा था । इस साक्षी ने मेरे समक्ष यह नहीं कहा था कि उसने अभियुक्त अलाउद्दीन, नूर इस्लाम, नुरूल, कादिर और जिलानी को दाव से शहाबुद्दीन पर हमला करते हुए देखा था । इस साक्षी ने मेरे समक्ष अब्दुल कादिर जिलानी के नाम का उल्लेख नहीं किया था । इस साक्षी ने मेरे समक्ष रूस्तम, मामरस और ताहिरूद्दीन के नाम का उल्लेख किया था । इस साक्षी ने मेरे समक्ष यह नहीं कहा था कि कादिर ने पुलिस थाने में अभ्यर्पण किया था ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

इस प्रकार, तात्विक लोप हैं जो इस साक्षी की विश्वसनीयता को प्रभावित करते हैं । अत: यह बहुत ही संदेहास्पद है कि क्या अभि. सा. 4 ने मृतक पर हमला होते हुए देखा था ।

14. अभि. सा. 5 ने कथन किया कि लगभग 8.00 बजे अपराह्न में उसने मृतक, अपीलार्थी सं. 2, 3 और 4 को भोजखोवा बालिका विद्यालय के निकट सड़क पर बात करते हुए देखा था । मृतक ने उससे अपना थैला ले जाने का अनुरोध किया क्योंकि मृतक ने कहा कि वह चुनाव प्रचार के लिए जा रहा है । इस साक्षी का उसकी प्रतिपरीक्षा में इस बात से सामना कराया गया था कि उसने पुलिस को यह नहीं बताया था कि 8.00 बजे अपराह्न में जब वह वापस अपने मकान पर जा रहा था, तब उसने अभियुक्तों को मृतक के साथ बात करते हुए देखा था । अभि. सा. 11, अन्वेषण अधिकारी ने स्वीकार किया कि अभि. सा. 5 ने उसके समक्ष यह नहीं कहा था कि लगभग 8.00 बजे अपराह्न में जब वह भोजखोवा से आ रहा था, तब उसने मृतक को अभियुक्तों के साथ बात करते हुए देखा था । इस प्रकार, अभि. स. 5 के परिसाक्ष्य का तात्विक भाग एक महत्वपूर्ण लोप है जो विरोधाभास की कोटि में आता है ।

15. अभि. सा. 6 मृतक की पत्नी है जो न तो प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है और न ही अंतिम बार एक साथ देखे जाने के मुद्दे की साक्षी है । तथापि, उसने कथन किया कि उसके मृतक पति ने अभियुक्तों के

विरुद्ध यह अभिकथन करते हुए एक शिकायत की थी कि अभियुक्तों ने उसे बेकब्जा किया है ।

16. अभि. सा. 7 ने कथन किया कि घटना के दिन 8.10 बजे अपराह्न में जब वह भोजन लाने के लिए अपने मकान पर जाने के लिए तैयार था, तब उसने अपीलार्थी सं. 2 को मृतक की मोटरसाइकिल पर पीछे बैठकर जाते हुए देखा था । जैसा कि अभि. सा. 11 के साक्ष्य से दिखाई पड़ता है, यह कथन भी एक लोप है । अभि. सा. 8 एक चिकित्सा अधिकारी है, जिसने मृतक के शव की मरणोत्तर परीक्षा की थी । अभि. सा. 9 ने कथन किया कि घटना के दिन 8.00 बजे अपराह्न में उसने अपीलार्थी सं. 2 और अब्दुल कादिर जिलानी (दोषमुक्त अभियुक्त) को उस स्थान से जाते हुए देखा था जहां मृतक पड़ा हुआ था । इस कथन को भी अभि. सा. 11 के साक्ष्य में एक लोप होना साबित किया गया है । अभि. सा. 10 एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी या ऐसा साक्षी नहीं है जिसने अंतिम बार एक साथ देखे जाने के बारे में साक्ष्य दिया था ।

17. अत: जहां तक मृतक पर हमला करने के साक्ष्य का संबंध है, अपीलार्थियों की अंतर्ग्रस्तता को दर्शित करने के लिए कोई विश्वसनीय साक्ष्य नहीं है । अंतिम बार एक साथ देखे जाने के संबंध में एकमात्र साक्ष्य यह है कि घटना की तारीख को 4.00 बजे अपराह्न में अपीलार्थी सं. 2 मृतक को अपनी मोटरसाइकिल पर ले गया था । तथापि, अभि. सा. 3 ने यह कथन किया है कि अपीलार्थी सं. 2 मृतक को 4.00 बजे अपराह्न में कांग्रेस पार्टी की एक बैठक में उपस्थित होने के लिए लेकर गया था । उसने यह भी कहा कि उसका मृतक पिता कांग्रेस का एक प्रभावशाली नेता था । अत: 4.00 बजे अपराह्न के पश्चात् मृतक के आस-पास अभियुक्तों की अपेक्षा अन्य व्यक्ति भी थे । यदि यह मान भी लिया जाए कि अभियुक्तों को उस दिन मृतक के साथ देखा गया था जिस दिन उसे मृत पाया गया था, तो भी मृतक को अभियुक्तों के साथ अभिकथित रूप से देखे जाने के पश्चात् उसने कांग्रेस पार्टी की एक बैठक में भाग लिया था । अंतिम बार देखे जाने की कहानी अभियोजन पक्ष के लिए तब सहायक होती है यदि मृतक को अभियुक्तों के साथ

उस समीपवर्ती समय पर देखा गया है जिस समय शव पाया गया है । यदि साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि मृतक को अभियुक्तों के साथ देखे जाने के पश्चात् वह अन्य व्यक्तियों के भी साथ था, तो अंतिम बार एक साथ देखे जाने की कहानी से अभियोजन पक्ष को कोई सहायता नहीं मिलती है । इसका कारण यह है कि अपराध में अन्य व्यक्तियों की अंतर्ग्रस्तता से इनकार नहीं किया जा सकता है । अत: यह तथ्य कि अपीलार्थी सं. 2 को 4.00 बजे अपराह्न में मृतक के साथ देखा गया था, उसे हत्या का अपराध कारित करने से संपृक्त करने के लिए पर्याप्त नहीं है । हमारे द्वारा अभिलिखित किए गए कारणों से तथाकथित प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता । अंतिम बार एक साथ देखे जाने की कहानी नामंजूर किए जाने योग्य है । अत: अभियोजन पक्ष अपीलार्थियों के विरुद्ध आरोप को सिद्ध करने में असफल रहा है ।

निष्कर्ष

18. ऊपर अभिलिखित किए गए कारणों से, विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णयों को अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किए जाने की सीमा तक अपास्त किया जाता है । अपीलार्थियों को उनके विरुद्ध आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है । तद्नुसार यह अपील मंजूर की जाती है ।

19. अपीलार्थियों को, यदि उनकी किसी अन्य अपराध के संबंध में आवश्यकता न हो तो, स्वतंत्र किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

संसद् के अधिनियम

प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण (विनियमन) अधिनियम, 2005

(2005 का अधिनियम संख्यांक 29)

[23 जून, 2005]

प्राइवेट सुरक्षा अभिकरणों के विनियमन और उससे संबंधित या उसके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के छप्पनवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण (विनियमन) अधिनियम, 2005 है ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य को छोड़कर संपूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे ।

2. परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "बख्तरबंद कार सेवा" से बख्तरबंद कार के साथ सशस्त्र रक्षकों के अभिनियोजन द्वारा प्रदान की गई सेवा और ऐसी अन्य संबंधित सेवाएं अभिप्रेत हैं, जो समय-समय पर, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित की जाएं ;

(ख) "नियंत्रक प्राधिकारी" से धारा 3 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त नियंत्रक प्राधिकारी अभिप्रेत है ;

(ग) "अनुज्ञप्ति" से धारा 7 की उपधारा (5) के अधीन अनुदत्त अनुज्ञप्ति अभिप्रेत है ;

(घ) "अधिसूचना" से राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना अभिप्रेत है ;

(ङ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(च) "प्राइवेट सुरक्षा" से, किसी व्यक्ति या संपत्ति अथवा दोनों की संरक्षा या रक्षा करने के लिए लोक सेवक से भिन्न किसी व्यक्ति द्वारा उपलब्ध कराई गई सुरक्षा अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत बख्तरबंद कार सेवा की व्यवस्था भी है ;

(छ) "प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण" से किसी औद्योगिक या कारबार उपक्रम या किसी कंपनी या किसी अन्य व्यक्ति या संपत्ति को प्राइवेट सुरक्षा सेवाएं जिनके अंतर्गत प्राइवेट सुरक्षा गार्डों या उनके पर्यवेक्षकों को प्रशिक्षण देना भी है, उपलब्ध कराने या प्राइवेट सुरक्षा गार्ड उपलब्ध कराने के कारबार में लगा हुआ, सरकारी अभिकरण, विभाग या संगठन से भिन्न, कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का निकाय अभिप्रेत है ;

(ज) "प्राइवेट सुरक्षा गार्ड" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो किसी अन्य व्यक्ति या संपत्ति या दोनों को शस्त्र सहित या उनके बिना प्राइवेट सुरक्षा प्रदान कर रहा है और उसके अंतर्गत पर्यवेक्षक भी है ;

(झ) संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में, "राज्य सरकार" के अंतर्गत संविधान के अनुच्छेद 239 के अधीन राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त उस संघ राज्यक्षेत्र का प्रशासक भी है ।

3. नियंत्रक प्राधिकारी की नियुक्ति – (1) राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, उस राज्य के गृह विभाग में संयुक्त सचिव से अन्यून पंक्ति के किसी अधिकारी या समतुल्य अधिकारी को इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए नियंत्रक प्राधिकारी के रूप में पदाभिहित करेगी ।

(2) राज्य सरकार, नियंत्रक प्राधिकारी द्वारा कृत्यों के दक्षतापूर्ण निर्वहन के लिए, उसे ऐसे अन्य अधिकारी और कर्मचारिवृंद उपलब्ध करा सकेगी, जिन्हें राज्य सरकार आवश्यक समझे ।

4. व्यक्तियों या प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण द्वारा अनुज्ञप्ति के बिना प्राइवेट सुरक्षा गार्ड न रखना या उपलब्ध न कराना – कोई भी व्यक्ति प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण का कारबार तभी करेगा या प्रारंभ करेगा, जब उसके पास इस अधिनियम के अधीन जारी की गई अनुज्ञप्ति हो :

परंतु ऐसा कोई व्यक्ति, जो इस अधिनियम के प्रारंभ से ठीक पूर्व प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण का कारबार कर रहा है, ऐसे प्रारंभ की तारीख से एक वर्ष की अवधि तक और यदि उसने एक वर्ष की उक्त अवधि के भीतर ऐसी अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन कर दिया है तो ऐसे आवेदन के निपटारे तक, ऐसा कारबार करता रहेगा :

परन्तु यह और कि कोई प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण विदेश में प्राइवेट सुरक्षा नियंत्रक प्राधिकारी की अनुज्ञा अभिप्राप्त किए बिना प्रदान नहीं करेगा जो ऐसी अनुज्ञा देने के पूर्व केन्द्रीय सरकार से परामर्श करेगा ।

5. अनुज्ञप्ति के लिए पात्रता – इस अधिनियम के अधीन कोई अनुज्ञप्ति जारी करने के लिए किसी व्यक्ति से आवेदन पर केवल उसके पूर्ववृत्त के सम्यक् सत्यापन के पश्चात् ही विचार किया जाएगा ।

6. वे व्यक्ति जो अनुज्ञप्ति के लिए पात्र नहीं हैं – (1) इस अधिनियम के अधीन कोई अनुज्ञप्ति जारी करने के लिए ऐसे व्यक्ति के संबंध में विचार नहीं किया जाएगा, यदि वह, –

(क) किसी कंपनी के संप्रवर्तन, उसके बनाने या प्रबंध के संबंध में किसी अपराध के लिए (उसके द्वारा कंपनी के संबंध में किया गया कोई कपट या अपकरण) सिद्धदोष किया गया है, जिसके अंतर्गत अनुन्मोचित दिवालिया भी है ; या

(ख) किसी सक्षम न्यायालय द्वारा किसी अपराध के लिए सिद्धदोष किया गया है, जिसके लिए विहित दंड दो वर्ष से अन्यून का कारावास है ; या

(ग) किसी ऐसे संगठन या संगम से सम्पर्क रखता है जिसे उसके ऐसे क्रियाकलापों के कारण किसी विधि के अधीन प्रतिबंधित कर दिया गया है, जो राष्ट्रीय सुरक्षा या लोक व्यवस्था के लिए

खतरा है यह ऐसे व्यक्ति के बारे में यह जानकारी है कि वह उन क्रियाकलापों में लिप्त है जो राष्ट्रीय सुरक्षा या लोक व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं ; या

(घ) अवचार या नैतिक अधमता के आधार पर सरकारी सेवा से पदच्युत किया गया है या हटाया गया है ।

(2) इस अधिनियम के अधीन कोई अनुज्ञप्ति जारी करने के लिए, किसी कंपनी, फर्म या व्यक्तियों के संगम पर विचार नहीं किया जाएगा, यदि, वह भारत में रजिस्ट्रीकृत नहीं है या जिसका स्वत्वधारी या बहुमत शेयर धारक, भागीदार या निदेशक ऐसा है जो भारत का नागरिक नहीं है ।

7. अनुज्ञप्ति अनुदत्त किए जाने के लिए आवेदन – (1) किसी प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण को अनुज्ञप्ति अनुदत्त किए जाने के लिए आवेदन नियंत्रक प्राधिकारी को ऐसे प्ररूप में किया जाएगा, जो विहित किया जाए ।

(2) आवेदक धारा 6 में अंतर्विष्ट उपबंधों के संबंध में ब्यौरे समाविष्ट करते हुए एक शपथपत्र प्रस्तुत करेगा, जो धारा 9 की उपधारा (2) के अधीन अपेक्षित अपने प्राइवेट सुरक्षा गार्डों और पर्यवेक्षकों के लिए प्रशिक्षण की उपलब्धता सुनिश्चित करेगा और धारा 11 के अधीन और पुलिस में रजिस्ट्रीकृत या न्यायालय में लंबित मामलों की, जिनमें आवेदक लिप्त है, शर्तों को पूरा करेगा ।

(3) उपधारा (1) के अधीन प्रत्येक आवेदन के साथ –

(क) यदि प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण किसी राज्य के एक जिले में कार्य कर रहा है तो पांच हजार रुपए की फीस होगी ;

(ख) यदि अभिकरण किसी राज्य के एक से अधिक किंतु पांच जिलों तक में कार्य कर रहा है तो दस हजार रुपए की फीस होगी ; और

(ग) यदि वह संपूर्ण राज्य में कार्य कर रहा है तो पच्चीस हजार रुपए की फीस होगी ।

(4) नियंत्रक प्राधिकारी, उपधारा (1) के अधीन आवेदन की प्राप्ति पर, ऐसी जांच करने के पश्चात् जिसे वह आवश्यक समझे, और संबद्ध पुलिस प्राधिकारी से अनापत्ति प्रमाणपत्र अभिप्राप्त करने के पश्चात् लिखित आदेश द्वारा, आवेदन की पूर्ण विशिष्टियों और विहित फीस के साथ प्राप्ति की तारीख से साठ दिन की अवधि के भीतर या तो अनुज्ञप्ति अनुदत्त कर सकेगा या अनुज्ञप्ति अनुदत्त करने से इनकार कर सकेगा :

परन्तु आवेदन अस्वीकार किए जाने का कोई आदेश तभी किया जाएगा जब –

(क) आवेदक को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दे दिया गया हो ; और

(ख) वे आधार, जिन पर अनुज्ञप्ति से इनकार किया जाता है, आदेश में वर्णित किए गए हों ।

(5) इस धारा के अधीन अनुदत्त अनुज्ञप्ति –

(क) पांच वर्ष की अवधि के लिए विधिमान्य रहेगी, जब तक कि उसे धारा 13 की उपधारा (1) के अधीन रद्द नहीं कर दिया जाता ;

(ख) पांच वर्ष की समाप्ति के पश्चात्, ऐसी फीस के संदाय पर जो विहित की जाए, समय-समय पर पांच वर्ष की एक और अवधि के लिए नवीकृत की जा सकेगी ; और

(ग) ऐसी शर्तों के अध्यधीन होंगी, जो विहित की जाएं ।

8. अनुज्ञप्ति का नवीकरण – (1) अनुज्ञप्ति के नवीकरण के लिए आवेदन नियंत्रक प्राधिकारी को, अनुज्ञप्ति की विधिमान्यता की अवधि की समाप्ति की तारीख से कम-से-कम पैंतालीस दिन पूर्व ऐसे प्ररूप में, जो विहित किया जाए, किया जाएगा और उसके साथ अपेक्षित फीस और इस अधिनियम की धारा 6, धारा 7 तथा धारा 11 के अधीन अपेक्षित अन्य दस्तावेज भी होंगे ।

(2) नियंत्रक प्राधिकारी अनुज्ञप्ति के नवीकरण के लिए आवेदन पर सभी प्रकार से पूर्ण आवेदन की प्राप्ति की तारीख से तीस दिन के अंदर आदेश पारित करेगा ।

(3) नियंत्रक प्राधिकारी, उपधारा (1) के अधीन आवेदन की प्राप्ति पर ऐसी जांच करने के पश्चात् जिसे वह आवश्यक समझे और लिखित आदेश द्वारा, अनुज्ञप्ति का नवीकरण कर सकेगा या उसका नवीकरण करने से इनकार कर सकेगा :

परन्तु इनकार करने का कोई आदेश, आवेदक को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दिए जाने के पश्चात् ही किया जाएगा ।

9. प्रचालन प्रारंभ करने और पर्यवेक्षकों की नियुक्ति की शर्तें – (1) प्रत्येक प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण, अनुज्ञप्ति अभिप्राप्त करने के छह मास के भीतर अपने क्रियाकलाप प्रारंभ करेगा ।

(2) प्रत्येक प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण अपने प्राइवेट सुरक्षा गार्डों और पर्यवेक्षकों को ऐसा प्रशिक्षण और कुशलताएं, जो विहित किए जाएं, देना सुनिश्चित करेगा :

परन्तु इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण का कारबार करने वाला व्यक्ति, ऐसे प्रारंभ की तारीख से एक वर्ष की अवधि के भीतर अपने सुरक्षा गार्डों और पर्यवेक्षकों के लिए अपेक्षित प्रशिक्षण सुनिश्चित करेगा ।

(3) प्रत्येक प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण, अनुज्ञप्ति जारी किए जाने की तारीख से साठ दिन के भीतर ऐसी संख्या में, जो विहित की जाए, पर्यवेक्षकों को नियोजित करेगा ।

(4) कोई प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण पर्यवेक्षक के रूप में किसी व्यक्ति को तभी नियोजित करेगा या रखेगा जब वह धारा 10 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट शर्तों को पूरा करता हो ।

(5) प्रत्येक प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण, प्राइवेट सुरक्षा गार्डों के किसी पर्यवेक्षक की नियुक्ति करते समय उस व्यक्ति को, जिसके पास सेना, नौसेना, वायु सेना, संघ के किसी अन्य सशस्त्र बल या राज्य पुलिस,

जिसके अंतर्गत सशस्त्र पुलिस और होम गार्ड भी हैं, तीन वर्ष से अन्यून की अवधि की सेवा का अनुभव हो, अधिमानता देगा ।

10. प्राइवेट सुरक्षा गार्ड बनने के लिए पात्रता – (1) कोई प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण प्राइवेट सुरक्षा गार्ड के रूप में किसी व्यक्ति को तभी नियोजित करेगा या रखेगा, जब –

(क) वह भारत का नागरिक हो या ऐसे अन्य देश का नागरिक हो जिसे केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट करे ;

(ख) उसने अठारह वर्ष की आयु पूरी कर ली हो किंतु पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त न की हो ;

(ग) उसने अभिकरण का अपने चरित्र और पूर्ववृत्त के बारे में ऐसी रीति से, जो विहित की जाए, समाधान कर दिया हो ;

(घ) उसने विहित सुरक्षा प्रशिक्षण सफलतापूर्वक पूर्ण न किया हो ;

(ङ) वह ऐसे शारीरिक मानदंडों को पूरा करता हो जो विहित किए जाएं ; और

(च) वह ऐसी अन्य शर्तों को, जो विहित की जाएं, पूरा करता हो ।

(2) ऐसा कोई भी व्यक्ति सक्षम न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया गया है या जिसे संघ के किसी सशस्त्र बल, किसी राज्य पुलिस संगठन, केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार या किसी प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण में, सेवा करते समय अवचार या नैतिक अधमता के आधारों पर सेवा से पदच्युत किया गया है या हटाया गया है, प्राइवेट सुरक्षा गार्ड या पर्यवेक्षक के रूप में नियोजित या लगाया नहीं जाएगा ।

(3) प्रत्येक प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण, किसी व्यक्ति को प्राइवेट सुरक्षा गार्ड के रूप में नियोजित करते समय, ऐसे व्यक्ति को

अधिमानता दे सकेगा, जिसने निम्नलिखित में किसी एक या अधिक में उसके सदस्य के रूप में सेवा की है :–

(i) सेना ;

(ii) नौसेना ;

(iii) वायु सेना ;

(iv) संघ का कोई अन्य सशस्त्र बल ;

(v) पुलिस, जिसके अंतर्गत राज्यों की सशस्त्र पुलिस भी है ; और

(vi) होमगार्ड ।

11. अनुज्ञप्ति की शर्तें – (1) राज्य सरकार उन शर्तों को विहित करने के लिए नियम विरचित कर सकेगी जिन पर इस अधिनियम के अधीन अनुज्ञप्ति अनुदत्त की जाएगी और ऐसी शर्तों में अपेक्षाएं, जो उस प्रशिक्षण के विषय में जिसे अनुज्ञप्तिधारी को लेना है, उस व्यक्ति या उन व्यक्तियों, जिनसे अभिकरण बना है, का ब्यौरा नियंत्रक प्राधिकारी को समय-समय पर उनके पते में किसी परिवर्तन, प्रबंध में परिवर्तन के संबंध में और उनके द्वारा नियोजित या नियुक्त, यथास्थिति, प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण या प्राइवेट सुरक्षा गार्ड के कर्तव्यों के पालन के अनुक्रम में उनके विरुद्ध ऐसे किसी दांडिक आरोप के संबंध में दी जाने वाली सूचना की बाध्यता भी है ।

(2) राज्य सरकार धारा 9 की उपधारा (2) के अधीन प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण द्वारा अपेक्षित प्रशिक्षण दिए जाने के बारे में सत्यापन करने और ऐसे प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण की जिसने अपेक्षित प्रशिक्षण सुनिश्चित करने की शर्तों का पालन नहीं किया हो, अनुज्ञप्ति को जारी रखने का या अन्यथा के पुनर्विलोकन करने का नियमों में उपबंध कर सकेगी ।

12. अनुज्ञप्ति का प्रदर्शित किया जाना – प्रत्येक प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण अपनी अनुज्ञप्ति या उसकी प्रति अपने कारबार के सहज दृश्य स्थान पर प्रदर्शित करेगा ।

13. अनुज्ञप्ति का रद्दकरण और निलंबन – (1) नियंत्रक प्राधिकारी किसी अनुज्ञप्ति को निम्नलिखित किसी एक या अधिक आधारों पर रद्द कर सकेगा, अर्थात् :–

(क) कि अनुज्ञप्ति तात्विक तथ्यों के व्यपदेशन पर या उनको छुपाकर अभिप्राप्त की गई है ;

(ख) कि अनुज्ञप्तिधारी ने मिथ्या दस्तावेजों या फोटोग्राफों का उपयोग किया है ;

(ग) कि अनुज्ञप्तिधारी ने इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबंधों या अनुज्ञप्ति की किसी शर्त का अतिक्रमण किया है ;

(घ) कि अनुज्ञप्तिधारी ने किसी औद्योगिक या कारबार उपक्रम या कंपनी या किसी अन्य व्यक्ति के यहां प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण के रूप में अपने कर्तव्यों के निर्वहन के दौरान उसके द्वारा अभिप्राप्त की गई जानकारी का दुरुपयोग किया है ;

(ङ) कि अनुज्ञप्तिधारी ने, किसी शीर्षनामा विज्ञापन या किसी अन्य मुद्रित सामग्री का उपयोग करके या किसी अन्य रीति से यह व्यपदेशन किया है कि प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण सरकार का एक अभिकरण है या ऐसा अभिकरण उस नाम से भिन्न किसी नाम का उपयोग कर रहा है जिस नाम से उसे अनुज्ञप्ति अनुदत्त की गई है ;

(च) कि अनुज्ञप्तिधारी लोक सेवक के रूप में प्रतिरूपण कर रहा है या किसी व्यक्ति को उस रूप में प्रतिरूपण करने के लिए दे रहा है या सहायता कर रहा है या दुष्प्रेरित कर रहा है ;

(छ) कि प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण विनिर्दिष्ट समयावधि के भीतर अपने क्रियाकलाप प्रारंभ करने में या पर्यवेक्षक नियुक्त करने में असफल रहा था ;

(ज) कि अनुज्ञप्तिधारी किसी व्यक्ति को करार की गई सेवाएं प्रदान करने में जानबूझकर असफल रहा है या उसने सेवाएं प्रदान करने से इनकार कर दिया है ;

(झ) कि अनुज्ञप्तिधारी ने ऐसा कार्य किया है जो किसी न्यायालय के आदेश या किसी विधिपूर्ण प्राधिकारी के आदेश के अतिक्रमण में है या वह ऐसे किसी आदेश का अतिक्रमण करने के लिए किसी व्यक्ति को सलाह दे रहा है, प्रोत्साहित कर रहा है या सहायता दे रहा है ;

(ञ) कि अनुज्ञप्तिधारी ने अनुसूची में दिए गए अधिनियमों के उपबंधों का जो केन्द्रीय सरकार द्वारा राजपत्र में अधिसूचना द्वारा उपांतरित किए जा सकेंगे, अतिक्रमण किया है ;

(ट) कि इस बात के अनेक उदाहरण रहे हैं जब प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण द्वारा उपलब्ध कराए गए प्राइवेट सुरक्षा गार्ड :–

(i) प्राइवेट सुरक्षा प्रदान करने में असफल रहा है या रहे हैं या ऐसी सुरक्षा प्रदान न करने में घोर उपेक्षा के दोषी थे ;

(ii) उन्होंने न्यास भंग किया है या उस संपत्ति या उसके किसी भाग का दुर्विनियोग किया है जिसकी संरक्षा करने की उनसे प्रत्याशा की गई थी ;

(iii) आदतन नशे में या अनुशासनहीन पाए गए थे ;

(iv) अपराध करने में लिप्त पाए गए थे ; या

(v) उन्होंने उनके प्रभार में रखे गए व्यक्ति या संपत्ति के विरुद्ध अपराध की मौनानुमति दी थी या उन्होंने उसके लिए दुष्प्रेरित किया था ;

(ठ) कि अनुज्ञप्तिधारी ने ऐसा कोई कार्य किया है जिससे राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरा हुआ है या पुलिस को या अन्य प्राधिकारी को उनके कर्तव्यों के निर्वहन में सहायता प्रदान न की या उसने ऐसी रीति से कार्य किया है जिससे राष्ट्रीय सुरक्षा या लोक व्यवस्था या विधि व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है ।

(2) जहां नियंत्रक प्राधिकारी का, ऐसे कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएं, यह समाधान हो जाता है कि उपर्युक्त उपधारा (1) में वर्णित आधारों में से किसी आधार पर अनुज्ञप्ति के रद्दकरण के प्रश्न के

लंबित रहते हुए ऐसा करना आवश्यक है कि नियंत्रक प्राधिकारी, लिखित आदेश द्वारा, अनुज्ञप्ति के प्रचालन को तीस दिन से अनधिक की ऐसी अवधि के लिए, जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, निलंबित कर सकेगा और अनुज्ञप्तिधारी से ऐसे आदेश के जारी किए जाने की तारीख से पंद्रह दिन के भीतर इस बारे में कारण दर्शित करने की अपेक्षा कर सकेगा कि अनुज्ञप्ति का निलंबन, रद्दकरण का प्रश्न अवधारित किए जाने तक क्यों न विस्तारित कर दिया जाए ।

(3) अनुज्ञप्ति के निलंबन या रद्दकरण का प्रत्येक आदेश लिखित में होगा और उसमें ऐसे निलंबन या रद्दकरण के कारण विनिर्दिष्ट किए जाएंगे तथा उसकी एक प्रति प्रभावित व्यक्ति को संसूचित की जाएगी ।

(4) उपधारा (1) के अधीन अनुज्ञप्ति के रद्दकरण का कोई आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक कि संबद्ध व्यक्ति को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर न दे दिया गया हो ।

14. अपील – (1) धारा 7 की उपधारा (4) के अधीन अनुज्ञप्ति अनुदत्त करने या धारा 8 की उपधारा (3) के अधीन नवीकरण करने से इनकार करने के नियंत्रक प्राधिकारी के आदेश या धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन अनुज्ञप्ति के निलंबन के आदेश या उस धारा की उपधारा (1) के अधीन अनुज्ञप्ति के रद्दकरण के आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति, उस आदेश के विरुद्ध अपील राज्य सरकार के गृह सचिव को ऐसे आदेश की तारीख से साठ दिन की अवधि के भीतर कर सकेगा :

परंतु साठ दिन की उक्त अवधि की समाप्ति के पश्चात् भी अपील ग्रहण की जा सकेगी यदि अपीलार्थी राज्य सरकार का यह समाधान कर देता है कि उसके पास उस अवधि के भीतर अपील न कर पाने के लिए पर्याप्त कारण है ।

(2) उपधारा (1) के अधीन प्रत्येक अपील ऐसे प्ररूप में होगी जो विहित किया जाए और उसके साथ उस आदेश की जिसके विरुद्ध अपील की गई है, एक प्रति होगी ।

(3) राज्य सरकार, अपील का निपटारा करने से पूर्व, अपीलार्थी को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर देगी ।

15. प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण द्वारा रजिस्टर का रखा जाना – (1) प्रत्येक प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण एक रजिस्टर रखेगा जिसमें –

(क) उन व्यक्तियों के नाम और पते होंगे जो प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण का प्रबंध कर रहे हैं ;

(ख) उसके नियंत्रणाधीन प्राइवेट सुरक्षा गार्डों और पर्यवेक्षकों के नाम, पते, फोटोग्राफ और वेतन होंगे ;

(ग) उन व्यक्तियों के नाम और पते होंगे जिनको उसने प्राइवेट सुरक्षा गार्ड या सेवाएं उपलब्ध कराई हैं ; और

(घ) ऐसी अन्य विशिष्टियां होंगी जो विहित की जाएं ।

(2) नियंत्रक प्राधिकारी, किसी प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण, पर्यवेक्षक या प्राइवेट सुरक्षा गार्ड से ऐसी जानकारी मांग सकेगा जिसे वह इस अधिनियम के सम्यक् अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक समझे ।

16. अनुज्ञप्ति आदि का निरीक्षण – नियंत्रक प्राधिकारी या उसके द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत कोई अन्य अधिकारी किसी युक्तियुक्त समय पर, प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण के परिसर में प्रवेश कर सकेगा और उसके कारबार के स्थान, अभिलेखों, लेखाओं और अनुज्ञप्ति से संबंधित अन्य दस्तावेजों का निरीक्षण और जांच कर सकेगा तथा किसी दस्तावेज की प्रति ले सकेगा ।

17. फोटो पहचान पत्र का जारी किया जाना – (1) प्रत्येक प्राइवेट सुरक्षा गार्ड को, उस प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण द्वारा, जिसने उस गार्ड को नियोजित या नियुक्त किया है, फोटो पहचान पत्र जारी किया जाएगा ।

(2) उपधारा (1) के अधीन फोटो पहचान पत्र ऐसे प्ररूप में, जो विहित किया जाए, जारी किया जाएगा ।

(3) प्रत्येक प्राइवेट सुरक्षा गार्ड या पर्यवेक्षक अपने साथ उपधारा (1) के अधीन जारी किया गया फोटो पहचान पत्र रखेगा और नियंत्रक प्राधिकारी या इस निमित्त उसके द्वारा प्राधिकृत किसी अन्य अधिकारी द्वारा निरीक्षण के लिए मांग किए जाने पर उसे प्रस्तुत करेगा ।

18. अप्राधिकृत व्यक्ति को जानकारी का प्रकटन – (1) कोई व्यक्ति जिसे प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण द्वारा प्राइवेट सुरक्षा गार्ड के रूप में नियोजित किया जाए या नियुक्त किया गया है या रखा गया है, नियोजक से भिन्न किसी अन्य व्यक्ति को, या ऐसी रीति में और ऐसे व्यक्ति को जिसे नियोजक निदेश दे, उस कार्य के संबंध में ऐसे नियोजन के दौरान उसके द्वारा अर्जित कोई जानकारी जो ऐसे नियोजक द्वारा समनुदेशित किया गया हो, सिवाय ऐसे प्रकटीकरण के जो इस अधिनियम के अधीन या पुलिस द्वारा किसी जांच या अन्वेषण के संबंध में या किसी प्राधिकारी द्वारा या विधि की प्रक्रिया में अपेक्षित हो, प्रकट नहीं करेगा ।

(2) प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण के समस्त प्राइवेट सुरक्षा गार्ड पुलिस को या ऐसे प्राधिकारी को उस अभिकरण के क्रियाकलापों से संबंधित किसी अन्वेषण की प्रक्रिया में आवश्यक सहायता देंगे ।

(3) यदि किसी विधि का अतिक्रमण किसी प्राइवेट सुरक्षा गार्ड की, उसके कर्तव्यों के निर्वहन के दौरान जानकारी में आता है तो वह उसे अपने वरिष्ठ अधिकारी की जानकारी में लाएगा, जो नियोजक या अभिकरण के माध्यम से या स्वयं पुलिस को जानकारी देगा ।

19. प्रत्यायोजन – राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा यह निदेश दे सकेगी कि (धारा 25 के अधीन नियम बनाने की शक्तियों को छोड़कर) ऐसी किसी शक्ति या कृत्य का, जिसका इस अधिनियम के अधीन, –

(क) उसके द्वारा प्रयोग या पालन किया जा सकेगा, या

(ख) नियंत्रक प्राधिकारी द्वारा प्रयोग या पालन किया जा सकेगा,

ऐसे विषय के संबंध में और ऐसी शर्तों, यदि कोई हों, के अधीन रहते हुए जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट की जाएं, सरकार के अधीनस्थ ऐसे अधिकारी या प्राधिकारी या नियंत्रक प्राधिकारी के अधीनस्थ अधिकारी द्वारा भी, जो ऐसी अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किया जाए, प्रयोग या पालन किया जा सकेगा ।

20. कतिपय उपबंधों के उल्लंघन के लिए दंड – (1) कोई व्यक्ति

जो धारा 4 के उपबंधों का उल्लंघन करेगा, कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, जो पच्चीस हजार रुपए तक का हो सकेगा, अथवा दोनों से दंडनीय होगा ।

(2) कोई व्यक्ति या प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण जो अधिनियम की धारा 9, धारा 10 और धारा 12 के उपबंधों का उल्लंघन करेगा, अनुज्ञप्ति के निलंबन या रद्दकरण के अतिरिक्त, जुर्माने से, जो पच्चीस हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

21. कतिपय वर्दियों के अप्राधिकृत उपयोग के लिए शास्ति – यदि कोई प्राइवेट सुरक्षा गार्ड या पर्यवेक्षक, सेना, वायुसेना, नौसेना या संघ के किसी अन्य सशस्त्र बल या पुलिस की वर्दी पहनेगा या ऐसी पोशाक पहनेगा जो उस वर्दी के समान हो या उस पर उस वर्दी के सुभिन्न चिह्न लगे हुए हों, तो वह और प्राइवेट सुरक्षा अभिकरण का स्वत्वधारी, कारावास से जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, जो पांच हजार रुपए तक का हो सकेगा, अथवा दोनों से, दंडनीय होगा ।

22. कंपनियों द्वारा अपराध – (1) जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध, किसी कंपनी द्वारा किया गया है वहां ऐसा प्रत्येक व्यक्ति, जो उस अपराध के किए जाने के समय उस कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उस कंपनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और साथ ही वह कंपनी भी ऐसे अपराध के दोषी समझे जाएंगे और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्रवाई किए जाने और दंडित किए जाने के भागी होंगे :

परंतु इस उपधारा की कोई बात किसी ऐसे व्यक्ति को दंड का भागी नहीं बनाएगी यदि वह यह साबित कर देता है कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे अपराध के किए जाने का निवारण करने के लिए सब सम्यक् तत्परता बरती थी ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां इस अधिनियम के अधीन दंडनीय कोई अपराध, किसी कंपनी द्वारा किया गया है और यह साबित हो जाता है कि वह अपराध कंपनी के किसी निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी की सहमति या मौनानुकूलता से किया गया है

या उस अपराध का किया जाना उसकी किसी उपेक्षा के कारण माना जा सकता है, वहां ऐसा निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी भी उस अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए, –

(क) "कंपनी" से कोई निगमित निकाय अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत फर्म या व्यष्टियों का अन्य संगम भी है ; और

(ख) फर्म के संबंध में, "निदेशक" से उस फर्म का भागीदार अभिप्रेत है ।

23. संरक्षण – इस अधिनियम के अधीन सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के लिए कोई भी वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही नियंत्रक प्राधिकारी या उसके द्वारा प्राधिकृत किसी अन्य अधिकारी के विरुद्ध नहीं होगी ।

24. राज्यों द्वारा अंगीकार के लिए आदर्श नियमों की विरचना – केन्द्रीय सरकार, ऐसे सभी या किसी विषय, जिसके संबंध में राज्य सरकार इस अधिनियम के अधीन नियम बना सकेगी, के संबंध में आदर्श नियम विरचित कर सकेगी और जहां ऐसे आदर्श नियम राज्य सरकार द्वारा विरचित किए जा चुके हैं वहां धारा 25 के अधीन उस विषय के संबंध में कोई नियम बनाते समय, यथासाध्य, ऐसे आदर्श नियमों के अनुरूप बनाएगी ।

25. राज्य सरकार की नियम बनाने की शक्ति – (1) राज्य सरकार इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, अधिसूचना द्वारा, बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(क) धारा 10 की उपधारा (1) के खंड (ग) के अधीन चरित्र और पूर्ववृत्त के सत्यापन की प्रक्रिया ; धारा 10 की उपधारा (1) के

खंड (घ) के अधीन प्रशिक्षण का प्रकार ; धारा 10 की उपधारा (1) के खंड (ङ) के अधीन शारीरिक मानदंड और धारा 10 की उपधारा (1) के खंड (च) के अधीन अन्य शर्तें ;

(ख) धारा 9 की उपधारा (3) के अधीन नियोजित किए जाने वाले पर्यवेक्षकों की संख्या ;

(ग) धारा 7 की उपधारा (1) के अधीन अनुज्ञप्ति के अनुदान के लिए आवेदन का प्ररूप ;

(घ) वह प्ररूप जिसमें धारा 7 की उपधारा (4) के अधीन अनुज्ञप्ति अनुदत्त की जाएगी और वे शर्तें जिनके अधीन रहते हुए धारा 11 के अधीन ऐसी अनुज्ञप्ति अनुदत्त की जाएगी ;

(ङ) धारा 8 की उपधारा (1) के अधीन अनुज्ञप्ति के नवीकरण के लिए आवेदन का प्ररूप ;

(च) अपील करने के लिए धारा 14 की उपधारा (2) के अधीन प्ररूप ;

(छ) धारा 15 की उपधारा (1) के अधीन रजिस्टर में रखी जाने वाली विशिष्टियां ;

(ज) वह प्ररूप जिसमें धारा 17 की उपधारा (2) के अधीन फोटो पहचान पत्र जारी किया जाएगा ;

(झ) कोई अन्य विषय जो विहित किया जाना अपेक्षित है या विहित किया जाए ।

(3) इस धारा के अधीन राज्य सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, जहां राज्य विधान-मंडल में दो सदन हैं वहां प्रत्येक सदन के समक्ष या जहां ऐसे विधान-मंडल का एक सदन है, वहां उस सदन के समक्ष रखा जाएगा ।

(4) संघ राज्यक्षेत्रों के संबंध में, अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए बनाया गया प्रत्येक नियम, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष और जहां विधान सभा विद्यमान है वहां उस विधान सभा के समक्ष रखा जाएगा ।

अनुसूची

[धारा 13(1)(ञ) देखिए]

(1) मजदूरी संदाय अधिनियम, 1936 (1936 का 4) ।

(2) औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14) ।

(3) न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 (1948 का 11) ।

(4) कर्मचारी भविष्य-निधि और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1952 (1952 का 19) ।

(5) बोनस संदाय अधिनियम, 1965 (1965 का 21) ।

(6) ठेका श्रम (विनियमन और उत्सादन) अधिनियम, 1970 (1970 का 37) ।

(7) उपदान संदाय अधिनियम, 1972 (1972 का 39) ।

(8) समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 (1976 का 25) ।

(9) अंतरराज्यिक प्रवासी कर्मकार (नियोजन का विनियमन और सेवा शर्त) अधिनियम, 1979 (1979 का 30) ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145
2.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
3.	भारत का सांविधानिक इतिहास – (103वां संविधान संशोधन तक) – श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
4.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व – डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2024	कीमत रु. 2,500
2. भारत का संविधान (पाकेट एडीशन)	2024	कीमत रु. 325

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ` 2,100/-, ` 1,300/- और ` 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को ऑन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष **:** 011-23385259, 23387589, फैक्स **:** 011-23387589, ई-मेल **:** am.vsp-molj@gov.in